श्री जगन्नाथ रथ यात्रा कथा एवं श्री जगन्नाथ महात्म्य हिंदी काव्य

(भावार्थ सहित)

श्री कृष्णावतार चैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रदर्शित रहस्यपूर्ण ज्ञान

कवि

डॉ यतेंद्र शर्मा

श्री जगन्नाथ रथ यात्रा कथा एवं श्री जगन्नाथ महात्म्य हिंदी काव्य

(भावार्थ सहित)

श्री कृष्णावतार चैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रदर्शित रहस्यपूर्ण ज्ञान

कवि

डॉ यतेंद्र शर्मा

प्रकाशक

श्री राम कथा संस्थान पर्थ

३५मायना स्ट्रीट, हिलरीज़, वेस्टर्न ऑस्ट्रेलिया – ६०२५

वेबसाइट: https://shriramkatha.org

ईमेल: srkperth@outlook.com

SHRI JAGANNATH RATH YATRA KATHA EVAM SHRI JAGANNATH MAHATMAYA KATHA KAVYA
(HINDI)

ISBN: 978-1-7648041-1-0

Author / All rights Reserved

© Author: Dr. Yatendra Sharma

1st Edition: June 2026

E-Book

Published by: Shri Ram Katha Sansthan

35 Mayena Retreat, Hillarys
W.A. 6025, AUSTRALIA
Telephone: +61 8 94011543
Email: srkperth@outlook.com

अस्वीकरण

इस काव्य पुस्तक की सामग्री जनहित एवं सामान्य ज्ञान के लिए प्रदान की गई है। हमारा तद्भाव पाठक को कोई परामर्श देने का नहीं है| इस काव्य पुस्तक की सामग्री किसी भी तरह से विशिष्ट परामर्श का विकल्प नहीं है| आपको इस ज्ञान के आधार पर कोई भी निर्णय लेने से पहले प्रासंगिक निपुण या विशेषज्ञ का परामर्श प्राप्त कर लेना चाहिए|

इस काव्य पुस्तक के रचयिता, प्रकाशक और उनका कोई प्रतिनिधि किसी भी विषय में इस काव्य पुस्तक से सम्बंधित कोई प्रत्याभूति नहीं लेते| इस काव्य पुस्तक का पठन-पाठन-गायन-श्रवण पाठक स्वयं के संज्ञान से दायित्व ले कर ही करें|

यद्यपि हमने इस काव्य पुस्तक में सटीक ज्ञान देने का पूर्ण प्रयास किया है लेकिन किसी भी प्रकार कोई त्रुटि अथवा अकृता रह गई हो तो उसके लिए रचयिता एवं प्रकाशक क्षमा प्रार्थी हैं और इसके परिणाम स्वरूप किसी विधि, सामाजिक, धार्मिक, इत्यादि का दायित्व नहीं लेते|

स्वस्त्ययन याचन

जय श्री कृष्ण चैतन्य, प्रभु नित्यानंद, जय श्री अद्वैत गदाधर,
श्रीवासादि गौर भक्त वृन्द
सदैव हम पर कृपा दृष्टि रखें।

क्रमिका

अस्वीकरण 5
स्वस्त्ययन याचन 6
मंगल कामना...9
प्रार्थना..11
वन्दना 13
श्री जगन्नाथ रथ यात्रा कथा 16
श्री कृष्ण का साकेत गमन 17
प्रभु का सम्राट इन्द्रद्युम्न से मिलन..21
विग्रह तक्षण कथा...36
श्री विग्रह प्रकाश...42
अपूर्ण विग्रह रहस्य 50
श्री जगन्नाथ महात्म्य..53
प्रभु श्री कृष्ण जन्म 54
ब्रह्मऋषि नारद की इच्छा 62
माँ रोहिणी का बृज लीला वर्णन 73
गोपियों के प्रेम की महिमा 81
राधा जी की सर्वोत्कर्षता..90
नारद जी को भगवान् कृष्ण का वरदान 95
श्री कृष्ण के पश्चात बृजवासियों की दशा 98
श्री कृष्ण का बलराम और उद्धव के साथ बृज आगमन.........................105
श्री जगन्नाथ का सम्राट पुरुषोत्तम जाना पर प्रेम 108
सम्राट प्रतापरुद्र को चैतन्य महाप्रभु के दर्शन 118
गुंडिचा मंदिर को शुद्ध करना 123
मायाबद्ध जीवों के कष्ट 129
वैष्णव भक्तों के गुण..134
सद्गुरु के लक्षण...139
चैतन्य महाप्रभु काल में रथ यात्रा वर्णन 144
गूढ़ भाव गोपी गीत 152
रथ यात्रा में चैतन्य भाव 159
उद्धव का ब्रज आना 164

कुरुक्षेत्र में कृष्ण और ब्रजवासी मिलन 189
कुरुक्षेत्र में गोपी-कृष्ण संवाद..196
हेरा पञ्चमी उत्सव...204
गोपियाँ का मान..210
महाप्रभु की शिक्षाएं 213
महाप्रभु का कृष्ण प्रेम में विलाप..218
श्री राम कथा संस्थान उद्देश्य 221
कवि: डॉ यतेंद्र शर्मा..222

मंगल कामना

हरे कृष्ण!

ॐ अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन शलाकया |
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ||

अपने जनक एवं शिक्षा गुरु स्वर्गीय पंडित नन्द किशोर शुक्ल के चरण कमलों को हृदय में रखते हुए मैं दीक्षा गुरु गोलोकवासी गोपाल भट्ट गोस्वामी के वंशज आचार्य श्री भूति कृष्ण गोस्वामी के चरण कमलों में श्रद्धा पुष्प अर्पित करता हूँ| चैतन्य महाप्रभु की महानता सर्व प्रथम मैंने बाल्यकाल में पुस्तक 'हमारे पूर्वज' के पढ़ने से प्राप्त की| इस पुस्तक में महाप्रभु के चित्र को देखकर, जिसमें उनकी आजानु लंबित आकाश की ओर उठी हुई भुजायें और नख चंद्र से निकलती हुई चन्द्रिका प्रदर्शित थीं, हृदय को शीतलता प्राप्त हुई| निरंतर गोपाल महा मंत्र के जप के साथ 'गुरु वन्दना-संसार दावानल लीढ़ लोक त्राणाय कारुण्य घना घनत्वम' एवं चैतन्य महाप्रभु द्वारा रचित 'शिक्षाष्टकम' के पाठ ने महाप्रभु के महत्व को और अधिक दर्शाया|

महाप्रभु की सांसारिक लीला, नित्यानंद प्रभु, अद्वैत आचार्य, पंडित गदाधर एवं श्रीवास पंडित का संसर्ग, षड गोस्वामियों का चयन और उनका उद्देश्य निर्धारण, गुरुदेव के मुखारविंद से सुन हृदय रोमांचित हो जाता था| महाप्रभु का गम्भीरा में मूर्छित अवस्था में पड़े रहना, जगन्नाथ मंदिर में जगन्नाथ जी को छुप कर देखते हुए भावातिरेक होना, यह कथाएं मन से विषय रुपी विष को धो डालतीं हैं|

गुरुदेव और गुरु मां की प्रेरणा से महाप्रभु की जन्म स्थली, लीला स्थली, नवद्वीप धाम मायापुर दर्शन एवं आवास का तीर्थ करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। "श्रीगौड़ीय–गीतिगुच्छ", अनुपम भक्ति संग्रह ने मुझे श्रीगौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय के महाजनों द्वारा रचित हृदय-स्पर्शी भजन, अष्टकम एवं पद्य संकलित को कंठस्थ कर उनका नित्य गायन से महाप्रभु की विशेष कृपा प्राप्त हुई| और अब डॉ यतेंद्र शर्मा द्वारा श्री कृष्णावतार चैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रदर्शित रहस्यपूर्ण ज्ञान 'श्री जगन्नाथ रथ यात्रा कथा एवं श्री जगन्नाथ महात्म्य हिंदी काव्य' को पढ़ने का सुअवसर मिला|

मैं डॉ यतेंद्र शर्मा के प्रयास की प्रशंसा करता हूँ| वह केवल हिंदी, अंग्रेजी एवं संस्कृत के ज्ञाता ही नहीं वरन एक शक्त भक्ति कवि एवं साहित्यकार हैं| शर्मा जी स्वयं एक वैष्णव संस्था, 'श्री रामानंदी सम्प्रदाय' से दीक्षित होने के कारण वैष्णव गुणों से ओतप्रोत हैं| वह हम सब के हितैषी हैं और मैं उनका प्रशंसक| मुझे पूर्ण विश्वास है कि उनका श्री कृष्णावतार चैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रदर्शित रहस्यपूर्ण ज्ञान जो मुख्यतः श्री गौड़ीय मठ के परम पूजनीय त्रिदण्डिस्वामी श्री भक्तिवेदांत नारायण स्वामी जी महाराज के प्रवचनों पर आधारित है, वैष्णवों को अत्यंत प्रिय लगेगा| श्रवण और कीर्तन नवधा भक्ति के प्रकारों में प्रथम और द्वितीय श्रेणी में आते हैं| उनकी इस रचना के पठन-पाठन-श्रवण एवं काव्य रूप के कीर्तन से वैष्णवों की भक्ति सुदृढ़ होगी, ऐसा मेरा मानना है और मेरी हार्दिक कामना है|

ईश्वर शर्मा जी को उत्तम स्वास्थ्य एवं दीर्घायु प्रदान करें ताकि वह मानव समाज, विशेषतयः वैष्णवों का ज्ञान वर्धन करते रहें|

जय गौर जय निताई! महाप्रभु चैतन्य एवं भगवान् जगन्नाथ चरणों को समर्पित,

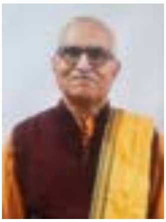

दास - विमलेश शुक्ल

श्रीगौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय भक्त अनुयायी
पर्थ, पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया
२ अक्टूबर २०२५ विजयादशमी

प्रार्थना

यह सर्व विदित है कि श्री जगन्नाथ पुरी में श्री प्रभु जगन्नाथ अपने भ्राता बलराम एवं बहन सुभद्रा के साथ आषाढ़ मास की शुक्ल पक्ष द्वितीया को रथ द्वारा गुंडिचा मंदिर (नित्य मंदिर से लगभग एक कोस की दूरी पर) को विश्राम हेतु प्रस्थान करते हैं| नवमें दिन दशमी को वह तीनों (प्रभु जगन्नाथ, भ्राता बलराम जी एवं बहन सुभद्रा) वापस नित्य मंदिर में लौट आते हैं| यह प्रभु जगन्नाथ-रथ-यात्रा हिन्दुओं के महत्वपूर्ण धार्मिक उत्सवों में से एक है और बड़ी धूमधाम से पुरी में मनाई जाती है| लाखों की संख्या में भक्तगण एकत्रित हो भगवान् जगन्नाथ, उनके भ्राता श्री बलराम एवं बहन सुभद्रा का रथ खींचने में मदद करते हैं| ऐसी मान्यता है कि जिस भाग्यशाली को रथ का स्पर्श करने का भी अवसर मिल जाता है उसे इहलोक में सुख, शान्ति, ऐश्वर्य, धन-धान्य एवं मरण पश्चात मोक्ष की प्राप्ति होती है|

वैसे तो श्री जगन्नाथ-रथ-यात्रा उत्सव मनाने के कारणों का विभिन्न ग्रंथों में विभिन्न विवरण दिया गया है लेकिन ऐसी मान्यता है कि महाप्रभु श्री कृष्णावतार चैतन्य महाप्रभु के श्रीमुख से निकले शब्द ही सप्रमाण हैं| श्री कृष्णावतार चैतन्य महाप्रभु एवं उनके परिकरों द्वारा उत्सव का कारण एवं पालन करने की बताई हुई विस्तृत रीति ही सत्य है| श्री सनातन गौड़ीय मठ के परम पूजनीय त्रिदण्डिस्वामी श्री भक्तिवेदांत नारायण स्वामी जी महाराज के प्रवचनों पर आधारित कवि (डॉ यतेंद्र शर्मा) ने इस कथा काव्य की रचना की है|

हिन्दू धर्म के प्रत्येक तीर्थ एवं उत्सव की पृष्ठभूमि में कोई न कोई प्रभु का विशेष उद्देश्य रहा है| श्री जगन्नाथ मंदिर में परम पिता प्रभु श्री जगन्नाथ, शेषावतार भगवान् श्री बलराम जी एवं माता सुभद्रा के अपूर्ण विग्रह स्थापित एवं प्रतिष्ठापित होने का भी गूढ़ रहस्य है जो आपको इस कथा काव्य के माध्यम से संज्ञान में आएगा| प्रभु की माया और उनके सन्देश देने की विधि अद्भुत है।

मैं अत्यधिक भाग्यशाली रहा हूँ कि मुझे परम पावन संतो के चरणों में बैठकर अथवा उनकी उत्कृष्ट कृतियों के पढ़ने से प्रभु के अनेकानेक अंतरंग गूढ़ रहस्य जानने और समझने का अवसर मिला है| यद्यपि प्रभु की माया प्रभु के अनंत भक्तों के अतिरिक्त कोई और नहीं समझ सकता, मैं तो एक साधारण प्राणी हूँ, फिर भी परमाराध्य

गुरुपादपद्म नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्री भक्ति प्रज्ञान केशव गोस्वामी जी महाराज, पूजनीय त्रिदण्डिस्वामी श्री भक्तिवेदांत नारायण स्वामी जी एवं अन्य श्री सनातन गौड़िया मठ के संतों के प्रवचनों से ज्ञान प्राप्त कर जो मैंने श्री जगन्नाथ रथ यात्रा का महात्म्य समझा, उसे काव्य स्वरुप में प्रस्तुत करने का साहस कर रहा हूँ| अवश्य ही अनेक त्रुटियाँ हुईं होंगी| 'क्षमा बड़न को चाहिए, छोटों को उत्पात', उस उत्पात को मुझे बालक समझ आप सभी क्षमा करेंगे, ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है।

ध्यान में गुरुदेव महाराज के आदेशानुसार मैंने श्री कृष्णावतार महाप्रभु चैतन्य जी के श्रीमुख से कही एवं उपरोक्त श्री गौड़ीय सम्प्रदाय के संतों के प्रवचनों से प्रभावित होकर श्री जगन्नाथ रथ यात्रा कथा एवं श्री जगन्नाथ महात्म्य को काव्य रूप में प्रस्तुत किया है| श्रुति कहती है कि काव्य के माध्यम से प्रभु का महामण्डन करने से जो तरंगे वातावरण में उत्पन्न होती हैं, वह भक्त के हृदय को प्रभु के हृदय से जोड़ देतीं हैं| आप भी इस कथा काव्य का पठन-श्रवण करें एवं प्रभु श्री जगन्नाथ, शेषावतार श्री बलराम एवं माता सुभद्रा का आशीर्वाद ग्रहण करें| स्वयं प्रभु ने कहा है कि जो भी मेरी श्री जगन्नाथ यात्रा का पठन-श्रवण-मनन करेगा, मैं उस पर विशेष कृपा करूंगा| उसे इहलोक में सुख, शांति, ऐश्वर्य, धन-धान्य एवं मरण उपरान्त साकेत धाम में निवास मिलेगा|

आपका अपना, प्रभु के चरणों में,

यतेंद्र शर्मा

श्री राम कथा संस्थान, ऑस्ट्रेलिया, ६०२५

वन्दना

करें नमन हम पद गुरवर का | मिला लक्ष्य जिनसे जीवन का |
बिन गुरु हो न ज्ञान भक्ति का | हो न बोध सत धर्म मार्ग का || (१)

भावार्थ: *हम गुरुदेव के चरणों की वन्दना करते हैं जिनके कारण हमें जीवन का लक्ष्य प्राप्त हुआ| बिना गुरुदेव (के आशीर्वाद) के भक्ति का ज्ञान नहीं होता और न ही सत्य धर्म मार्ग पर चलने का बोध होता है।*

करें वंदन हम प्रथम देव का | हारक विघ्न श्री गणपति का ||
मोदक प्रिय पार्वती सुत का | रिद्धि सिद्धि के श्री स्वामी का || (२)

भावार्थ: *अब हम प्रथम देव विघ्न विनाशक श्री गणपति जी का वंदन करते हैं जो मोदक प्रिय, माँ पार्वती जी के पुत्र एवं रिद्धि, सिद्धि (देवीयों) के स्वामी हैं|*

हिय बसे स्वरुप श्री राम का | जगद जननी अम्मा सीता का ||
रूद्र अंश सुवन पवन का | संकट मोचन हनुमंत लला का || (३)

भावार्थ: *भगवान् श्री राम, जगदम्बा माँ सीता, रूद्र अवतार संकट मोचन पवन-सुत श्री हनुमान जी का स्वरुप हमारे हृदय में सदैव वास करे|*

बृजवासी हरि नंदलला का | प्रिय माँ जसुमति खंड हिय का ||
वृंदावन वासी मैया का | सुता वृषभानु दिव्य राधा का || (४)

भावार्थ: *बृजवासी नन्द के पुत्र भगवान् (श्री कृष्ण) जो मैया यशोदा के हृदय के टुकड़े हैं, वृषभानु पुत्री माँ दिव्य राधा जो वृंदावन में वास करती हैं (उनका स्वरुप हमारे हृदय में बसे)|*

हलधर अवतार शेष नाग का | देवी सतरूप सुभद्रा का ||
त्रिदेव ब्रह्मा विष्णु शंकर का | कोटि तैतीस देव देवी का || (५)

भावार्थ: *शेषनाग के अवतार बलराम जी, सतरूप (अवतार) देवी सुभद्रा, त्रिदेव ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश, तथा ३३ प्रकार के सभी देवी देवताओं का (स्वरुप हृदय में बसे)|*

करें नमन हम रथ यात्रा का | पावन हिय मोहिनी कथा का ||
मास आषाढ़ शुक्ल पक्ष का | अति पावन द्वितीय तिथि का || (६)

भावार्थ: *हम अत्यंत पवित्र हृदय को मोहने वाली रथ यात्रा एवं आषाढ़ (मास) की शुक्ल पक्ष की द्वितीया (जिस दिन यह रथ यात्रा प्रारम्भ होती है) का नमन करते हैं|*

उत्सव महान रथ यात्रा का | जगन्नाथ बलराम सुभद्र का ||
नव-दिवसीय पावन उत्सव का | नीलांचल गुण्डिचा मंदिर का || (७)

भावार्थ: *(भगवान्) जगन्नाथ, (श्री) बलराम , (माता) सुभद्रा की रथ यात्रा (इस यात्रा के) नव दिवसीय उत्सव एवं नीलांचल गुंडिचा मंदिर (का नमन करते हैं)|*

निवास प्रभु गुण्डिचा का | संग बलराम बहन सुभद्र का ||
प्रस्थान शुक्ल दशांश का | आगमन गंडमंडल प्रभु का || (८)

भावार्थ: *प्रभु (जगन्नाथ) का अपने (भाई) बलराम (जी) एवं बहन सुभद्रा के साथ गुंडिचा में निवास एवं (आषाढ़ मास के) शुक्ल (पक्ष) दशमी को अपने (नित्य) मंदिर में लौटने का (हम नमन करते हैं)|*

तम विनाशिनी श्री कथा का | पतित पावन वृक्ष कल्प का ||
देती दर्शन करुण प्रभु का | श्री जगन्नाथ रथ यात्रा का || (९)

भावार्थ: *अंधकार (अज्ञान) विनाशिनी कल्प वृक्ष के समान पतितों को पवित्र करने वाली श्री जगन्नाथ रथ यात्रा जो हमें प्रभु के दर्शन कराती है (ऐसी कथा को हम नमन करते हैं)|*

दे कथा अति सुख इहलोका | मरण धाम साकेत प्रभु का ||
गाएं गुण रथ यात्रा कथा का | करें स्मरण हम हरि लीला का || (१०)

भावार्थः *इहलोक में सुख देने वाली तथा मरण के पश्चात साकेत धाम में निवास देने वाली (मोक्ष देने वाली) इस रथ यात्रा कथा का गुण गाएं| हम इस प्रभु की लीला को स्मरण करें|*

श्री जगन्नाथ रथ यात्रा कथा

श्री कृष्ण का साकेत गमन

वर्ष सहस्त्र पञ्च पूर्व में | हुआ एक महायुद्ध भारत में ||
निर्णायक यह सत्य असत्य में | कुरुवंश द्वि समूह भाई में ||
मध्य अधर्मी सौ कौरव में | कृष्ण रक्षित पाण्डु पुत्रों में || (११)

भावार्थ: *पांच सहस्त्र वर्ष पूर्व भारत में एक महायुद्ध हुआ| कुरुवंश के दो भाइयों में सत्य, असत्य निर्णायक था| अधर्मी सौ कौरवों एवं भगवान् कृष्ण से रक्षित पाण्डु पुत्रों में सत्य एवं असत्य के मध्य महाभारत युद्ध हुआ|*

थी सेना एकादस अक्षोहिणी | लड़ रही संग असत्य अधर्मणी ||
अन्य ओर थी सप्त अक्षोहिणी | सेना पांडव धर्म परायणी || (१२)

भावार्थ: *एक ओर ११ अक्षोहिणी सेना अधर्मियों (कौरवों) का साथ दे रही थी और दूसरी ओर (केवल) ७ अक्षोहिणी सेना धर्म रूपी पांडवों के साथ थी|*

थे कृष्ण संरक्षक पांडवों के | निःशस्त्र सारथी अर्जुन के ||
थे प्रतीक विजय विभूति के | पुत्र पाण्डु सत युद्धिवन के || (१३)

भावार्थ: *(भगवान्) कृष्ण निःशस्त्र अर्जुन के सारथी बन पांडवों के संरक्षक थे| धार्मिक योद्धा पाण्डु पुत्रों की विजय विभूति के वह (भगवान् कृष्ण) प्रतीक थे|*

था यह धर्म रण अति भयंकर | दिन अष्टांश मध्य सैन्यवर ||
पाए वीरगति सब असत कौरव | हेतु गांधारी था दृश्य रौरव ||
हुईं क्रुद्ध वह कृष्ण सौरव | हो तुम हेतु अंत मेरे गौरव || (१४)

भावार्थ: *यह अति भयानक युद्ध सेनाओं के मध्य १८ दिन चला| (इस महाभारत युद्ध में) सभी कौरव वीरगति को प्राप्त हुए| यह दृश्य (उनकी) माता गांधारी के लिए असहनीय था| वह श्रेष्ठ कृष्ण पर अति क्रोधित होकर बोलीं कि तुम्हारे कारण ही मेरे वंश का गौरव नष्ट हुआ है (मेरे सभी पुत्र मारे गए)|*

जैसे हुआ अंत मेरे वंश का | होगा सलक्षण अंत यदुवंश का ||
श्राप है यह शिव भक्तिन का | न हो व्यर्थ सुन ईश द्वारका || (१५)

भावार्थ: *(गांधारी बोलीं) (हे कृष्ण) जैसे मेरे वंश का अंत हुआ, उसी प्रकार यदुवंश (भगवान् कृष्ण के वंश) का अंत भी होगा| यह शिव भक्तिन का श्राप, हे कृष्ण सुन, निरर्थक नहीं जा सकता|*

हो गांधारी माँ पूज्य मेरी | धरूँ शीश आज्ञा मैं तेरी ||
बोले कृष्ण सुन शिव प्रेरी | नहीं त्रुटि माता कुछ मेरी || (१६)

भावार्थ: *भगवान् कृष्ण बोले, 'हे माँ गांधारी आप मेरे लिए पूज्य हैं| आपकी आज्ञा मैं स्वीकार करता हूँ| हे शिव भक्तिनी माता, इसमें मेरी कोई त्रुटि नहीं थी|*

भोगें सब फल स्वयं कर्म का | जानो तुम यह तत्व विधि का ||
है निश्चित यही अंत असत का | जानो यही विधान ईश्वर का || (१७)

भावार्थ: *(हे माँ) तुम तो प्रकृति का नियम जानती ही हो| अपने स्वयं के कर्मों का फल सब को भोगना पड़ता है| अधर्म का अंत इसी प्रकार होता है, ऐसा ईश्वर का विधान है|*

कर स्वीकार श्राप तब अक्षर | लौटे हरि हस्तिनापुर नगर ||
कर राज्याभिषेक युधिष्ठिर | लौटे द्वारका हरि श्रेष्ठकर ||
बीते छत्तीस वर्ष सुखकर | हुआ फलित श्राप सुता गांधर || (१८)

भावार्थ: *(गांधारी का) श्राप स्वीकार कर तब प्रभु हस्तिनापुर राजधानी लौटे| (इसके पश्चात) युधिष्ठिर का राज्याभिषेक कर श्रेष्ठ प्रभु द्वारका लौट आए| ३६ वर्ष सुख पूर्वक बीत गए| तब गांधार पुत्री (गांधारी) के श्राप का असर हुआ|*

लेटे प्रभु दिन एक वृक्ष तल | करें लयन समीप समुद्र जल ||
चमक रही मणि उनके पद तल | जरा व्याध समझा मरुकल || (१९)

भावार्थ: *प्रभु (श्री कृष्ण) एक दिन समुद्र तट के समीप वृक्ष तले लेटे हुए थे| उनके पग तल में एक मणि चमक रही थी जिसको जरा (नाम के) बहेलिए ने मृग (की आंख) समझा|*

किया प्रहार व्याध तीर से | धारा रक्त बही प्रभु पद से ||
त्यागे प्रभु शरीर सहज से | हुआ विषादित जरा कृत्य से || (२०)

भावार्थ: *बहलिए ने (प्रभु के पग में) तीर मारा| प्रभु के पग से रुधिर की धारा निकल पड़ी| प्रभु ने तब सहजता से अपने शरीर का त्याग कर दिया| (इस अनजाने) कृत्य से जरा (बहेलिया) को बहुत दुःख हुआ|*

मिला सन्देश तुरंत बलराम | गए धाम साकेत अभिराम ||
दौड़े तट सागर ले हरि नाम | बंधु विसारे क्यों तुम ग्राम || (२१)

भावार्थ: *तुरंत (श्री) बलराम (जी) को यह सन्देश मिला कि प्रभु साकेत धाम पधार चुके हैं तो वह उनका नाम लेते हुए समुद्र तट की ओर दौड़े (और बोले), 'हे भ्राता तुमने अपना (पृथ्वी) निवास क्यों छोड़ दिया|'*

हुई सुभद्रा शोकाकुल | भागीं मिलने हो वह आकुल ||
समाचार पाए सब यदुकुल | बहें नयन नीर द्वारका कुल || (२२)

भावार्थ: *सुभद्रा शोकाकुल हो मिलने आकुलता से भागीं| जब अन्य यदुवंशियों को यह समाचार मिला तो सबके नेत्रों से अश्रु धारा बह निकली|*

नहीं सुध भाई बलराम को | खो प्रिय लघु भ्राता को ||
चन्दन काष्ठ धरे दिव्य तन को | दिए दाह प्रभु शरीर को ||
किए अर्पित हरि तन अग्नि को | न जला सकी वह तन दिव्य को || (२३)

भावार्थ: *अपने प्रिय लघु भ्राता को खोकर बलराम को सुध नहीं थी (अर्थात किंकर्तव्यविमूढ़ थे)| (तब) चन्दन लकड़ी (की शैया) पर दिव्य तन को रखा और*

उनके शरीर का दाह संस्कार किया गया| इस प्रकार प्रभु के शव को अग्नि को अर्पित किया गया, परन्तु (अग्नि) उनके दिव्य शरीर को नहीं जला सकी|

अर्ध जलित भ्रात शरीरा | भरे बाहु बलराम बलवीरा ||
ली समाधि जल महावीरा | करें अनुसरण बहन सुभद्रा || (२४)

भावार्थ: *प्रभु के अर्ध जले हुए तन को तब (श्री) बलराम ने बाँहों में भर लिया और उन्हें लेते हुए महावीर ने जल समाधि ले ली| बहन सुभद्रा ने भी इस का अनुसरण किया (उन्होंने भी साथ में जल समाधि ले ली)|*

तैरें तीन शरीर सागर में | नहीं गले वह शतिक वर्ष में ||
पहुंचे तट भरु पूर्व देश में | आर्यावर्त कलिंग भूखंड में || (२५)

भावार्थ: *(इस प्रकार) तीन (मृतक) शरीर सागर में तैरने लगे| (प्रभु कृपा से) वह सौ वर्ष में भी नहीं गले| (बहते हुए) वह आर्यावर्त के कलिंग साम्राज्य जो समुद्र के पूर्वी तट पर स्थित था, पहुँच गए|*

अब सुनो प्रभु लीला को | कैसे मिले वह इन्द्रद्युम्न को ||
पतित पावन श्री कथा को | भवतारिन प्रभु लीला को || (२६)

भावार्थ: *अब उस प्रभु की लीला को सुनो कि कैसे वह (सम्राट) इन्द्रद्युम्न को मिले| यह पतितों को तारने वाली भवतारिणी प्रभु लीला की अत्यंत पवित्र कथा है|*

प्रभु का सम्राट इन्द्रद्युम्न से मिलन

थे इन्द्रद्युम्न नृप उज्जैनी | धार्मिक निडर संत सम ज्ञानी ||
थीं गुंडिचा उनकी रानी | थे वह हरि भक्त पर असंतानी || (२७)

भावार्थ: *सम्राट इन्द्रद्युम्न उज्जैन राज्य के अत्यंत धार्मिक, निडर संत समान ज्ञानी राजा थे| उनकी रानी का नाम (साम्राज्ञी) गुंडिचा था| (यह दोनों) भगवान् के भक्त थे परन्तु संतानहीन थे|*

थे सम्राट पूर्ण आर्यावर्त | मालवा कलिंग तक समाहित ||
नहीं मद राज पाट भव्यता | रहें सदैव मग्न जप भगवंता || (२८)

भावार्थ: *वह पूर्ण आर्यवर्त के सम्राट थे| उनका साम्राज्य मालवा से कलिंग (प्रदेश) तक फैला हुआ था| उन्हें राज्य, वैभवता (आदि) का कोई अभिमान नहीं था| सदैव ईश्वर के जप में मग्न रहते थे|*

थी इच्छा हों प्रभु के दर्शन | सोचें यही रात दिन राजन ||
करते मान आए अतिथिगन | पूछें देश विदेश के विद्मन || (२९)

भावार्थ: *उनकी इच्छा प्रभु दर्शन की थी| (प्रभु दर्शन कैसे हों) इसी पर वह दिन रात विचार करते रहते थे| देश विदेश से आए विद्वानों का अत्यंत आदर करते हुए उनसे यही प्रश्न पूछते थे|*

आए एकदा संत नृप पट्टन | थे किए वह नीलमाधव दर्शन ||
करें गुणगान महिमा पावन | चतुर्भुज दिव्य रूप भगवन || (३०)

भावार्थ: *एक बार (एक) संत नृप के नगर आए जिन्होंने (भगवान्) नील माधव के दर्शन किए हुए थे| उनके चतुर्भुज पवित्र दिव्य मूर्ति रूप की महिमा का वह गुणगान कर रहे थे|*

पूछे राजन मिलें कहाँ भगवन | बोले संत न जानूं अध्यासन ||
थी इच्छा गहन नृप हरि मिलन | किए संकल्प खोजूं हरि सदन || (३१)

भावार्थ: *राजा ने (संत से) पूछा कि प्रभु कहाँ मिलेंगे? संत बोले कि मैं उनका निवास नहीं जानता| राजा की हरि से मिलने की तीव्र इच्छा हुई| (उन्होंने) उनका निवास स्थान ढूंढने का संकल्प लिया|*

दिए आदेश सब पुरोहितजन | चहुं ओर ढूंढो प्रभु सदन ||
रखें त्रिमास अवधि हिय स्मरन | करें अति परिश्रम से प्रयत्न || (३२)

भावार्थ: *उन्होंने सभी पुरोहितगणों को आदेश दिया कि चहुँ ओर जाकर प्रभु को ढूंढो| तीन मास की अवधि का स्मरण रखें (अतः तीन महीनों में उनका पता लगाएं)| कठोर परिश्रम से प्रयत्न करें |*

बुलाए नृप सुत पुरोहित | था न्यास उनके शौर्यवत ||
सुनो प्रमुख पुरोहित तनय | हे विद्याधर तुम समर्थ अनन्य ||
है पूर्ण निष्ठा मेरे हृदय | हो सफल पा सको हरि आलय || (३३)

भावार्थ: *(सम्राट ने) आचार्य के सुपुत्र को समीप बुलाया| उनके शौर्य पर उन्हें पूरा विश्वास था| उनसे कहा, 'हे मुख्य आचार्य के पुत्र विद्याधर सुनो, तुम अत्यंत निपुण हो| मेरे हृदय में पूर्ण विश्वास है कि तुम प्रभु का स्थान ढूंढने में सफल होगे|*

किए प्रस्थान पुरोहितगन | ढूंढें हर ओर प्रभु सदन ||
मिला न कहीं प्रभु का सदन | लौटे निराश सभी मान्यगन || (३४)

भावार्थ: *(तब) पुरोहितगणों ने प्रस्थान किया| वह प्रभु का स्थान हर ओर ढूँढ़ने लगे| उन्हें कहीं भी प्रभु निवास नहीं मिला| निराश होकर सभी मान्यगण लौट आए|*

केवल विद्याधर नहीं आए | न जाएं उज्जैन बिन हरि पाए ||
वह तट पूर्व सिंधु पर आए | देख सुन्दर एक गाँव हुलसाए || (३५)

भावार्थ: *केवल विद्याधर (वापस) नहीं आए| (उन्होंने ऐसा संकल्प किया) वह प्रभु को खोजे बिना उज्जैन नहीं जाएंगे| (ढूंढते ढूंढते) वह समुद्र के पूर्वी तट पर (कलिंग प्रदेश) आए| वहां सुन्दर एक ग्राम देख उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई|*

करें विचार विश्राम रात का | पूछें वासी उचित स्थान का ||
कहे वासी गृह मुखिया का | है भवन उपयुक्त विश्राम का || (३६)

भावार्थ: *रात्रि विश्राम करने के विचार से उन्होंने निवासी से स्थान पूछा (जहां वह रात्रि विश्राम कर सकें)| निवासी ने कहा, ' ग्राम प्रमुख का घर आपके विश्राम के लिए उपयुक्त स्थान होगा|'*

नायक वर्ण सबर विश्वावसु | धार्मिक विनम्र उदार प्रियसु ||
गए तब विद्याधर घर वसु | मिलीं द्वार तनया विश्वावसु || (३७)

भावार्थ: *सबर जाति (एक वन जाति) के प्रमुख विश्वावसु अत्यंत धार्मिक, उदार, विनम्र एवं प्रसन्नचित्त व्यक्ति थे| तब विद्याधर उन महानुभाव के घर पहुंचे| गृह द्वार पर उन्हें विश्वावसु की पुत्री मिलीं|*

ललिता नाम सुघड़ अति कन्या | बोली विद्याधर वह सौम्या ||
पिता गए कहीं स्थान अन्य | करो प्रतीक्षा बाह्य मान्य || (३८)

भावार्थ: *(विश्वावसु की पुत्री) ललिता नाम की संस्कारी कन्या थीं| वह विनम्र भाव से विद्याधर से बोलीं कि पिताजी किसी| अन्य स्थान पर गए हुए हैं| हे मान्यवर, आप (घर के) बाहर बैठकर उनकी प्रतीक्षा कीजिए|*

बीते कुछ पल इस प्रकार | आए तब गृह पिता उदार ||
मांगे आगत क्षमा कई बार | किए वह विद्याधर सत्कार || (३९)

भावार्थ: *कुछ पल बीतने के पश्चात् उदार पिता (विश्वावसु) गृह आए| (अतिथि को घर के बाहर बैठे हुए देख) उन्होंने बार बार (विद्याधर से) क्षमा माँगी| तब विद्याधर का उन्होंने अति सत्कार किया|*

थी विश्वावसु देह सुगन्धित | था तिलक ललाट पर शोभित ||
देख हुए विद्याधर अति विस्मित | चाहा छू लूँ चरण इन दिव्यत || (४०)

भावार्थ: *विश्वावसु की देह अति सुगन्धित थी| उनके मस्तिष्क पर तिलक शोभायमान हो रहा था| यह देखकर विद्याधर अति आश्चर्य चकित हो गए| उनके हृदय ने चाहा कि इस दिव्य पुरुष के वह चरण स्पर्श कर लें|*

किया विचार हैं यह सबर | हेतु पुरोहित नहीं उचितकर ||
बोले तब आतिथेय भद्रव | है स्वागत अतिथि मेरे घर || (४१)

भावार्थ: *(फिर) विचार किया कि यह सबर (जन जाति) हैं और मैं एक पुरोहित| ऐसा करना (चरण छूना), उचित नहीं होगा| (इतने में) विनम्र आतिथेय (विश्वावसु) बोले, 'हे अतिथि, आपका स्वागत है|'*

किए नमन तब श्री विद्याधर | हूँ ब्राह्मण उज्जैन वासकर ||
दें आज्ञा यदि मान भद्रवर | करूँ विश्राम यहां रात्रि भर || (४२)

भावार्थ: *विद्याधर ने उन्हें नमन किया (और अपना परिचय दिया)| मैं उज्जैन निवासी एक ब्राह्मण हूँ| मान्यवर, अगर आपकी आज्ञा हो तो मैं यहां रात्रि विश्राम करूँ|*

विश्वावसु हुए प्रभावित | समझो गृह स्व अतिथि मानित ||
है स्वागत अतिथि नमसित | रहो जब तक हृदय में चाहत || (४३)

भावार्थ: *विश्वावसु (विद्याधर के व्यक्तित्व से) प्रभावित हुए और बोले, हे' मान्यवर अतिथि, इसे अपना ही घर समझो| हे आगंतुक, आपका स्वागत है| जब तक हृदय चाहे, रहो| '*

दिए आदेश तब वह स्व-सुता | ललिता करो प्रबंध आगुन्ता ||
दो भोज अत्यंत स्वादुता | हैं यह पूजित समान देवता || (४४)

भावार्थ: *तब (विश्वावसु) अपनी पुत्री को आदेश दिया, 'ललिता, अतिथि (के ठहरने) का प्रबंध करो| इन्हें स्वादिष्ट व्यंजन दो| यह हमारे लिए देवता समान पूजनीय हैं|'*

था गृह विश्वावसु सुगन्धित | जैसे दिव्य मधु इत्र सिञ्चित ||
न देखा कभी ऐसा सुगुप्त | है क्या रहस्य सोचें विस्मित || (४५)

भावार्थ: *विश्वावसु का गृह मधुर दिव्य इत्र छिड़कने जैसा सुगन्धित था| (विद्याधर) आश्चर्यचकित हो सोचने लगे कि ऐसा रहस्य कभी नहीं देखा है?*

रहूँ इस स्थल मैं कुछ दिन | संभव हों नीलमाधव दर्शन ||
देखें प्रति दिन वह एक विशेष | जाएं विश्वावसु गुह्य निवेश || (४६)

भावार्थ: *(विद्याधर ने सोचा) मैं यहां कुछ दिन रहूँ| हो सकता है कि नीलमाधव (प्रभु) के दर्शन हों| उन्हें एक विशेषता दिखाई दी| विश्वावसु प्रति दिन किसी अज्ञात स्थान को जाते थे|*

लौटें वह जब स्थल अपरिगत | सबर प्रमुख मुख अति मुदित ||
सुगन्धित तन हृदय प्रसन्न | रटें मुख अविरत वह भगवन् || (४७)

भावार्थ: *जब इस अनजान स्थान से सबर प्रमुख (विश्वावसु) लौटते थे तो उनके मुख पर प्रसन्नता होती थी| सुगन्धित शरीर एवं प्रफुल्लित हृदय से लगातार प्रभु का नाम रटते रहते थे|*

बीते दिन कुछ इसी प्रकार | करें सुता सेवा ब्रह्मकुमार ||
हुआ प्रेम मध्य द्वि-युवन | किए तब दोनों पाणिग्रहन || (४८)

भावार्थ: *इसी प्रकार कुछ दिन बीत गए| (विश्वावसु की) पुत्री ब्राह्मण पुत्र की सेवा करती रहीं| उन दोनों युवाओं में प्रेम हो गया| तब दोनों ने विवाह किया|*

थी सहमति पिता पानिग्रहन | सबर नरेश विश्वावसु पावन ||
पश्चात विवाह तब महस्विन् | बने विद्याधर घर जामातन || (४९)

भावार्थ: *पिता सबर नरेश पावन विश्वावसु विवाह से सहमत थे| विवाह के पश्चात विद्याधर घर-जमाई बन गए|*

पूछे भर्ता पत्नी एक दिन | जाएं कहाँ श्वसुर प्रतिदिन ||
न जानें ललिता इसका कारन | है अवश्य तथ्य कोई अति गहन || (५०)

भावार्थ: *एक दिन पति (विद्याधर) ने पत्नी (ललिता) से पूछा, 'श्वसुर जी प्रतिदिन कहाँ जाते हैं?' ललिता को इसका कारण ज्ञात नहीं था |अवश्य ही कोई अति गुप्त रहस्य होगा|*

कहें ललिता सुनो भरतार | लगता है यह गुह्य आसार ||
करे प्रयास पूछा कई बार | बताओ पिता इसका आधार ||
नहीं बोले पिता किसी बार | जान ना सकूं क्या तथ्य अपार || (५१)

भावार्थ: *ललिता बोलीं), 'हे पतिदेव सुनो, यह कोई गुप्त रहस्य लगता है| मैंने पिता से कई बार पूछने का प्रयास किया कि वह इसका कारण बताएं| पर पिता हर बार चुप ही रहे| मैं इस गहन तथ्य को नहीं जान सकी|*

किए विनती तब श्री भर्ता | प्राणप्रिय हृदय उत्सुक्ता ||
पूछो तुम तात करूँ विनती | रहूँ सदा कृत्यज्ञ रमन्ती || (५२)

भावार्थ: *तब पति ने विनती की, 'हे प्राणप्रिय मेरे हृदय में अत्यंत उत्सुकता है (यह जानने की कि श्वसुर जी वन में कहाँ जाते हैं| उन्हें ऐसा आभास हो रहा था कि वह अवश्य ही भगवान् नीलमाधव को जानते हैं और उनके दर्शन हेतु वन में जाते हैं)| आप पिता से पूछो| हे प्रिये, यह आभार सदैव रहेगा|'*

पिघला तब हृदय ललिता | पूछीं जाओ कहाँ वन पिता ||
है यह भेद गुप्त गहन सुता | जाऊं मैं पूजन भगवंता || (५३)

भावार्थ: *(पति की बातों से) ललिता का हृदय पिघल गया| उन्होंने पिता से पूछा कि वह वन में कहाँ जाते है? (पिता बोले), ' हे पुत्री, यह अत्यंत गहन रहस्य है| मैं वहां भगवान् की स्तुति करने जाता हूँ|'*

हैं वह नीलमाधव भगवंता | हुई पिता संग यह वार्ता ||
विद्याधर सुनी जब कथा | मन प्रसन्न मिलें जगन्नाथा || (५४)

भावार्थ: *(पिता आगे बोले) 'वह नीलमाधव भगवान् हैं|' पिता की (पुत्री से) यह वार्ता हुई| विद्याधर ने यह कथा सुनी और उनका मन प्रसन्न हुआ कि अब भगवान् मिलेंगे|*

की विनती तब पत्नी ललिता | लो आज्ञा जा सकें संग भर्ता ||
पड़ी पिता के चरण तब सुता | करें चाह हरि दर्शन जमाता || (५५)

भावार्थ: *तब पत्नी ललिता से (पति ने) विनती की| उन (पिता) से पति को साथ ले जाने की आज्ञा लो| तब पुत्री अपने पिता के चरण पड़ गईं, (और बोलीं) 'जमाई (प्रभु के) दर्शन करना चाहते हैं|'*

लो संग वन उन्हें तुम अपने | हरि दर्शन से पूर्ण हों सपने ||
दी नहीं अनुमति पिता ने | किया व्रत निर्जला सुता ने || (५६)

भावार्थ: *(ललिता पिता से बोलीं) उन्हें (मेरे पति को) वन में अपने साथ लीजिए ताकि प्रभु के दर्शन से उनके स्वप्न पूर्ण हों| पिता ने इसकी अनुमति नहीं दी| तब पुत्री ने निर्जला (आमरण) व्रत किया|*

त्यागूँ प्राण न करूँ भोजन | हों न अगर पति हरि दर्शन ||
पुत्री हठ झुके तब पितृमन | लूँ साथ पर बाँधू मैं नयन || (५७)

भावार्थ: *(ललिता बोलीं) अगर मेरे पति को प्रभु के दर्शन नहीं हुए तो मैं भोजन नहीं करूंगी, प्राण त्याग दूंगी| पुत्री की हठ के आगे पिता झुक गए| (वह बोले) 'मैं साथ ले जाऊँगा,लेकिन इनके नेत्र बाँध दूंगा|'*

देख न सकें मार्ग जमाता | यही विधि जा सकें मान्यता ||
दी स्वीकृति प्रतिबन्ध सुता | पर हुए अति विचलित भर्ता || (५८)

भावार्थ: *(पिता बोले) 'ताकि जमाई मार्ग न देख सकें| इसी शर्त पर मैं माननीय को (अपने साथ हरि दर्शन हेतु) ले जा सकता हूँ|' पुत्री ने तो यह शर्त स्वीकार कर ली लेकिन पति (विद्याधर) अत्यंत विचलित हो गए|*

कैसे जानूं मार्ग प्रभु का | कैसे करें नृप दर्श हरि का ||
हो न विचलित कहें कनिका | दूँ उपाय मैं इस उलझन का || (५९)

भावार्थ: *(विद्याधर ने पत्नी ललिता से कहा) मैं' प्रभु (निवास) का मार्ग कैसे जान पाऊँगा? मैं सम्राट को प्रभु के दर्शन कैसे करा पाऊँगा?' तब कनक समान पत्नी (ललिता) ने कहा, 'आप विचलित न हों| मैं इस उलझन का उपाय बताती हूँ|'*

बांधे एक पोटली बीज खञ्जन | छुपा दिए पति के आवरन ||
डालो दाना तुम इसे मेदिन | उपजें वर्ष ऋतू यह बीजन || (६०)

भावार्थ: एक पोटली मैं सरसों के बीज बांधे और पति के कपड़ों में छिपा दिए| (और कहा) तुम इसके दानों को भूमि पर डालते जाना| वर्षा ऋतु मैं यह बीज उपज जाएंगे (और मार्ग दर्शन करेंगे)|

प्रातः चले विश्वावसु पावन | बाँध पट्टी विद्याधर लोचन ||
चले बैठे शकट तब द्विजन | डालें सरिश मार्ग जामातन || (६१)

भावार्थ: *प्रातः पवित्र विश्वावसु (प्रभु से मिलने) चले| उन्होंने विद्याधर के नेत्रों पर पट्टी बाँध दी| दोनों बैलगाड़ी पर सवार होकर चले| मार्ग मैं जमाई (गुप्त रूप से) सरसों (के बीज) डालते गए|*

पहुंचे शीघ्र हरि मंदिर में | थी माधवनील मूर्ति अग्र में ||
मुग्धित हुए प्रभु विग्रह में | था शंख गदा चक्र भुजा में || (६२)

भावार्थ: *शीघ्र ही वह (दोनों) प्रभु के मंदिर पहुंच गए| नीलमाधव की प्रतिमा उनके समक्ष थी| प्रभु की मूर्ति देखकर (विद्याधर) मोहित हो गए| उनके हस्त मैं शंख, गदा, चक्र (इत्यादि) सुशोभित थे|*

चतुर्भुज रूप हरि था सुखद | देख विद्याधर हुए रुदित ||
बोले विश्वावसु हे जमाता | जाऊं वन लेने पुष्प पाता || (६३)

भावार्थ: *प्रभु का चतुर्भुज रूप अति सुखदायी था| (प्रभु के दर्शन से) विद्याधर रोने लगे (प्रभु प्रेम के अश्रु उनके नयनों से बहने लगे)| (तब) विश्वावसु बोले, 'हे जमाई, मैं वन पत्र, पुष्प लेने जा रहा हूँ (प्रभु की पूजा हेतु)|'*

करेंगे हम पूजन भगवंता | तदुपरांत प्रस्थान निकेता ||
गए अटव तब श्री मानिता | करें प्रतीक्षा वहां जमाता || (६४)

भावार्थ: *(पत्र, पुष्प से) 'हम प्रभु की पूजा करेंगे| तत्पश्चात घर को प्रस्थान करेंगे|' यह कहकर मान्यवर (विश्वावसु) वन को चले गए| जमाई (विद्याधर) वहां उनकी प्रतीक्षा करने लगे|*

मंदिर सुन्दर सवेश सरोवर | गूँजें भ्रमर पुष्प पद्म पर ||
चहचहा रहे खग वृक्षों पर | वृक्ष आम्र थे शोभित जल पर || (६५)

भावार्थ: *सरोवर के तट पर यह मंदिर अत्यंत सुन्दर था| (सरोवर के अंदर) कमल पुष्प पर भोरे गुंजन कर रहे थे| वृक्ष पर पक्षी चहचहा रहे थे| आम्र वृक्ष की शाखा (सरोवर) जल पर अत्यंत शोभायमान थी|*

देखे विद्याधर वहां एक काग | था जल समाधि ले रहा सुभाग ||
हुए प्रगट तब गरुड़ खाग | बैठ पंख गया स्वर्ग वह काग || (६६)

भावार्थ: (*तभी) विद्याधर ने एक काग को देखा| उस भाग्यशाली ने (उनके नेत्रों के समक्ष) जल समाधि ले ली| तभी पक्षी गरुड़ (भगवान् विष्णु के वाहन) प्रगट हो गए| उनके पंख पर बैठकर वह काग स्वर्ग चला गया|*

है काग कितना सौभागी | था वह न भक्त तपी न योगी ||
है मांसाहार अपवित्र खग | पाया स्पर्श सरोवर से स्वर्ग || (६७)

भावार्थ: *(विद्याधर सोचने लगे) यह काग कितना भाग्यशाली है| न तो यह भक्त है, न तपस्वी और न ही योगी | यह तो मांसाहारी अपवित्र पक्षी है | इस (पवित्र) सरोवर के स्पर्श (मात्र) से यह स्वर्ग चला गया|*

विचार किए तब श्री विद्याधर | लूँ समाधि मैं इस सरोवर ||
पाऊँ वास स्वर्ग सहजकर | चढ़े वह एक वृक्ष यह सोचकर || (६८)

भावार्थ: *तब विद्याधर विचार करने लगे कि मैं भी इस सरोवर के अंदर समाधि ले लूँ| सहज ही मुझे स्वर्ग की प्राप्ति हो जाएगी| यह सोचकर (जल समाधि लेने हेतु) वह एक वृक्ष पर चढ़ गए|*

हुए कूदने को वह तब तत्पर | लें समाधि सरस शीघ्रकर ||
सुने तब वह घोर गगन स्वर | है आत्मवध घोर पापकर || (६९)

भावार्थ: *जैसे ही वह जल समाधि लेने हेतु कूदने को तत्पर हुए, तभी एक आकाशवाणी हुई| आत्महत्या करना घोर पाप है|*

न करो स्वघात इस लोभ में | पा लोगे बैकुंठ सहज में ||
धरो धैर्य संयम हृदय में | होगी मुक्ति उचित समय में || (७०)

भावार्थ: *(आकाशवाणी बोली) इस लोभ में कि तुम्हें स्वर्ग की प्राप्ति सहजता से प्राप्त हो जाएगी, आत्म-हत्या नहीं करो| हृदय में थोड़ा संयम रखो| उचित समय पर तुम्हें मोक्ष मिलेगा|*

जाओ तुम अब राजधानी | सूचित करो नृप कहानी ||
आएं नीलमाधव स्थल पावन | करें इच्छा पूर्ण सुहावन || (७१)

भावार्थ: *(आकाशवाणी बोली) अब तुम राजधानी (उज्जैन) जाकर महाराज (इन्द्रद्युम्न) को कथा सुनाओ| वह अपनी सत इच्छा पूर्ण करने नीलमाधव (हरि) के पवित्र निवास स्थान पर आएं|*

तभी लौटे विश्वावसु महन | लिए संग पत्र पुष्प हेतु पूजन ||
कीन्हीं पूजा तब हरि पावन | हेतु नीलमाधव अनुकम्पन || (७२)

भावार्थ: *तभी महात्मा विश्वावसु पत्र, पुष्प पूजन हेतु लेकर (वन से) वापस आ गए| तब पवित्र हरि की पूजा की ताकि नीलमाधव की कृपा पा सकें|*

हुए हिय प्रसन्न जामाता | देख श्वसुर भक्ति भगवंता ||
लौटे गृह समापन पूजन | बांधे वह जमाता पुनः नयन || (७३)

भावार्थ: *श्वसुर (विश्वावसु) की प्रभु भक्ति देख जमाई (विद्याधर) हृदय में प्रसन्न हुए| पूजा की समाप्ति के पश्चात (दोनों) गृह लौटे| (लौटते समय) जमाई के नेत्रों पर (विश्वावसु ने) फिर से पट्टी बांध दी|*

बीते कुछ दिन शम पूर्वक | बोले विद्याधर तब सविनयक ||
हे श्वसुर जी सुनो यह वचन | प्रिय ललिता करो तुम श्रवन ||
हो गए दिन बहु मिले पैतृक | दो आज्ञा मिलूं सब दायक || (७४)

भावार्थ: *कुछ दिन शांतिपूर्वक बीते| तब विनम्रता से विद्याधर (विश्वावसु से) बोले, 'हे श्वसुर जी मेरे वचन सुनो| हे प्रिय ललिता तुम भी सुनो| बहुत दिनों से मैं माता पिता से नहीं मिला| आप आज्ञा दें तो मैं अपने परिवार से मिल आऊं|'*

ले आज्ञा श्वसुर और पत्नी | आए वह अवन्ती राजधानी ||
मिले नृप कही कहानी | इन्द्रद्युम्न सुन हिय सुखानी || (७५)

भावार्थ: *श्वसुर और पत्नी से आज्ञा ले तब वह अवन्ती (प्रदेश) राजधानी (उज्जैन) आए| वहां सम्राट (इन्द्रद्युम्न) से मिले एवं भगवान् नील माधव) से मिलन की कथा सुनाई| (कथा सुनकर) इन्द्रद्युम्न का हृदय प्रसन्नता से भर गया|*

नहीं हेतु करें अब विलम्बन | करें दर्शन तुरंत हम भगवन ||
दिए तब सेना नृप प्रचोदन | चले इन्द्रद्युम्न संग प्रियजन || (७६)

भावार्थ: *(सम्राट इन्द्रद्युम्न बोले) अब देरी करने का कोई कारण नहीं है| हम तुरंत भगवान् के दर्शन करें|तुरंत राजा ने सेना को (कलिंग प्रदेश) चलने की आज्ञा दी| (महाराज) इन्द्रद्युम्न ने अपने प्रियजनों के साथ कूच किया|*

वर्षा ऋतु थी अति सुहावन | पहुंचे वह विश्वावसु ग्रामन ||
पीत सरिस पुष्प अति शोभन | मिला मार्ग प्रभु अनुवासिन || (७७)

भावार्थ: *वर्षा ऋतु का सुहावना समय था जब (सम्राट इन्द्रद्युम्न) विश्वावसु के ग्राम पहुंचे| सरसों के पीले पुष्प सुशोभित हो रहे थे, (उनकी मदद से) प्रभु के प्रवास का मार्ग मिल गया (प्रभु नील माधव मंदिर का मार्ग मिल गया)|*

पहुंचे मंदिर मानवेन्द्र | पर नहीं देखे वहां देवेंद्र ||
करें विलाप घोर नृपेंद्र | दो दर्शन तुरंत हे सुरेंद्र || (७८)

भावार्थ: *सम्राट (नील माधव हरि के) मंदिर पहुंचे, परन्तु वहां प्रभु नहीं थे| ((प्रभु के दर्शन न होने के कारण) नृप घोर विलाप करने लगे और प्रभु से दर्शन देने की प्रार्थना करने लगे|*

करूँ मैं अब निर्जला व्रत | पाऊँ न दर्शन यदि भगवत ||
त्यागूँ प्राण मैं हे सुखमत | लक्ष्य नहीं रहूँ अब जीवित || (७९)

भावार्थ: *(सम्राट इन्द्रद्युम्न ने संकल्प लिया) मैं अब निर्जला व्रत रखूंगा| अगर प्रभु के दर्शन नहीं हुए तो मैं प्राण त्याग दूंगा| (प्रभु के दर्शन बिना) मेरे जीवन का अब कोई लक्ष्य नहीं है|*

सुनी तब मधुर वाणी गगन | सुनो सुनो हे भक्त राजन ||
हो गया विलोप निरूपन | अब नीलमाधव श्री भगवन || (८०)

भावार्थः *तभी मधुर आकाशवाणी हुई| हे राजन सुनो, भगवान् श्री नीलमाधव का स्वरुप अब विलुप्त हो गया है|*

हुए हैं प्रगट अब नए वर्पन् | कहे जग उन्हें जगन्नाथ भगवन |
करो प्रतीक्षा तुम तट सागर | बह रहे शव तीन महासागर ||
हैं वह दारु-ब्रह्म निरूपन | हों प्रतीत सम काष्ठ कङ्कन || (८१)

भावार्थः *अब वह नए रूप में प्रकट हुए हैं| संसार उन्हें जगन्नाथ भगवान कहता है| समुद्र के तट पर तुम प्रतीक्षा करो| (वहां) समुद्र में तीन शवों को बहते देखोगे| वह काष्ठ के वृत्त समान प्रतीत होने वाले दारु-ब्रह्म (लकड़ी के भगवान्) का रूप हैं|*

द्वारका में त्यागा हरि तन | संग बलराम सुभद्रा बहन ||
आए तैर शव तट जल-लवन | स्वरूप दारु-ब्रह्म भगवन || (८२)

भावार्थः *बलराम और बहन सुभद्रा के साथ द्वारका में प्रभु (श्री कृष्ण) ने शरीर त्यागा| (उनके) शव समुद्र तट पर दारु-ब्रह्म भगवन स्वरुप में आए हैं|*

जाओ तुम सब अब तट सागर | बह रहा काष्ठ ले सिंधु आगर ||
शंख चक्र पद्म और मुद्गर | इंकित हैं चिन्ह ईश चराचर || (८३)

भावार्थः *तुम सागर तट पर जाओ | लकड़ी समुद्र का आश्रय ले बह रही है| हे सम्राट, उस पर शंख, चक्र, कमल और गदा (इत्यादि) के निशान अंकित हैं जो संसार के स्वामी (भगवान्) के हैं|*

कर उपयोग इस दारु खंड का | करो निर्माण चतुर्विग्रह का ||
दो आकृति इसे मंदिर का | करो स्थापना चक्र तीर्थ का || (८४)

भावार्थः *काष्ठ के लट्ठे का उपयोग कर इस से चार मूर्तियां (जगन्नाथ, बलराम, सुभद्रा एवं सुदर्शन चक्र) बनाओ| इसे मंदिर की आकृति दे वहां चार मूर्तियों को स्थापित करो|*

सुनी सम्राट वाणी गगन | गए तट सागर संग परिजन ||
देखा वहां काष्ठ खंड महन | हो रहा प्रकट तट जल-लवन || (८५)

भावार्थ: *आकाशवाणी सुन नरेश अपने समाज के साथ समुद्र तट पर गए| वहां उन्होंने विशाल काष्ठ खंड देखा जो समुद्र तट पर प्रगट हो रहा था|*

निकाला सागर से काष्ठ को | किए नमन धर्म चिन्हों को ||
लिए संकल्प वह करें निबंधन | भगवान् जगन्नाथ निरूपन ||
साथ भ्राता श्री संकर्षन | बहन सुभद्रा चक्र सुदर्शन || (८६)

भावार्थ: *तब उन्होंने इस काष्ठ को समुद्र से निकाला| उस पर अंकित धर्म चिन्हों को नमन किया| भगवान् जगन्नाथ, भ्राता श्री बलदेव, बहन सुभद्रा एवं सुदर्शन चक्र के स्वरुप के निर्माण का संकल्प किया|*

की स्थापना विग्रह कर वर्धित | किया मंदिर विशाल निर्मित ||
किए कलश शिखर स्थापित | हो रहा संग चक्र सुशोभित || (८७)

भावार्थ: *एक विशाल मंदिर का निर्माण कर उन सब तराशी मूर्तियों को (मंदिर में) स्थापित किया| (मंदिर के) शिखर पर कलश स्थापित किया| उसके साथ (सुदर्शन) चक्र शोभित हो रहा था|*

गए तब ब्रह्मलोक में राजन | किए दर्शन वहां चतुरानन ||
किए विनती चलें संग भुवन | करें प्रतिष्ठा मंदिर भगवन || (८८)

भावार्थ: *तब नृप (इन्द्रद्युम्न) ब्रह्मलोक गए और ब्रह्मदेव के दर्शन किए| उनसे पृथ्वी पर आकर भगवान् को मंदिर में प्रतिष्ठापित करने की विनती की|*

बोले पितामह सुनो राजन | है आदेश स्वयं यह भगवन ||
करूँ प्रतिष्ठा विग्रह भगवन | हेतु कार्य आऊं मैं भुवन || (८९)

भावार्थ: *ब्रह्मदेव बोले, हे राजन (इन्द्रद्युम्न) सुनो| स्वयं हरि (विष्णु) का यह आदेश है कि मैं विग्रहों को प्रतिष्ठापित करूँ| इस कार्य के लिए मैं भूलोक आऊँगा|*

दी आज्ञा ईश ब्रह्मलोक | लौटो नृप अब तुम भूलोक ||
निमंत्रण दो सब विभूति लोक | संत नृप ऋषि मुनि इहलोक || (९०)

भावार्थ: *ब्रह्मदेव ने आज्ञा दी | नृप, अब तुम पृथ्वी लोक पर लौटो| सभी पृथ्वी के महामान्यगण, नरेश, ऋषि,मुनियों को (इस अवसर पर पधारने का) निमंत्रण दो|*

लौटे इन्द्रद्युम्न तब भुवन | करते जगन्नाथ हिय सुमिरन ||
बीते सहस्त्र वर्ष सम भुवन | थे गालमाधव तब भू राजन || (९१)

भावार्थ: *तब इन्द्रद्युम्न हृदय में (भगवान्) जगन्नाथ का स्मरण करते हुए पृथ्वी पर लौट आए| तब पृथ्वी के एक सहस्त्र वर्ष बीत गए| उस समय पृथ्वी पर (सम्राट) गालमाधव का शासन था|*

विशेष: *ब्रह्मलोक का एक दिन भूलोक के एक सहस्त्र वर्ष के बराबर होता है| यद्यपि सम्राट इन्द्रद्युम्न ने ब्रह्मलोक में एक दिन ही बिताया था, परन्तु वह पृथ्वी लोक के एक सहस्त्र वर्ष के बराबर बिताया था|*

सुनो कथा अब विग्रह तक्षन | कहें तब कथा प्रतिष्ठापन ||
है यह कथा अति पतित पावन | जो दे हृदय अति प्रमोदन || (९२)

भावार्थ: अब विग्रह के तराशने की कथा सुनो| तब प्रतिष्ठापन की कथा कहेंगे| यह कथा अति पतित पावन एवं हृदय को आनंद देने वाली है|

विग्रह तक्षण कथा

सुन इन्द्रद्युम्न वाणी गगन | रुप काष्ठ में हैं नारायन ||
कही कथा हम उप पूर्वतन | पहुंचे तट नृप संग परिजन || (९३)

भावार्थ: *(सम्राट) इद्रद्युम्न ने आकाशवाणी सुनी कि काष्ठ स्वरुप में प्रभु हैं, तब सम्राट परिजनों के साथ (समुद्र) तट पर पहुंचे, यह कथा हमने ऊपर पूर्व में कही|*

था काष्ठ खंड तट सागर पर | चाहें रखें उसे उचित स्थल पर ||
करें प्रयास सब उपस्थित जन | न उठे वह काष्ठ किसी शूरजन || (९४)

भावार्थ: *वह काष्ठ का लट्ठा सागर तट पर था| उसे उचित स्थान पर रखना चाहा (उसे समुद्र से निकालना चाहा)| सभी उपस्थित प्राणी प्रयास करने लगे, लेकिन वह काष्ठ (लट्ठा) किसी शूरवीर से नहीं उठा|*

सुनी तब मधुर वाणी गगन | बुलाओ विश्वावसु राजन ||
संग विद्याधर ललिता पावन | समर्थ उठाएं दारु वृत्तन || (९५)

भावार्थ: *तभी मधुर आकाशवाणी हुई, 'हे राजन, विश्वावसु एवं उनके साथ पवित्र विद्याधर और ललिता को बुलाओ| वही इस काष्ठ वृत्त को उठाने में समर्थ हैं|*

हुए विस्मित यह सुन राजन | करें तब महाराज मित्र स्मरन ||
भेजी सेना तुरंत सबर भवन | लाओ यहां त्रिभक्त भगवन || (९६)

भावार्थ: *यह सुनकर सम्राट आश्चर्यचकित हो गए| सम्राट को अपने मित्र का स्मरण हो आया| तुरंत सबर निवास में सेना भेजी| उन तीनों प्रभु भक्तों को लेन का आदेश दिया|*

सेनापति गए तब ग्राम सबर | किए विनय चलो तट सागर ||
संग ललिता और विद्याधर | बनो सहायक कार्य नृपवर || (९७)

भावार्थ: *तब सेनापति सबर ग्राम गए और विनती की, 'आप तुरंत सागर तट ललिता और विद्याधर के साथ चलो और नरेश के कार्य में सहायक बनो|'*

पहुंचे शीघ्र वह तट सागर | पड़े नृप पग करबद्ध आकर ||
था वहां एक रथ स्वर्ण तट पर | रखे काष्ठ वह इस दिव्य रथ पर || (९८)

भावार्थ: *वह (तीनों) शीघ्र ही समुद्र तट पर पहुंचे| (वहां) आकर वह करबद्ध सम्राट के चरणों में गिर पड़े (उनका अभिवादन किया)| तट पर एक स्वर्ण रथ खड़ा हुआ था| उन्होंने इस काष्ठ को इस दिव्य रथ में रख दिया|*

हांका रथ गंतव्य स्थल को | स्थान चयनित गंडमंडल को ||
उतारे वहां खंड काष्ठ को | करें आमंत्रित तब शिल्पी को || (९९)

भावार्थ: *रथ उस स्थल को हांका जहां मंदिर बनाने की योजना थी| काष्ठ के लट्ठे को वहां उतारा|(इस काष्ठ खंड से मूर्तियां बनाने के लिए) मूर्तिकारों को आमंत्रित किया गया|*

आए शिल्पी हेतु विग्रह तक्षन | टूटें अस्त्र हों निराश वह जन ||
आए तब एक शक्त शिल्पीजन | था उनका स्वरूप ब्राह्मन || (१००)

भावार्थ: *मूर्तियां बनाने (अनेक) शिल्पी आए| उनके उपकरण टूट जाते थे जिससे उन्हें निराशा होती थी| तभी एक निपुण शिल्पी आए जो ब्राह्मण स्वरुप थे|*

बोले नृप हूँ मैं ब्राह्मन | नाम महाराणा तक्षण निपुन ||
शिल्पकार मैं समर्थ तक्षन | करूँ मैं विग्रह निबन्धन || (१०१)

भावार्थ: (वह) बोले, 'हे नृप, मैं ब्राह्मण हूँ| मेरा नाम महाराणा है और मैं शिल्प कला में निपुण हूँ| मैं एक कुशल मूर्तिकार हूँ| मैं मूर्तियों का निर्माण करूंगा|

थे वह स्वयं जगन्नाथ भगवन | आए करने विग्रह तक्षन ||
बोले सुनो ध्यान से नरनाथ | लगें इक्कीस दिन तक्षण नाथ || (१०२)

भावार्थ: *वह स्वयं जगन्नाथ प्रभु ही थे जो मूर्तियां निर्मित करने आए थे| वह बोले, 'हे नृप,ध्यान से सुनो| मुझे प्रभु की मूर्ति तक्षण करने में २१ दिन लगेंगे|'*

करूँ जब तक्षण मूर्ति भगवन | रखूँ मैं बंद द्वार इस भवन ||
नहीं अनुमति प्रवेश भूजन | दिन इक्कीस अवधि विग्रह तक्षन || (१०३)

भावार्थ: जब मैं भगवान् की मूर्ति का निर्माण करूँ तब मैं भवन (मूर्ति निर्माण स्थल) के द्वार बंद रखूंगा| किसी भी प्राणी को २१ दिन विग्रह तराशने की अवधि तक प्रवेश की अनुमति नहीं है|

अवधि पूर्व खोले पट भवन | करूँ बंद कार्य मैं तत्क्षन ||
त्यागूं मैं तुरंत कर्म तक्षन | रहें अपूर्ण मूर्ति भगवन || (१०४)

भावार्थ: *अगर (इस २१ दिन की अवधि से पूर्व) अवधि से पूर्व (मूर्ति निर्माण भवन के) द्वार खोल दिए तो मैं अपना कार्य तुरंत बंद कर दूंगा| मैं मूर्ति निर्माण कार्य तुरंत छोड़ दूंगा| भगवान् की मूर्तियां अपूर्ण रह जाएंगी|*

है स्वीकार हमें निर्देश | करो तुम तक्षण विग्रह सुरेश ||
किए आरम्भ कार्य शिल्पेश | बीते चौदह दिन कर्म इत्येष || (१०५)

भावार्थ: *(नृप ने कहा) हमें आपका निर्देश स्वीकार है| आप प्रभु की मूर्ति निर्माण करें| तब मूर्तिकार ने कार्य प्रारम्भ किया| (मूर्तिकार को) १४ दिन इस कार्य में बीत गए (मूर्ति निर्माण भवन में १४ दिन हो गए)|*

बिन पेय जल और बिन भोजन | हो कैसे निर्वाह जन जीवन ||
हुए अति चिंतित श्री राजन | संग रानी सोचें परिशोधन || (१०६)

भावार्थ: *(मूर्तिकार ने इन १४ दिनों में) न कोई जल पेय लिया और न ही कोई भोजन| (बिना पेय एवं भोजन के १४ दिन तक) मानव का जीवन निर्वाह कैसे हो सकता है? सम्राट अत्यंत चिंतित हो गए| महारानी के साथ इसका समाधान सोचने लगे|*

देें नृप आज्ञा सचिव प्रधान | खोलो पट तुरंत धर्मवान ||
पड़े चरण सचिव सुजान | है न उचित उल्लंघन विधान || (१०७)

भावार्थ: *तब प्रधान मंत्री को सम्राट (इन्द्रद्युम्न) ने तुरंत द्वार खोलने की आज्ञा दी| बुद्धिमान सचिव ने तब (राजा के) पैर पकड़ लिए और कहा, 'निर्देश का उल्लंघन करना उचित नहीं है|'*

बोलीं तब सुमति महारानी | महासचिव सुनो मेरी वानी ||
ब्रह्महत्या अघ अपरिमानी | हों न यदि जीवित महाज्ञानी || (१०८)

भावार्थ: *तब श्रेष्ठ महारानी बोलीं, 'हे महासचिव मेरी बात सुनो| अगर कुशल (मूर्तिकार) जीवित न हुए तो हम पर ब्रह्म हत्या का घोर पाप लग जाएगा|*

माने सचिव विपरीत इच्छा | खोले पट हेतु ब्राह्मण रक्षा ||
थे व्यस्त शिल्पकार कक्षा | करें तक्षण विग्रह वह दक्षा || (१०९)

भावार्थ: *अपनी इच्छा के विपरीत (महा) सचिव ने ब्राह्मण की रक्षा हेतु (भवन के) पट खोल दिए| दक्ष शिल्पकार भवन के अंदर मूर्तियां निर्माण करने में अत्यंत व्यस्त थे|*

पड़ीं अपूर्ण भूतल मुर्ति | विलक्षित पग कर नैन अधिपति ||
बोले ब्राह्मण श्रेष्ठ राजन | क्यों किए उल्लंघन निर्देशन || (११०)

भावार्थ: *फर्श पर अपूर्ण मूर्तियां पड़ी थीं| (मूर्तियों में) प्रभु के पैर, हाथ, नेत्र (इत्यादि) अपूर्ण थे| ब्राह्मण बोले, 'हे श्रेष्ठ सम्राट, आपने वचन क्यों तोड़ा (निर्देश का पालन क्यों नहीं किया)?*

हैं नितांत सप्त और दिन | कर सकता विग्रह सम्पूरन ||
संभव यही इच्छा भगवन | सो खोले तुमने पट भवन || (१११)

भावार्थः *अभी मुझे मूर्तियां सम्पूर्ण करने के लिए सात दिन और आवश्यक हैं| सम्भवतः प्रभु की ऐसी ही इच्छा होगी, इसी कारण आपने भवन का द्वार खोल दिया| (प्रभु की ऐसी ही इच्छा होगी कि विग्रह अपूर्ण ही रहें| प्रभु की विग्रह अपूर्ण रखने का रहस्य इस काव्य के अंतिम अध्याय में दिया गया है|)*

हुए शिल्पी तब तुरंत अदृश्य | नहीं समझ सका कोई रहस्य ||
पछताएं नृप देख यह दृश्य | मैं अभग अभद्र मूर्ख मनुष्य || (११२)

भावार्थः *(इतना कहकर) तब शिल्पकार तुरंत अदृश्य हो गए (चले गए)| यह दृश्य देखकर सम्राट पछताने लगे (अपने आप को कोसने लगे)| मैं कितना अभागा, अभद्र और मूर्ख व्यक्ति हूँ|*

हुई तभी मधुर वाणी गगन | करो नहीं चिंता तुम राजन ||
हुआ यह अनुसार मेरे मन | हूँ स्थापित मैं अपूर्ण वर्पन् || (११३)

भावार्थः *तभी मधुर आकाशवाणी हुई| हे सम्राट, तुम चिंता नहीं करो| यह मेरे मन के अनुसार हुआ है| मैं अपूर्ण रूप में स्थापित हूँगा|*

करो विग्रह मंदिर स्थापित | इसी रूप हों प्रतिष्ठापित ||
हों पचक विद्याधर वंशजन | करें पाक भिन्न नैवेद्य दिव्यन || (११४)

भावार्थः *अब इन मूर्तियों को मंदिर में स्थापित करो और इसी रूप में प्रतिष्ठित करो| विद्याधर के वंशज बावर्ची बन विविध भांति के दिव्य नैवेद्य पकाएं|*

करो एक अन्य मंदिर निर्मान | समीप विश्वावसु अवस्थान ||
ग्राम दयिता में संस्थापन | कहें गुंडिचा मंदिर भूजन || (११५)

भावार्थः *विश्वावसु के निवास स्थान के पास एक अन्य मंदिर का निर्माण करो| यह ग्राम दयिता के अंदर हो| यह गुंडिचा मंदिर नाम से प्रसिद्ध हो|*

करूँगा मैं वहां विश्राम | दस दिन हर वर्ष अविराम ||
होंगे संग सुभद्रा बलराम | करें सेवा सबर कुलग्राम || (११६)

भावार्थ: *मैं वहां निरंतर हर वर्ष दस दिन विश्राम करूंगा| मेरे साथ बलराम और सुभद्रा भी होंगे| सबर कुलजाति के लोग हमारी सेवा करेंगे|*

जाएंगे हम यहां रथ पथन | हो उत्सव विराट इस धुवन ||
सुने सभी यह वाणी गगन | हर्षित हुए सब भूजन मन || (११७)

भावार्थ: *हम (भगवान् जगन्नाथ स्वयं, बलराम एवं सुभद्रा) यहां रथ पर चढ़ कर जाएंगे| इस स्थल पर विशाल उत्सव होगा| आकाशवाणी सुनकर सभी लोगों के हृदय हर्षित हुए|*

की पालन आज्ञा श्रीपति | हुईं स्थापित मंदिर मूर्ति ||
थी इच्छा यह श्री राजन | ब्रह्मा करें प्रतिष्ठापन ||
हेतु इस गए लोक चतुरानन | करने इन्द्रद्युम्न अभियाचन || (११८)

भावार्थ: *प्रभु की आज्ञा का पालन हुआ| मूर्तियां मंदिर में स्थापित कर दी गईं| नरेश (इन्द्रद्युम्न) की ऐसी इच्छा थी कि ब्रह्मदेव मूर्ति को प्रतिष्ठापित करें| इस कारण इन्द्रद्युम्न ब्रह्मलोक प्रार्थना करने गए|*

श्री विग्रह प्रकाश

थे इन्द्रद्युम्न जब ब्रह्मलोक | सुनो जो कथा घटी भूलोक ||
गईं गुंडिचा तब कंदरोक | करने ध्यान ईश त्रिलोक || (११९)

भावार्थः *जब (सम्राट) इन्द्रद्युम्न ब्रह्मलोक में थे तो जो घटना पृथ्वी पर घटी, उसकी कथा सुनो| (महारानी) गुंडिचा त्रिलोक के स्वामी (प्रभु) के ध्यान हेतु गुफा में चली गईं|*

बीत गए धरा वर्ष कई शत | ढक गया पूर्ण मंदिर सैकत ||
थे नृप गालमाधव भुवन | गए भ्रमण तट सागर एक दिन || (१२०)

भावार्थः *पृथ्वी पर कई सौ वर्ष बीत गए| (सम्राट इन्द्रद्युम्न द्वारा निर्मित) मंदिर बालू के अंदर ढक गया| (उस समय) गालमाधव पृथ्वी के नरेश थे| वह एक दिन भ्रमण हेतु समुद्र तट पर गए|*

टकराया अश्व वस्तु विशित | हुए चोटिल गिर तब भूपति ||
दिए आज्ञा खोदें स्थापयति | मिला अंदर मंदिर विरचित || (१२१)

भावार्थः *(सम्राट गालमाधव का) अश्व किसी नुकीली वस्तु से टकराया| महाराज को तब गिर कर चोटें आईं| उन्होंने उस स्थल को खोदने का आदेश दिया| (खोदने पर बालू) अंदर एक निर्मित मंदिर मिला|*

था यह वही मंदिर भगवन | निर्मित इन्द्रद्युम्न राजन ||
किए नृप उद्धार इस मंदिर | बने स्वामी इस कृति सुन्दर || (१२२)

भावार्थः *यह वही भगवान् (जगन्नाथ) का मंदिर था जिसे सम्राट इन्द्रद्युम्न ने निर्मित किया था| सम्राट (गालमाधव) ने मंदिर का उद्धार किया| वह इस सुन्दर निर्माण के स्वामी बन गए|*

लौटे जब इन्द्रद्युम्न भुवन | पश्चात मिलन श्री चतुरानन ||
बीत गए थे तब वर्ष कई शत | सुना अब गालमाधव भूपति ||
मिले तब गालमाधव राजन | दिए अपना परिचय इन्द्रद्युम्न || (१२३ क)
कहने लगे सुनो नृप महन | किया मैं निर्माण हरि भवन ||
कर गरुड़ध्वज यहां स्थापन | गया मैं तब मिलने चतुरानन || (१२३ ख)

भावार्थ: *जब सम्राट इन्द्रद्युम्न (ब्रह्मलोक से) ब्रह्मदेव से मिलने के बाद पृथ्वी पर लौटे तब तक कई सौ वर्ष बीत चुके थे| उन्होंने सुना कि अब गालमाधव नरेश हैं| तब वह सम्राट गालमाधव से मिले और सम्राट इन्द्रद्युम्न ने अपना परिचय दिया| उन्होंने कहा, 'हे महान सम्राट सुनो| मैंने इस हरि मंदिर का निर्माण किया था| गरुड़ध्वज की स्थापना के पश्चात मैं ब्रह्मदेव से मिलने गया|'*

बोले तब गालमाधव राजन | है कोई इसका प्रमाण महन ||
आए कागभुसुंडि प्रिय भगवन | हूँ मैं साक्षी इस संरचन || (१२४)

भावार्थ: *तब सम्राट गालमाधव बोले, 'हे महात्मा, क्या इसका कोई प्रमाण है?' उसी समय भगवद प्रिय कागभुसुंडि आ गए और उन्होंने बतलाया कि वह इस निर्माण के साक्षी हैं|*

विशेष: *काग कागभुसुंडि जी को प्रभु श्री शंकर एवं प्रभु श्री राम ने अमरत्वता का वरदान दे रखा है| हर काल में वह उपस्थित रहते हैं, विशेषकर जहां प्रभु का नाम स्मरण हो|*

ब्रह्मदेव भी हुए उपस्थित | इन्द्रद्युम्न ही हैं अधिपति ||
हैं यह जगन्नाथ समर्पित | सौंपो इन्हें मंदिर हे नरपति || (१२५)

भावार्थ: *तब ब्रह्मदेव भी वहां उपस्थित हो गए| (उन्होंने भी इसका प्रमाण दिया कि) 'इन्द्रद्युम्न ही इस (मंदिर) के स्वामी हैं| यह (प्रभु) जगन्नाथ को पूर्णतः समर्पित हैं| हे नरेश (गालमाधव), इन्हें मंदिर सौंप दो|'*

पड़े पग तब गालमाधव राजन | हो तुम मेरे ज्येष्ठ पितृन ||
करो क्षमा मुझे मेरे मानन | जान भ्राता लघु हे महन || (१२६)

भावार्थ: *तब (सम्राट) गालमाधव ने (सम्राट इन्द्रद्युम्न) के चरण पकड़ लिए, 'आप मेरे पितृ हैं (पूर्वज हैं)| हे माननीय, मुझे छोटा भाई समझकर क्षमा कर दें|'*

जागीं गुंडिचा तभी साधन | हुआ आभास लौटे भर्तन ||
आईं वह तब तीर वारकिन् | किया नमन नृप व् चतुरानन || (१२७)

भावार्थ: *तब (प्रभु कृपा से) (साम्राज्ञी) गुंडिचा साधना से जाग गईं| उन्हें आभास हुआ कि उनके पति (ब्रह्मलोक से) लौट आए हैं| वह तुरंत समुद्र तट (कलिंग के बंकिम सागर तट जहां सम्राट इन्द्रद्युम्न ने प्रभु जगन्नाथ मंदिर निर्मित किया था) पर पहुँची| उन्होंने नृप (अपने पति इन्द्रद्युम्न) एवं ब्रह्मदेव को प्रणाम किया|*

बोले नरेश हे चतुरानन | करो प्रतिष्ठापित भगवन ||
विधिवत कर सकें हम वंदन | हरि बलराम सुभद्रा बहन || (१२८)

भावार्थ: *सम्राट (इन्द्रद्युम्न) बोले, 'हे ब्रह्मदेव, अब आप भगवान् को प्रतिष्ठापित करो जिससे हम विधिवत प्रभु, बलराम और बहन सुभद्रा का वन्दन कर सकें|'*

बोले तब देव श्री चतुरानन | हूँ असमर्थ करूँ प्रतिष्ठापन ||
हैं यह विग्रह अति उज्जवलित | है ज्योति परम इष्ट भगवत || (१२९)

भावार्थ: *तब श्री ब्रह्मदेव बोले, 'मैं प्रतिष्ठापन करने में असमर्थ हूँ| यह विग्रह अत्यंत प्रकाशमान हैं| यह हरि इष्ट की परम ज्योति हैं|(भगवान् को कौन प्रतिष्ठापित कर सकता है, वह तो स्वयं ही यहां परम ज्योति के साथ स्थापित हैं)|*

बाँधूँ ध्वजा मंदिर शिखर | हो प्रतीक पावन प्रभाकर ||
करे नमन जो भी नारि नर | हों नाश अघ हो सम परिहर || (१३०)

भावार्थ: *मैं शिखर पर एक ध्वजा बांधे देता हूँ जो पवित्र प्रभु का प्रतीक होगा| जो भी नर-नारि इसको नमन करेगा, उसके समस्त पापों का नाश होगा और वह परिहर (वेदों का ज्ञाता) समान होगा|*

किए तब ब्रह्मदेव स्थापन | अग्र मंदिर ध्वजा व् सुदर्शन ||
करें सब नर नारि तब वंदन | संग हली सुभद्रा भगवन || (१३१)

भावार्थ: *तब ब्रह्मदेव ने मंदिर के अग्र स्थान पर एक ध्वजा एवं सुदर्शन (चक्र) की स्थापना की| तब सब नर-नारि इसका (ध्वजा एवं चक्र) भगवान् (श्री जगन्नाथ), बलराम एवं सुभद्रा के साथ वंदन करते हैं|*

चक्र सुदर्शन है अति मानन | करें सब भक्त इनका पूजन ||
होते अति प्रसन्न तब भगवन | दें आशीष वह उन भक्तगन || (१३२)

भावार्थ: *सुदर्शन चक्र अति पूजनीय है| सभी भक्त इनका पूजन करते हैं| इससे भगवान् (जगन्नाथ) प्रसन्न होते हैं और भक्तगणों को आशीर्वाद देते हैं|*

पड़े इन्द्रद्युम्न तब पग भगवन | बोले दो वर मुझे परिज्मन् ||
हे प्रभु हेतु आपके दर्शन | हुई एकत्रित भीड़ भूजन || (१३३)

भावार्थ: *तब इन्द्रद्युम्न भगवान् (श्री जगन्नाथ) के पैरों पर पड़ गए और बोले, 'हे प्रभु, मुझे वरदान दीजिए| हे प्रभु, आपके दर्शन हेतु प्राणियों की भीड़ इकट्ठी हो गई है|'*

दो अनुमति हरि अपरम्पार | करें बंद एक प्रहर ही द्वार ||
मुसकुराए तब जग आधार | बोले सुनो नृप मेरा विचार ||
है नृप अवश्य यह दुष्कार | करूँ हेतु कल्याण संसार || (१३४)

भावार्थ: *(सम्राट इन्द्रद्युम्न बोले) हे अपरम्पार प्रभु, केवल एक पहर के लिए ही (मंदिर के) द्वार बंद करें, ऐसी अनुमति दीजिए| तब मुसकुराकर प्रभु बोले, हे नृप, मेरा विचार सुनो| कार्य अवश्य कठिन है पर विश्व के कल्याण के लिए करूंगा|'*

खाना होगा सतत भोजन | जगा रहूँ यदि इस प्रयोजन ||
करो प्रबंध हे प्रिय राजन | हो उपलब्ध हर कल्प भोजन || (१३५)

भावार्थ: *(प्रभु बोले)' इस प्रयोजन हेतु (मैं एक पहर ही शयन करूँ) कि मैं जागता रहूँ, मुझे लगातार भोजन करना होगा| हे नृप, इसका प्रबंध करो कि भोजन हर समय उपलब्ध रहे|'*

पड़ हरि पग बोले तब नरेंद्र | हुआ कृतार्थ मैं सुरेंद्र ||
चले भंडारा सदा हे महेंद्र | हर क्षण सुनो श्री सर्वेंद्र || (१३६)

भावार्थ: *तब नरेंद्र (नरेश) प्रभु के पद पकड़ कर बोले, 'हे भगवन, मैं कृतार्थ हो गया (प्रभु ने उन्हें यह वरदान दे दिया कि वह केवल एक प्रहर के किए ही शयन करेंगे| हे प्रभु, यहां हर क्षण भंडारा चलता रहेगा|'*

तथास्तु कहे तब श्री भगवान् | मांगो वर हेतु स्व-कल्यान ||
करबद्ध बोले नृप सुजान | रहूँ अप्रसूत दो वरदान || (१३७)

भावार्थ: *भगवान् ने तथास्तु (ऐसा ही हो) कहा (केवल एक प्रहर शयन करने का वरदान दे दिया)| इसके पश्चात (प्रभु) बोले, '(हे नृप) अपने स्व-कल्याण के लिए वरदान मांगो (पहला वरदान तो लोक कल्याण के लिए था)|' तब करबद्ध बुद्धिमान (नृप) बोले, 'हे प्रभु, मुझे वरदान दें कि मैं निःसंतान रहूँ|'*

हुए विस्मित सब उपस्थित जन | क्या हेतु लक्ष्य वर यह राजन ||
बोले तब इन्द्रद्युम्न पति-भुवन | दुष्कर समझें माया भगवन || (१३८)

भावार्थ: *सभी उपस्थित गण आश्चर्यचकित हो गए| (इस प्रकार का वरदान माँगने का) नरेश का उद्देश्य क्या है? (तब) सम्राट इन्द्रद्युम्न बोले, 'प्रभु की माया को समझना अत्यंत कठिन है|'*

यदि हो इस भू मेरी संतान | है संभव हेतु माया भगवान् ||
हो दूषित भूलें कर्म महान | सेवा हेतु लौकिक कल्यान ||
लड़ें मध्य हेतु सम्पति युगपत् | भूलें पूजन श्री भगवत || (१३९)

भावार्थ: *(सम्राट इन्द्रद्युम्न बोले) अगर मेरी इस संसार में संतान होगी तो संभव है कि प्रभु की माया के कारण दूषित हो महान कर्म, संसार की सेवा करना, भूल जाएं| सम्पत्ति के लिए आपस में झगड़ा करें और प्रभु का पूजन भूल जाएं|*

नहीं चाहूँ मेरी संतान | समझे स्व-संपत्ति भगवान् ||
है यह धन मंदिर जन कल्यान | नहीं हेतु विलास सामान || (१४०)

भावार्थ: *मैं नहीं चाहता कि मेरी संतान प्रभु की संपत्ति को स्वयं की समझे| मंदिर का धन लोक कल्याण के लिए होता है, न कि भोग विलास के लिए|*

करे अवमानन धर्म दान धन | हो नर्कवासी अवश्य वह जन ||
भूजन हैं सरंक्षक मंदिर धन | है अछूत जो अर्पित भगवन || (१४१)

भावार्थ: *जो प्राणी धर्म दान धन का दुरुपयोग करता है, वह अवश्य नर्कवासी होता है| प्राणी मंदिर के धन का संरक्षक है| प्रभु को अर्पित किया (धन) अछूत है|*

सुन इन्द्रद्युम्न के मधुर वचन | हुए अति प्रसन्न श्री भगवन ||
दिए वर प्रभु जो चाहा मन | विराजे जगन्नाथ तब आसन || (१४२)

भावार्थ: *(सम्राट) इन्द्रद्युम्न के मनोहर वचन सुन प्रभु अत्यंत प्रसन्न हुए| प्रभु ने उन्हें मनचाहा वर दिया और अपने आसन पर विराजित हुए|*

की स्तुति हरि उपस्थित जन | पाए मनोवांछित वर भूजन ||
करो श्रवण अब मंदिर अन्यन | है विख्यात जो गुंडिचा भवन ||
स्थित कोस एक मुख्य देवालय | है यह रानी गुंडिचा आलय || (१४३)

भावार्थ: *(जब भगवान् श्री जगन्नाथ अपने आसन पर विराजमान हो गए तब) सभी उपस्थित लोगों ने (प्रभु की) स्तुति की और मनोवांछित वर प्राप्त किए| अब दूसरे मंदिर का श्रवण करो जो गुंडिचा भवन नाम से विख्यात है| यह मुख्य मंदिर (भगवान् जगन्नाथ मंदिर) से एक कोस (तीन किलोमीटर) दूर स्थित है जो रानी गुंडिचा का महल है|*

आषाढ़ शुक्ल के द्वितीय दिन | जाएं प्रभु इस गुंडिचा भवन ||
करें   वहां   विश्राम   नौ दिन | लौटें तब मुख्य मंदिर भगवन || (१४४)

भावार्थ: *आषाढ़ शुक्ल (पक्ष) की द्वितीया को प्रभु गुंडिचा मंदिर जाते हैं | वहां नौ दिन विश्राम कर (दशमी को) मुख्य मंदिर लौट आते हैं|*

करें भक्त रथ यात्रा आयोजन | मध्य गुंडिचा और हरि भवन ||
करें   यहां   विश्राम   भगवन | संग   बलराम सुभद्रा बहन || (१४५)

भावार्थ: *भक्त रथ यात्रा का जगन्नाथ मंदिर से गुंडिचा भवन (मंदिर) तक आयोजन करते हैं| यहां प्रभु (जगन्नाथ) बलराम एवं सुभद्रा बहन के साथ विश्राम करते हैं|*

रहें नौ दिन इस गृह पावन | करें   भोग स्वादिष्ट व्यंजन ||
करें विहार नौका भगवन | करें अभिषेक तीर्थ जल जन || (१४६)

भावार्थ: *इस पवित्र गृह में नौ दिन रहते हुए स्वादिष्ट व्यंजनों का भोग स्वीकार करते हैं| प्रभु नौका विहार करते हैं| तीर्थ जल से उनका प्राणी अभिषेक करते हैं|*

लें आनंद जल क्रीड़ा भगवन | लीला करे   रुग्ण नारायन ||
हेतु स्वास्थ्य लाभ तब भगवन | करें विश्राम मुख्य हरि भवन || (१४७)

भावार्थ: *जल क्रीड़ा का प्रभु आनंद लेते हैं| (अत्यधिक जल क्रीड़ा करने से) लीला से प्रभु अस्वस्थ हो जाते हैं| तब स्वास्थ्य लाभ के लिए नित्य मंदिर में प्रभु विश्राम करते हैं|*

रहें पंद्रह दिन बंद पट भवन | करें सेवा लक्ष्मी तब भगवन ||
करते जब विश्राम भगवन | नहीं आज्ञा करें जन दर्शन || (१४८)

भावार्थ: *१५ दिन (प्रभु जगन्नाथ मंदिर) के द्वार बंद रहते हैं| तब लक्ष्मी उनकी सेवा करती हैं| जब प्रभु विश्राम कर रहे होते हैं तब प्रभु के दर्शन की अनुमति नहीं होती|*

है यह कथा अत्यंत पावन | कही स्व-मुख चैतन्य भगवन ||
जो करें यह कथा श्रवण पठन | पाएं सुख शान्ति अपने जीवन || (१४९)

भावार्थ: *यह अति पवित्र कथा श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने मुख से स्वयं कही है| जो (प्राणी) इस कथा को सुनेंगे अथवा पढ़ेंगे, उन्हें अपने जीवन में सुख और शान्ति प्राप्त होगी (उनका जीवन सुख एवं शान्ति से भर पूर्ण होगा)|*

अपूर्ण विग्रह रहस्य

है वर्णित इस पावन कथा में | हैं अपूर्ण विग्रह मंदिर में ||
है रहस्य वर्णित ग्रंथों में | थी हरि इच्छा इस कार्य में || (१५०)

भावार्थ: *इस पवित्र कथा में ऐसा वर्णित किया गया है कि (भगवान् जगन्नाथ) मंदिर में विग्रह अपूर्ण हैं| इसका रहस्य ग्रंथों में वर्णित है| इस कार्य में प्रभु की इच्छा निहित थी|*

था काल यह अत्यंत दुष्कर | थे दिव्यांग पात्र अनादर ||
करे न कोई उनका मानन | राज्य समाज और परिजन || (१५१)

भावार्थ: *यह अत्यंत दुर्भाग्यशाली समय था जब दिव्यांग अनादर के पात्र थे| उनका परिवार, समाज और राज्य में कोई सम्मान नहीं करता था|*

थे भगवान् स्वयं अति चिंतित | हैं दिव्यांग मेरी प्रिय कृति ||
लेते जन्म हेतु कार्य दिव्य | हैं यह इस जग जन अव्याप्य || (१५२)

भावार्थ: *प्रभु को (दिव्यांगों के हित में) स्वयं अति चिंता थी| दिव्यांग तो मेरी प्रिय रचना हैं (मेरी प्रिय संतानें है)| इनका जन्म दिव्य कारण से होता है| यह इस संसार में विशेष प्राणी हैं|*

विशेष: *श्रुति में ऐसा उल्लेख है कि प्रभु किसी विभूति को दिव्यांग रूप देकर उसके सब पूर्व जन्मों के पापों को नष्ट कर देते है| वह विभूति एक रिक्त-पत्र की भांति होती है| इस अवस्था में प्रभु के ध्यान से उसे तुरंत मुक्ति प्राप्त होती है|*

लिए निर्णय इस कारण भगवन् | लूँ अवतार रूप दिव्यांग जन ||
फेरी बुद्धि अतः नृप महन | करें ब्रह्म जब मूर्ति तक्षन || (१५३)

भावार्थ: *इस कारण प्रभु ने ऐसा निर्णय लिया कि वह दिव्यांग रूप में अवतरित होंगे| अतः उन्होंने महाराजा (इन्द्रद्युम्न) की बुद्धि फेर दी जब (स्वयं) प्रभु मूर्ति निर्माण कर रहे थे|*

की तय अवधि मूर्ति तक्षन | इक्कीस दिन निपुण ब्राह्मन ||
थी नहीं आज्ञा कोई भूजन | खोले द्वार शिल्पशाल भवन || (१५४)

भावार्थ: *मूर्तियों को निर्माण करने की अवधि निपुण ब्राह्मण ने २१ दिन तय की थी| (इस अवधि में) किसी प्राणी को निर्माण भवन के द्वार खोलने की आज्ञा नहीं थी|*

पर खोले पूर्व काल पट भवन | जैसे किया काव्य में वर्णन ||
छोड़े कार्य तुरंत निपुन | न हुआ विग्रह पूर्ण तक्षन || (१५५)

भावार्थ: *लेकिन अवधि से पूर्व भवन के द्वार खोल दिए जैसा कि इस काव्य में वर्णित है| विशेषज्ञ (ब्राह्मण) ने कार्य तुरंत छोड़ दिया जिससे मूर्तियों के तरासने में अपूर्णता रह गई|*

अपूर्ण रहा तक्षण सब मूर्ति | जैसे सम दिव्यांग प्रकृति ||
हुई तब प्रतिष्ठित जगदपति | जैसी चाह स्वरुप श्रीपति || (१५६)

भावार्थ: *सभी मूर्तियां दिव्यांग रूप के समान अपूर्ण रहीं| प्रभु की जैसी इच्छा थी वह इसी रूप में प्रतिष्ठित हुए|*

दें संदेश जगन्नाथ भगवन | हैं दिव्यांग स्वरुप पावन ||
दो मान उन्हें सम नारायन | हो कल्याण लोक और भूजन || (१५७)

भावार्थ: *(भगवान्) जगन्नाथ ने यह सन्देश दिया कि दिव्यांग पवित्र रूप हैं| उन्हें नारायण की भांति सम्मान देकर सभी प्राणी अपना और लोक कल्याण करें|*

हुए दुःखी यद्यपि श्री राजन | हैं अपंग मेरे प्रिय भगवन ||
हुए प्रगट तब हरि पावन | हो नहीं दुःखी तुम हे राजन || (१५८)

भावार्थ: *यद्यपि नरेश (इन्द्रद्युम्न) दुःखी थे कि मेरे प्रिय प्रभु (विग्रह) अपंग हैं| तभी उनके समक्ष पवित्र प्रभु प्रगट हुए (और बोले), 'हे नृप, दुःखी नहीं हो|*

समझो नृप तुम गुण नारायन | चलें बिन पग देखें बिन नयन ||
हैं वह सर्व व्यापेश्वर पावन | करें बिन पग वह विश्व-भ्रमन || (१५९)

भावार्थ: *हे नरेश, तुम प्रभु के गुण समझो| बिन पग के वह चलते हैं| बिन नेत्र के देखते हैं| वह पवित्र सर्व-व्यापी हैं| बिना पग के ही विश्व-भ्रमण करते हैं|*

सुन सकें वह बिन श्रवण | करें कार्य बिन हस्त निषेवन ||
बिन मुख करते वह भोजन | बिन जिह्वा करते सम्भाषन || (१६०)

भावार्थ: *वह बिना कानों के सुनते हैं| बिना हाथों को उपयोग में लाये कार्य करते हैं| बिना मुख के आहार करते हैं| बिना जिह्वा के सम्भाषण करते हैं|*

करो नहीं नरेश तुम शोक | सक्षम करूँ मैं जग आलोक ||
सुन वचन हरि हुए नृप प्रसन्न | त्राहि त्राहि लो शरण भगवन || (१६१)

भावार्थ: *(प्रभु बोले) '(हे नृप) तुम शोक नहीं करो| मैं (अपूर्ण स्थति में भी) जग कल्याण करने के लिए सक्षम हूँ' प्रभु के वचन सुन तब नरेश (इन्द्रद्युम्न) प्रसन्न हुए| 'त्राहि त्राहि, हे भगवन, शरण में लो|'*

इति श्री जगन्नाथ रथ यात्रा कथा काव्य

श्री जगन्नाथ महात्म्य

प्रभु श्री कृष्ण जन्म

की रचना ग्रन्थ महाराज श्री गोस्वामी सनातन |
श्रीबृहद्भागवतामृत नामक ग्रन्थ अति पावन || (१६२)

भावार्थ: *महाराज श्री गोस्वामी सनातन जी ने अति पवित्र ग्रन्थ श्रीबृहद्भागवतामृत की रचना की|*

थे वसुदेव सुत नृप शूरसेन खांडलवंश माहिन |
किए विवाह देवकी जो थीं नृप मथुरा कंस बहन || (१६३)

भावार्थ: *वसुदेव खांडलवंश साम्राज्य के सम्राट शूरसेन के पुत्र थे| उन्होंने मथुरा सम्राट कंस की बहन देवकी से विवाह किया|*

सुन नभ वाणी करेगा उनका आठवां सुत कंस हनन |
हो क्रोधित बनाया बंदी उन्हें वह मूर्ख दुर्जन || (१६४)

भावार्थ: *आकाशवाणी सुनकर कि उनका आठवां पुत्र कंस का वध करेगा, क्रोधित हो उस मूर्ख दुष्ट ने उन्हें बंदी बना लिया|*

किया वध छै पुत्र देवकी वसुदेव कंस दुरात्मन |
न कर सका वध वह दुष्ट उनके सप्तम और अष्टम नंदन || (१६५)

भावार्थ: *दुरात्मा कंस ने देवकी और वसुदेव के छै पुत्रों का वध कर दिया|वह दुष्ट उनके सातवें और आठवें पुत्र का वध नहीं कर सका|*

थे शेषावतार बलराम सप्तम पुत्र वसुदेव महन |
पल रहे सुरक्षित आँचल रोहिणी गृह नन्द राजन || (१६६)

भावार्थ: महात्मा वसुदेव के सातवें पुत्र शेषावतार बलराम थे जो (नंदगांव के) राजा नन्द के यहां रोहिणी (वसुदेव की दूसरी पत्नी) की क्षत्रछाया में पल रहे थे|

आया काल प्रासुतिक अष्टम पुत्र जब इन मिथुनन |
अति सुन्दर किशोर षोडस वर्ष नारायण भगवन ||
हुए प्रकट समक्ष जनयित्र देवकी वसुदेव राजन || (१६७)

भावार्थ: *जब इस युगल के आठवें पुत्र के जन्म का समय आया तब १६ वर्ष के सुन्दर बालक भगवान् विष्णु अपने माता पिता देवकी और सम्राट वसुदेव के समक्ष प्रकट हुए|*

था सुनहरा पीताम्बर सुशोभित उनके श्री तन |
थे अलंकृत दिव्य सुन्दर चमचमाते स्वर्ण आभूषन || (१६८)

भावार्थ: *उनके श्री तन पर पीताम्बर सुशोभित था| वह चमचमाते हुए आभूषणों से अलंकृत थे|*

मुकुट कनक शीर्ष सुन्दर घुंघराले लम्बे वृजन |
शोभित कर शंख चक्र गदा पद्म चतुर्भुज भगवन || (१६९)

भावार्थ: *सिर पर सुन्दर घुंघराले लम्बे केश और स्वर्ण मुकुट था| चार भुजा वाले भगवान् के हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म सुशोभित हो रहे थे|*

हुईं अवतरित उसी काल योगमाया भी इस भुवन |
लीं जन्म गर्भ यशोदा वह नंदगांव नन्द के भवन || (१७०)

भावार्थ: *उसी काल इस पृथ्वी पर योगमाया भी अवतरित हुईं| नंदगांव में नन्द के गृह में यशोदा के गर्भ से वह जन्म लीं|*

देख चतुर्भुज रूप प्रभु करने लगीं देवकी वंदन |
भाव अति प्रेम हृदय बोलीं वह करबद्ध सुवचन ||
हे हरि त्याग ब्रह्म स्वरुप कीजिए लीला शिशुपन || (१७१)

भावार्थ: *प्रभु का चतुर्भुज (नारायण) रूप देख कर देवकी वंदन करने लगीं|हृदय में अति प्रेम के भाव से हाथ जोड़ कर वह बोलीं, 'हे प्रभु, यह ब्रह्म स्वरुप त्याग दीजिए और बालपन की लीला कीजिए|'*

देख प्रफुल्लित देवकी हो अति प्रसन्न बोले भगवन |
हे माँ रुप कैकयी लीजिए मेरा प्रथम शत नमन || (१७२)

भावार्थ: *देवकी को प्रफुल्लित देख अत्यंत प्रसन्न होकर भगवान् बोले, 'हे कैकयी रूप माँ पहले आप मेरे शत नमन लीजिए (स्वीकार कीजिए)|'*

किया पूर्ण मैंने जो दिया आपको त्रेता युग वचन |
लूँ जन्म गर्भ आपके अब द्वापर युग हे माँ पावन || (१७३)

भावार्थ: *'मैंने जो आपको त्रेता युग में वचन दिया था, वह पूर्ण किया| हे पवित्र माँ, अब द्वापर युग में मैं आपके गर्भ से जन्म लूंगा|' (शास्त्रों में ऐसा वर्णित हैं कि त्रेता युग में भगवान् श्री राम को माँ कैकयी अत्यंत प्रिय थीं| उन्होंने माँ कौशल्या के गर्भ से जन्म अवश्य लिया था, लेकिन उनका लालन पालन, यहां तक कि उन्हीं का स्तन्य पी प्रभु बड़े हुए| माँ कैकयी के त्याग और प्रेम से प्रसन्न हो भगवान ने उनसे वरदान माँगने को कहा| माँ कैकयी ने तब वर मांगा कि अगले जन्म में प्रभु उनके गर्भ से जन्म लें| प्रभु ने यह वचन दिया और उसी के पूर्ण करने की यहां बात कह रहे हैं)|*

करूँ प्रविष्ट मैं अब गर्भ आपके हो माँ निष्पन्न |
हे पिता वसुदेव सुनो ध्यान से आप मेरे यह वचन || (१७४)

भावार्थ: *'हे माँ आप तत्पर हो, मैं अब आपके गर्भ में प्रवेश करूंगा| हे पिता वसुदेव, आप मेरे वचन को ध्यान से सुनो|'*

टूट जाएंगी बेड़ी आपकी तुरंत बाद मेरे जनन |
सो जाएंगे रक्षक खुल जाएंगे ताल इस गृह बंधन || (१७५)

भावार्थ: *मेरे जन्म के तुरंत बाद आपकी बेड़ियाँ टूट जाएंगी| रक्षक सो जाएंगे और इस कारागृह के ताले खुल जाएंगे|*

रखो मुझे एक पेटिका और ले जाओ नन्द भवन |
दीं जन्म यशोदा एक कन्या योगमाया निरूपन || (१७६)

भावार्थ: *एक टोकरी में मुझे रख नन्द भवन (नन्दगांव) ले जाओ| यशोदा ने योगमाया स्वरुप एक पुत्री को जन्म दिया है|*

कर विनिमय आप ले आओ कन्या इस गृह बंधन |
किए प्रवेश प्रभु गर्भ माँ देवकी तब कह यह वचन || (१७७)

भावार्थ: *मेरा विनिमय (अदला बदली) कर आप कन्या को इस कारागृह में ले आओ| ऐसे वचन बोल प्रभु माँ देवकी के गर्भ में प्रवेश कर गए|*

था काल कृष्णपक्ष दिवस अष्टमी मास भाद्र पावन |
लिए जन्म हरि मध्य रात्रि हुआ वही जो कहा भगवन || (१७८)

भावार्थ: *पवित्र मास भाद्रपद के कृष्णपक्ष अष्टमी का समय था| प्रभु ने मध्य रात्रि में जन्म लिया| (उसके पश्चात) जैसा प्रभु ने कहा, वैसा ही हुआ (अर्थात माता पिता की बेड़ियाँ खुल गईं| रक्षक सो गए और कारागृह के ताले खुल गए)|*

पहुंचे प्रभु नंदगांव और बने नन्द यशोदा नंदन |
हुए जनयित्र बाबा नन्द जान यह सभी प्रजाजन ||
मनाने लगे उत्सव सब संग नन्द इस बृज भूमि पावन || (१७९)

भावार्थ: *प्रभु नंदगांव में पहुँच नन्द और यशोदा के पुत्र हो गए| नन्द बाबा पिता बने हैं, यह जान कर सभी प्रजाजन इस पवित्र बृज भूमि में नन्द के साथ उत्सव मनाने लगे|*

हुआ जन्म पुत्र नन्द दिए सन्देश सर्वत्र भारिकजन |
आए देने बधाई ऋषि मुनि संत ब्राह्मण नन्द भवन || (१८०)

भावार्थः *नन्द के पुत्र का जन्म हुआ है, यह समाचार भाटों ने सर्वत्र फैला दिया| ऋषि, मुनि, संत, ब्राह्मण नन्द भवन बधाई देने आए|*

दिए दान मुक्त हस्त नन्द बाबा इन सभी अतिथिगन |
गौ वस्त्र स्वर्ण वित्त असंभव अपि कुबेर ईश धन || (१८१)

भावार्थः *इन सभी अतिथियों को नन्द बाबा ने मुक्त हस्त से गौ, वस्त्र, स्वर्ण, धन का दान दिया जो धनेश कुबेर के लिए भी असंभव था|*

माँ यशोदा नंदबाबा के थे प्रिय शिशु रूप भगवन |
दिन नामकरण बुलाए पूज्य गुरु महर्षि गर्ग महन || (१८२)

भावार्थः *बाल रूप भगवान् माँ यशोदा और नन्द बाबा के प्रिय थे| नामकरण के दिन पूज्य गुरु महर्षि गर्ग को बुलाया|*

हैं यह शिशु नील वर्ण अति आकर्षक स्वयं भगवन |
अनगिनत नाम इनके असंभव दे सकूं मैं एक अद्वयन || (१८३)
फिर भी कहूँ हों प्रसिद्ध यह नाम कृष्ण त्रिभुवन ||
हो गए मौन कह यह मधुर वचन महर्षि गर्ग महन || (१८४)
हुई जय जयकार चहुँ ओर सुन नाम कृष्ण पावन |
हुआ धन्य बृज लिए अवतार स्वयं प्रभु इस भुवन || (१८५)

भावार्थः *यह शिशु आकर्षक नील वर्ण के स्वयं भगवान् हैं| इनके अनगिनत नाम हैं अतः एक नाम दे सकूं यह असंभव है| फिर भी मैं कहता हूँ कि यह कृष्ण नाम से तीनों लोकों में प्रसिद्ध होंगे| यह मधुर वचन कह महात्मा महर्षि गर्ग मौन हो गए| पवित्र नाम कृष्ण सुनकर चारों ओर (प्रभु की) जय जयकार होने लगी| बृज धन्य हुआ जो स्वयं भगवान् ने इस भूमि पर अवतार लिया|*

यशोदा और बाबा नन्द किए शिशु हरि का पालन |
करते अनेक लीला दिन प्रतिदिन शिशु रूप भगवन || (१८६)

भावार्थ: *यशोदा और नन्द बाबा बाल हरि का पालन करने लगे| वह बाल रूप भगवान् दिन प्रतिदिन अनेक लीलाएं करते|*

माखन चोरी गौ चारण क्रीड़ संग सखा स्तम्भ बंधन |
मधुर लीला सम रास संग सखिन गोवर्धन गिरि धारन || (१८७)

भावार्थ: *माखन चोरी, गौओं का चराना, मित्रों के साथ क्रीड़ा, खम्भे पर बंधना, सखियों (गोपियों) के साथ रास लीला, गोवर्धन पर्वत का धारण करना जैसी मधुर लीलाएं कीं|*

किए वध सम पूतना तृणावर्त अघासुर दुर्जन |
बकासुर आदि दैत्य आए जो करने वध भगवन || (१८८)

भावार्थ: *पूतना, तृणावर्त, अघासुर, बकासुर आदि दैत्य जो भगवान् का वध करने आए, उनका वध किया|*

बीत गए वर्ष दस इस भांति करते लीला भगवन |
आए तब प्रवीर अक्रूर ले सन्देश वसुदेव जनन || (१८९)

भावार्थ: *इस भांति हरि लीला करते हुए दस वर्ष बीत गए| तब कुमार अक्रूर पिता वसुदेव का सन्देश ले कर आए|*

हे बलराम और कृष्ण सुनो तुम ध्यान से मेरे वचन |
हैं बंदी जनयित्र भवत देवकी वसुदेव कंस बंध-भवन || (१९०)

भावार्थ: *हे बलराम और कृष्ण,मेरे वचनों को ध्यान से सुनो| तुम्हारे माता पिता देवकी और वसुदेव कंस के कारागृह में बंदी हैं|*

करेगा वह दुष्ट सम्राट कंस शीघ्र ही उनका हनन |
चलो तुरंत मथुरा नगर संग मेरे हेतु उनके रक्षन || (१९१)

भावार्थ: *वह दुष्ट सम्राट कंस शीघ्र ही उनका वध करेगा| उनकी रक्षा हेतु तुरंत मेरे साथ मथुरा नगर चलो|*

सुन विनीत वचन अक्रूर बोले तब कृष्ण भगवन |
हे पूज्य भाई हैं हम तो यशोदा और नन्द नंदन || (१९२)
पर कहे आप हैं हमारे देवकी और वसुदेव जनन |
सुनाई तब सब कथा अक्रूर जन्म श्री कृष्ण भगवन || (१९३)

भावार्थ: *अक्रूर के विनम्र वचन सुनकर कृष्ण भगवान् बोले, 'हे पूज्य भ्राता, हम तो यशोदा और नन्द के पुत्र हैं लेकिन आप कहते हैं कि हमारे माता पिता देवकी और वसुदेव हैं |' तब अक्रूर ने भगवान् श्री कृष्ण के जन्म की कथा सुनाई|*

जानते सब पर हेतु लीला बन रहे मासूम भगवन |
कहने लगे हैं उचित भ्राता अक्रूर आपके वचन || (१९४)

भावार्थ: *प्रभु सब जानते हैं लेकिन लीला हेतु अनजान बन रहे हैं| (प्रभु) कहने लगे हे भ्राता अक्रूर आपके वचन उचित हैं|*

गए मथुरा तब संग अक्रूर बलराम कृष्ण भगवन |
कर वध कंस किए राज्याभिषेक तब उग्रसेन राजन || (१९५)

भावार्थ: *तब अक्रूर और बलराम के साथ कृष्ण भगवान् मथुरा गए| तत्पश्चात कंस का वध कर सम्राट उग्रसेन का राज्याभिषेक किया|*

रहे कई वर्ष तब कृष्ण संग बलराम मथुरा पट्टन |
नृप जरासंध श्वसुर कंस था अति बलशाली दुर्जन || (१९६)

भावार्थः *बलराम के साथ तब कृष्ण कई वर्ष तक मथुरा नगर में रहे| कंस का श्वसुर सम्राट जरासंध अति बलशाली दुष्ट था|*

था क्रोधित किए कृष्ण वध उसके प्रिय जमातन |
लेने प्रतिशोध करने लगा वह बारम्बार आक्रमन || (१९७)

भावार्थः *कृष्ण ने उसके प्रिय जामाता का वध कर दिया था, अतः वह क्रोधित था| प्रतिशोध लेने हेतु वह बार बार (मथुरा पर) आक्रमण करता था|*

यद्यपि हुआ पराजित वह हर बार सम्मुख भगवन |
पर था यह पूर्ण क्लेश सभी वासी मथुरा भुवन || (१९८)

भावार्थः *यद्यपि वह (सम्राट जरासंध) प्रभु के सम्मुख हर बार पराजित हुआ ,परन्तु यह मथुरा राज्य के वासियों के लिए कष्ट पूर्ण था|*

अतः ले गए भगवन द्वीप द्वारका सभी प्रजाजन |
कर स्थापित राज्य वहां करने लगे यदुवंशी शासन || (१९९)

भावार्थः *अतः भगवान् सभी प्रजा को द्वारका द्वीप ले गए| वहां राज्य स्थापित कर यदुवंशी शासन करने लगे|*

ब्रह्मऋषि नारद की इच्छा

हुई एकदा इच्छा जानें यह ब्रह्मऋषि नारद महन |
है कौन इस भू सर्वाधिक प्रिय श्री कृष्ण भगवन || (२००)

भावार्थ: *एक बार महात्मा ब्रह्मऋषि नारद को यह जानने की इच्छा हुई कि इस पृथ्वी पर श्री कृष्ण भगवान् का सर्वाधिक प्रिय कौन है?*

मिले वह इंद्र पवन-पुत्र महादेव और चतुरानन |
बोले सब है संभव पाण्डु पुत्र अति प्रिय भगवन || (२०१)

भावार्थ: *वह (ब्रह्मऋषि नारद) इंद्र, हनुमान, महादेव और ब्रह्मदेव से मिले| सभी ने यह कहा कि संभवतः पाण्डु पुत्र ही प्रभु के अति प्रिय हैं|*

आए तब नारद इंद्रप्रस्थ मिलने सब पांडुनंदन |
किए भव्य स्वागत संग युधिष्ठिर पांडव युद्धिवन || (२०२)

भावार्थ: *तब नारद सभी पाण्डु पुत्रों से मिलने इंद्रप्रस्थ आए| युधिष्ठिर सहित सभी पांडव योद्धाओं ने उनका भव्य स्वागत किया|*

पूछे प्रश्न क्या हैं आप सर्वाधिक प्रिय भगवन |
बोले वह नहीं सत्य कि हम सर्वाधिक प्रिय कृश्न || (२०३)

भावार्थ: *(नारद जी ने) प्रश्न पूछा कि क्या आप भगवान् के सर्वाधिक प्रिय हैं| वह (पांडव) बोले ,यह सत्य नहीं है कि हम कृष्ण के सर्वाधिक प्रिय हैं|*

हैं द्वारका वासी सर्वाधिक प्रिय कृष्ण भगवन |
जाओ द्वारका मिलेंगे वहीं उत्तर आपके प्रश्न || (२०४)

भावार्थ: *द्वारका वासी कृष्ण भगवान् के सर्वाधिक प्रिय हैं| आप द्वारका जाओ, वहीं आपके प्रश्न के उत्तर मिलेंगे|*

गए ब्रह्मऋषि नारद तब द्वारका स्थल पावन |
किए प्रवेश सर्व प्रथम वह माँ रुक्मिणी भवन || (२०५)

भावार्थ: *तब ब्रह्मऋषि नारद पवित्र स्थान द्वारका को गए| उन्होंने सर्व प्रथम माँ रुक्मिणी के भवन में प्रवेश किया|*

सौभाग्यवश थीं उपस्थित वहां सब रानी भगवन |
रुक्मिणी संग सत्यभामा जामवंती मित्रविंदन ||
नाग्नजिति आदि पत्नियां कृष्ण निधि ज्ञान शोभन || (२०६)

भावार्थ: *सौभाग्यवश उस समय वहां भगवान कृष्ण की सभी ज्ञान और गुण की निधि महारानियां रुक्मिणी, सत्यभामा, जामवंती, मित्रविंदन, नाग्नजिति आदि उपस्थित थीं|*

कर प्रणाम बैठे समीप उन ईश्वरी नारद महन |
कहने लगे करबद्ध देवियो हैं आप सुभग अनन्य || (२०७)

भावार्थ: *प्रणाम कर महात्मा नारद उन ईश्वरीयों के समक्ष बैठ गए| करबद्ध कहने लगे, 'देवियों, आप अनन्य सौभाग्यशाली हैं|'*

है प्राप्त सौभाग्य आपको कर सकें सेवा भगवन |
हैं आप सर्वाधिक प्रिय कृष्ण और वंदनीय भुवन ||
करो स्वीकार सभी इष्ट मेरे आप शत शत नमन || (२०८)

भावार्थ: *आपको भगवान की सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त है| आप (भगवान्) कृष्ण की सर्वाधिक प्रिय और धरा पर वंदनीय हैं| हे इष्ट देवियों, मेरे शत शत नमन स्वीकार कीजिए|*

बोलीं रुक्मिणी तत्काल सुन विनीत नारद वचन |
क्यों कर रहे उपहास हमारा हे नारद मुनि महन || (२०९)

भावार्थ: *नारद के विनीत वचन सुन तत्काल रुक्मिणी बोलीं, ' हे महामुनि नारद, आप हमारा उपहास क्यों कर रहे हैं?'*

कर रहे व्यर्थ गुणगान हमारा नहीं यह सत्य कथन |
बीत गए वर्ष पञ्चाशत हुए हमारा पानिग्रहन ||
पर नहीं कर सके हम सब आज तक प्रभु को प्रसन्न || (२१०)

भावार्थ: *हमारा गुणगान आप व्यर्थ में कर रहे हैं| यह कथन सत्य नहीं है| हमारे विवाह को पचास वर्ष बीत गए पर आज तक हम सब प्रभु को प्रसन्न नहीं कर सके|*

है सत्य नियत हैं हम अत्यंत रूपवती निधि वयुन |
पारङ्गत कला समस्त नहीं समान कोई इस भुवन || (२११)

भावार्थ: *यह अवश्य सत्य है कि हम अत्यंत रूपवती हैं| ज्ञान की निधि हैं| समस्त कलाओं में पारङ्गत हैं| इस पृथ्वी पर हमारे समान कोई नहीं है|*

करते रहते हरि सदा बृजवासी गोपियों को स्मरन |
लेटें जब शय्या हेतु शयन करते रहते अविरल रुदन || (२१२)
प्रायः पकड़ आँचल हमारा संभवतः देखते स्वप्न |
पुकारते हो कहाँ हे राधे आओ तुम मेरे आसन्न || (२१३)
नहीं होता सहन विरह अब क्या लाभ यह जीवन |
हे ललिते न छुपो न तरसाओ है तुम्हें मेरी पन || (२१४)

भावार्थ: *प्रभु सदैव बृजवासी गोपियाँ का स्मरण करते रहते हैं| जब शयन हेतु शय्या पर लेटते हैं तो अविरल रोते रहते हैं| संभवतः स्वप्न स्थित में हमारा आँचल पकड़ पुकारते हैं, ' हे राधे, कहाँ हो, मेरे समीप आओ| अब यह विरह सहन नहीं होता| जीवन का क्या लाभ? हे ललिते, छुपो नहीं, तरसाओ नहीं, तुम्हें मेरी सौगंध है|'*

पुकारते माँ यशोदा करुण स्वर में करते रुदन |
लगी अति भूख माँ दो तुरंत दही दूध माखन || (२१५)

कभी बुलाते श्रीदाम सुबल मधुमंगल हे स्नेहन् |
हो गया समय चराएं गौ हो कहाँ तुम सब चारन || (२१६)
हे प्रियजन आओ तुरंत है तुम बिन व्यर्थ जीवन |
नहीं कर सकता एक पल भी तुम बिन धारण यह तन || (२१७)
कर स्मरण पुकारते गैयाँ भर आते तब अश्रु नयन |
श्यामली धावली कालिंदी पिशांगी आओ तत्क्षन || (२१८)

भावार्थ: *करुण स्वर में रोते हुए माँ यशोदा को पुकारते हैं| हे माँ, मुझे बहुत भूख लगी है| मुझे तुरंत दही, दूध, मक्खन दो| कभी सखाओं को बुलाते हैं| हे सखा श्रीदाम, सुबल, मधुमंगल, गौ चराने का समय हो गया है, तुम सब सहपाठी कहाँ हो? हे प्रियगण, तुरंत आओ| तुम्हारे बिना जीवन व्यर्थ है| मैं इस शरीर को एक पल भी तुम्हारे बिना धारण नहीं कर सकता| अश्रु भरे नेत्रों से स्मरण कर गैयों को पुकारते हैं| हे श्यामली, धावली, कालिंदी, पिशांगी, तुरंत आओ|*

करते रहते विलाप पूर्ण रात्रि इस प्रकार भगवन |
भीगती शय्या अश्रु से होता विदीर्ण हमारा मन || (२१९)

भावार्थ: *इस प्रकार भगवान् पूरी रात्रि विलाप करते रहते हैं| अश्रु से शय्या भीग जाती है| हमारे हृदय विदीर्ण हो जाते हैं|*

होता यह दिन प्रतिदिन ब्रह्मऋषि नारद महन |
है नहीं हमारा कोई अस्तित्व हेतु कृष्ण भगवन || (२२०)

भावार्थ: *हे महात्मा ब्रह्मऋषि नारद, यह दिन प्रतिदिन होता है| भगवान् कृष्ण के लिए हमारा कोई अस्तित्व नहीं है|*

समझो हमें तुम राजमहिषी नाममात्र बिन गरिमन् |
करते रहते विहार बृज में सदैव श्री कृष्ण भगवन || (२२१)

भावार्थ: *आप हमें नाममात्र की रानियां बिना महत्व के समझो| श्री कृष्ण भगवान् तो सदैव बृज में विहार करते रहते हैं|*

हैं हम अत्यंत दुःखी नहीं कदापि प्रिय भू राजन |
रो पड़ीं रुक्मिणी कहते हुए यह दारुण वचन || (२२२)

भावार्थ: *हम अत्यंत दुःखी हैं| विश्व के सम्राट (कृष्ण) की कदापि प्रिय नहीं हैं| यह दर्द भरे वचन कहते हुए रुक्मिणी रो पड़ीं|*

तब बोलीं सुभग सत्यभामा सुनो सब मेरा कथन |
कल रात्रि पकड़ आँचल मेरा भरते हुए अश्रु नयन ||
पुकारते राधे राधे हुए प्रभु तब अचानक अचेतन || (२२३)
किए प्रयास अनेक मैंने तब आए हरि अवस्था चेतन |
बताओ तुम्हीं नारद मुनि करें कैसे हम उन्हें प्रसन्न || (२२४)

भावार्थ: *तब सौभाग्यवती सत्यभामा बोलीं, 'सब मेरा कथन सुनो| कल रात्रि नेत्रों में अश्रु भर मेरा आँचल पकड़ प्रभु राधे राधे कहते हुए अचानक मूर्छित हो गए| मैंने प्रभु को चेतन अवस्था में लाने के लिए अनेक प्रयास किए, तब वह जागे| हे मुनि नारद, तुम्हीं बताओ कि हम उन्हें कैसे प्रसन्न करें|'*

हो रही थी वार्ता आईं तभी रोहिणी देवाङ्गन |
किया जिन संग यशोदा दाऊ और कृष्ण का पालन || (२२५)

भावार्थ: *यह वार्ता हो रही थी तभी देवी रोहिणी आईं जिन्होंने यशोदा के साथ कृष्ण और बलराम का पालन किया था|*

ब्रह्मऋषि सहित सब रानी किए उनका अभिवादन |
हुए खड़े सब करबद्ध दिए उन्हें तब एक उच्च आसन || (२२६)

भावार्थ: *ब्रह्मऋषि (नारद) सहित सभी रानियों ने उनका अभिवादन किया| सब करबद्ध खड़े हो गए| उन्हें (बैठने के लिए) एक उच्च आसन दिया|*

आईं समक्ष रुक्मिणी पूछीं प्रश्न छू उनके चरन |
हे माँ संग यशोदा मैया रहीं आप नंदबाबा भवन ||
किए आप द्वि भ्राता बलराम कृष्ण लालन पालन || (२२७)

भावार्थ: *तब रुक्मिणी (जी) समक्ष आईं और चरण स्पर्श कर प्रश्न पूछा, 'हे माँ आप तो नंदबाबा के भवन में मैया यशोदा के साथ रहीं| आपने दोनों भाई बलराम और कृष्ण का लालन पालन किया|'*

जानतीं आप भली भांति राधा और समस्त गोपिन |
था वह प्रेम कैसा जो हैं वशीभूत आज भी भगवन || (२२८)

भावार्थ: *'आप तो भली भांति राधा और सभी गोपियों को जानती हैं| वह कैसा प्रेम था जो आज भी प्रभु (उनके प्रेम में) वशीभूत हैं?'*

जानना चाहतीं हम सब रानी महिमा बृज भुवन |
क्यों नहीं भुला पाए कृष्ण प्रेम उन बृज वासिन् || (२२९)

भावार्थ: *'हम सब रानियां बृज भूमि की महिमा जानना चाहती हैं| उन बृजवासियों का प्रेम कृष्ण क्यों नहीं भुला पाए?'*

बीत गए पचास वर्ष किए प्रभु हमसे पाणिग्रहन |
कर रहे हम सब सेवा भगवन तदनंतर पूर्ण तन मन || (२३०)

भावार्थ: *'प्रभु से विवाह हुए पचास वर्ष बीत गए| तब से हम भगवान् की पूर्ण तन मन से सेवा कर रहे हैं|'*

पुकारते रहते वह राधे ललिते विशाखे दशा स्वप्न |
होती नम शय्या अश्रु से बहते अविरल जो हरि नयन || (२३१)

भावार्थ: *'वह स्वप्न की दशा में राधे, ललिते, विशाखे पुकारते रहते हैं| प्रभु के नेत्रों से अविरल बहते अश्रु शय्या को गीला कर देते हैं|'*

करते वास द्वारका पर रहता बृज में उनका मन |
लगता हमें प्रेम हमारा रखता नहीं महत्व भगवन || (२३२)

भावार्थ: *'वास तो द्वारका में करते हैं परन्तु उनका मन बृज में रहता है| लगता है हमारे प्रेम का भगवान को कोई महत्व नहीं है|'*

ऐसा क्यों माते है क्या विशेषता उन बृजवासिन् |
वह तो अति निर्धन करें केवल पुष्प हरि को अर्पन || (२३३)

भावार्थ: *'हे माते, ऐसा क्यों है? इन बृज वासियों में क्या विशेषता है? वह तो अत्यंत निर्धन हैं| भगवान् को केवल पुष्प अर्पित करती हैं|'*

चराते गौ सम चारक स्वयं निर्धन बृज में भगवन |
पर यहां द्वारका में अति धनी चक्रवर्ती राजन || (२३४)

भावार्थ: *'चारक की भांति बृज में भगवान् गौ चराते थे| स्वयं भी निर्धन थे| परन्तु यहां द्वारका में अत्यंत धनी हैं, चक्रवर्ती सम्राट हैं|'*

क्या थीं वह घोर तांत्रिक जानें मन्त्र वशीकरन |
थी क्या विशेषता उनमें जो जीता हृदय भगवन || (२३५)

भावार्थ: *क्या वह घोर तांत्रिक थीं जो वशीकरण मन्त्र जानती थीं? उनमें क्या विशेषता थी जो प्रभु का हृदय जीत लिया?*

बतलाएं माँ आप महिमा   बृज और बृजवासिन |
हो रहा व्यग्र अति मन हमारा सुनने आपका कथन || (२३६)

भावार्थ: *हे माँ, आप बृज और बृजवासियों की महिमा बतलाएं| आपके कथन सुनने को हमारा मन अत्यंत व्यग्र है|*

कर स्मरण सखी यशोदा और अति प्रिय बृजवासिन |
हुआ अवरोधित कंठ रोहिणी भर आए अश्रु नयन || (२३७)

भावार्थ: *सखी यशोदा और अत्यंत प्रिय बृजवासियों का स्मरण कर रोहिणी का कंठ भर आया| उनके नेत्रों में अश्रु आ गए|*

हुआ जब हृदय कुछ शांत उनका पश्चात रुदन |
धर धैर्य हुईं तत्पर तब करने प्रभु लीला वर्णन || (२३८)

भावार्थ: *कुछ रोने के पश्चात जब उनका हृदय कुछ शांत हुआ तब धैर्य धारण कर प्रभु की लीलाओं का वर्णन करने को तत्पर हुईं|*

किया प्रवेश अचानक तब पद्मावती माँ कंस दुर्जन |
थी आयु वर्ष शत उनकी वृद्ध दुर्बल कूबड़ तन || (२३९)

भावार्थ: *तभी अचानक दुष्ट कंस की माँ पद्मावती ने प्रवेश किया| उनकी आयु सौ वर्ष की थी तथा शरीर अति वृद्ध, दुर्बल और कूबड़ था|*

सुन कर रहीं चर्चा रोहिणी बृज और बृजवासिन |
हो गईं क्रोधित वह लगी आग उनके तन और मन || (२४०)

भावार्थ: *रोहिणी बृज और बृजवासियों की चर्चा कर रहीं हैं, यह सुन वह क्रोधित हो गईं| उनके तन और मन में आग लग गई|*

है करना चर्चा व्यर्थ बृज बोलने लगीं कटु वचन |
यशोदा आदि बृजवासी हैं क्रूर दुष्ट और कृपन || (२४१)

भावार्थ: *वह कटु वचन बोलने लगीं, 'बृज की चर्चा करना व्यर्थ है| यशोदा आदि बृजवासी क्रूर, दुष्ट और कृपण हैं|'*

न कर सकें वध कंस कृष्ण छोड़े वसुदेव उन्हें नन्द भवन |
पर अभग नन्द यशोदा नहीं किए उचित प्रकार पालन || (२४२)

भावार्थ: *कंस वध न कर सकें इसलिए वसुदेव ने उन्हें नन्द के गृह छोड़ दिया| लेकिन अधन्य नन्द और यशोदा ने उनका उचित प्रकार से पालन नहीं किया|*

समझतीं यशोदा सदैव है कृष्ण पुत्र अन्य जनन |
करतीं प्रताड़ित नहीं देतीं कभी भर पेट भोजन || (२४३)

भावार्थ: *यशोदा सदैव उन्हें अन्य का जाया समझतीं थीं| उन्हें प्रताड़ित करतीं और भर पेट भोजन नहीं देतीं थीं|*

थे विवश कृष्ण हेतु क्षुधा करें चोरी दुग्ध माखन |
यदि पकड़े गए करते चोरी देतीं उन्हें दंड गहन || (२४४)

भावार्थ: *भूख के कारण कृष्ण दूध और माखन की चोरी करने के लिए विवश थे| यदि चोरी करते पकड़े जाते तो उन्हें वह घोर दंड देतीं|*

बाँध स्तम्भ दिखा छड़ी डरातीं वह सदय बाल कृश्न |
पड़ चरण करते विनय न मारो मैया लिए अश्रु नयन || (२४५)

भावार्थ: *खंभे से बांधकर छड़ी दिखाकर सुहृदय बालक कृष्ण को डरातीं थीं| नेत्रों में अश्रु लिए चरण पकड़ कर वह विनती करते थे कि मैया न मारो|*

जब आयु वर्ष पञ्च हुआ समय गुरुकुल हेतु शिक्षन |
चराने गौ संग दाऊ और ग्वाले भेजतीं उन्हें वन || (२४६)

भावार्थ: *पांच वर्ष की आयु जो शिक्षा हेतु गुरुकुल जाने का समय है, वह बलराम और ग्वालों के साथ गौ चराने उन्हें वन में भेजतीं थीं|*

नहीं दीं चप्पल हेतु पग कर सकें रक्षा कांटे कंकन |
करें बचाव घाम वर्षा नहीं दिया कभी छत्रन || (२४७)

भावार्थ: *उन्हें पैरों में पहनने के लिए चप्पल नहीं दीं जिससे कांटे और कंकणों से रक्षा कर सकें| छाता नहीं दिया ताकि वह धूप और वर्षा से बचाव कर सकें|*

किए सप्त वर्ष सेवा उन्होंने और वह दीं क्या कृष्न |
कुछ फटे वस्त्र ढकने तन और केवल अध पेट भोजन || (२४८)

भावार्थ: उन्होंने (यशोदा की) सात वर्ष सेवा की और उन्होंने कृष्ण को क्या दिया? शरीर ढकने के लिए कुछ विदीर्ण वस्त्र और आधा पेट भोजन|

बुलाओ गुरु गर्ग करें लेखा कितना देय वेतन |
यदि कोई ऋण यशोदा हम पर दें तुरंत उन्हें धन ||
पर यदि ऋण उन पर हैं हम क्षमाशील हिय महन || (२४९)

भावार्थ: *गुरु गर्ग को बुलाओ वह हिसाब किताब करें कि कितना वेतन (कृष्ण को) देय है| यदि हमारे ऊपर ऋण है तो हम तुरंत उन्हें धन दें| यदि ऋण उनके ऊपर है तो हमारा हृदय महान क्षमाशील है (अर्थात हम क्षमा कर देंगे)|*

हुईं क्रोधित रोहिणी सुन पद्मावती कटु वचन |
बोलीं हिय कठोर तुम्हारा सम पुत्र कंस दुर्जन ||
क्या समझ सको तुम निःस्वार्थ प्रेम बृजवासिन || (२५०)

भावार्थ: पद्मावती के कटु वचन सुन रोहिणी क्रोधित हो गईं और बोलीं, 'तुम्हारा हृदय दुष्ट पुत्र कंस के समान ही कठोर है| तुम बृजवासियों के निःस्वार्थ प्रेम को क्या समझ सकती हो?'

जानते हम सत्य है नहीं कंस तुम्हारे पति मिलन |
नहीं सुत उग्रसेन यद्यपि लिया तुम्हारे गर्भ जनन || (२५१)

किया संग तुमने कामुक द्रुमल नामक दुर्जन |
था कंस अवैधिक सुत और स्वयं तुम पति दंभिन || (२५२)

भावार्थ: *‘हम सत्य जानते हैं कि कंस तुम्हारे पति के मिलन से पुत्र नहीं है| वह उग्रसेन का पुत्र नहीं है यद्यपि तुम्हारे गर्भ से पैदा हुआ है| तुमने कामुक असुर द्रुमल का संग किया| कंस अवैधिक पुत्र था और स्वयं तुम पति घातिनी हो|’*

जो स्वयं नहीं निष्ठावत ओर पति और कुल महन |
क्या समझ सकेगा निष्ठा नन्द यशोदा बृजवासिन || (२५३)

भावार्थ: *‘जो स्वयं अपने पति और महान कुल के प्रति निष्ठावान नहीं है, वह नन्द, यशोदा और बृजवासियों की निष्ठा क्या समझ सकेगी?’*

यशोदा नन्द गोप गोपी बृज हैं सब भक्त कृष्न |
चली गईं सुन पद्मावती हो रुष्ट सुन सत्य वचन || (२५४)

भावार्थ: *'यशोदा, नन्द, बृज के गोप गोपी सभी कृष्ण के भक्त हैं|' यह सत्य वचन सुन रुष्ट होकर पद्मावती चलीं गईं|*

माँ रोहिणी का बृज लीला वर्णन

दीं माँ रोहिणी तब सुभग सुभद्रा यह निर्देशन |
करो द्वार बंद न करे प्रवेश कोई निंदक अशोभन || (२५५)

भावार्थ: *तब माँ रोहिणी ने सौभाग्यवती सुभद्रा को निर्देश दिया की द्वार बंद कर दो ताकि कोई अवांछनीय निंदक प्रवेश न करे|*

सुनो सब नृपाङ्गना नारायण मेरे गंभीर वचन |
करते प्रेम अतिसय कृष्ण से यशोदा नन्द राजन || (२५६)
समझें है जीवन व्यर्थ उनका बिन यशोदा-नंदन |
नहीं कर सकें धारण तन वियोग कृष्ण अपि एक क्षन || (२५७)

भावार्थ: *हे सब नारायण की महारानियों, मेरे गंभीर वचन सुनो| यशोदा और महाराज नन्द कृष्ण से अत्यंत प्रेम करते हैं| वह कृष्ण ने बिना अपना जीवन व्यर्थ समझते हैं| कृष्ण के वियोग में एक क्षण भी शरीर धारण नहीं कर सकते|*

जब ले उड़ी आसुरी पूतना बाल कृष्ण मध्य गगन |
हुईं मूर्छित यशोदा जैसे निकले प्राण उनके तन || (२५८)

भावार्थ: *जब आसुरी पूतना बाल कृष्ण (छै दिन के कृष्ण) को लेकर आकाश में उड़ गई थी तब यशोदा मूर्छित हो गईं थीं जैसे उनके शरीर से प्राण निकल गए हों|*

कर वध दुष्ट पूतना जब लौटे वापस भू भगवन |
किए कृष्ण स्पर्श यशोदा लौटीं तब अवस्था चेतन || (२५९)

भावार्थ: *दुष्ट पूतना का वध कर जब प्रभु (कृष्ण) पृथ्वी पर लौटे और (माँ) यशोदा का स्पर्श किया, तब वह चेतन अवस्था में आईं (अतः उनकी मूर्छा टूटी)|*

थे सम पुत्र वह हेतु प्रौढ़ गोपियाँ बृजवासिन |
संग गोपियाँ करें प्रेम अति गौ माँ बृज भगवन || (२६०)

भावार्थ: *प्रौढ़ बृजवासी गोपियों के लिए वह (कृष्ण) पुत्र समान थे| गोपियों के साथ बृज की गौ माएँ भी भगवान् को अत्यंत प्रेम करती थीं|*

देखें न जब तक कृष्ण नहीं पिलाएं दुग्ध गोवत्सन |
खग पशु कीट पतंग वृक्ष लता नदी जलाशय अचेतन ||
करें प्रेम कृष्ण इतना हूँ असमर्थ करूँ वर्णन || (२६१)

भावार्थ: *जब तक कृष्ण को देख न लें तब तक बछड़ों को दूध नहीं पिलाती थीं| पक्षी,पशु, कीट, पतंग, वृक्ष, लता, नदी, जलाशय जड़ भी कृष्ण से इतना प्रेम करते थे कि वर्णन करने में असमर्थ हूँ|*

करतीं प्रतीक्षा बृज गोपी पश्चात मथन माखन |
आएं कृष्ण संग सखा गृह मेरे चुपके विलोपन || (२६२)

भावार्थ: माखन बिलोने के पश्चात बृज की गोपियाँ प्रतीक्षा करती थीं कि कृष्ण उनके घर सखाओं सहित चुपके से चोरी करने आएं|

लेतीं रस लीला जाएं गृह यशोदा करें परिदेवन |
झिड़कें मैया जब कान्हा आएं अश्रु उनके नयन ||
दें दोष मैया है हिय पाषाण जो डाँटो शुचिमन || (२६३)

भावार्थ: *लीला में रस लेती हुई यशोदा के घर जाकर आक्षेप लगातीं| जब कन्हैया को मैया (यशोदा) झिड़कतीं तो नेत्रों में अश्रु लाकर माँ को ही दोष देतीं| कैसा पत्थर का हृदय है जो भोले भाले को डाँट रहीं हैं|*

एक बार किए चोरी कान्हा अपने ही घर संग सखन |
जब पकड़े माँ करने लगे नाटक नहीं की मैंने हरन || (२६४)
मल दिए मुख मेरे माखन सखा मिले मुझे प्रताड़न |
जाता चराने गौ कहाँ समय करूँ मैं यह अकृत्यन || (२६५)

भावार्थ: *एक बार कान्हा ने मित्रों के साथ अपने घर में ही चोरी की| जब माँ (यशोदा) ने पकड़ लिया तो नाटक करने लगे| मैंने चोरी नहीं की| मुझे प्रताड़ना मिले इस लिए मित्रों ने मेरे मुख पर माखन मल दिया| मैं तो गौ चराने जाता हूँ| मेरे पास यह दुष्कर्म करने का समय कहाँ है?*

कहें सब नहीं सुत आपका है भाव बैर आपके मन |
नहीं रहूँ घर आपके यदि समझो आप हूँ मैं तक्वन् || (२६६)

भावार्थ: सब कहते हैं कि मैं आपका पुत्र नहीं हूँ इसलिए आपके मन में (मेरे प्रति) बैर भाव है| यदि आप मुझे चोर समझतीं हैं तो मैं आपके घर नहीं रहूंगा|

हो गईं विदीर्ण यशोदा सुन बाल कान्हा वचन |
चिपटा लाल हृदय अपने करने लगीं वह रुदन ||
झरने लगा दुग्ध स्तन भीग गए सब वस्त्र कृष्न || (२६७)

भावार्थ: *बाल कन्हैया के यह वचन सुन (माँ) यशोदा विदीर्ण हो गईं| उन्होंने लाल को अपने हृदय से चिपटा लिया और रोने लगीं| उनके स्तन से दुग्ध झरने लगा जिससे कृष्ण के सब वस्त्र भीग गए|*

हंसने लगे कान्हा तब और कहने लगे मधुर वचन |
हो तुम अति सरल पवित्र माँ सर्वोत्तम त्रिभुवन || (२६८)
है यही सत्य माँ हाँ खाया संग सखा मैंने माखन |
पड़ पग मांगे क्षमा माँ हो तुम देवी क्षमादायिन ||
लिया चुपका स्व-वक्ष तब माँ यशोदा नटखट नंदन || (२६९)

भावार्थ: *तब कान्हा हंसने लगे और मधुर वचन बोले, 'तीनों लोकों में सर्वश्रेष्ठ माँ तुम अत्यंत पवित्र और भोली हो| हां, यह सत्य है कि मैंने ही सखाओं के साथ माखन खाया है| हे क्षमा की देवी, हम पग पकड़ तुझ से क्षमा माँगते हैं|' तब यशोदा माँ ने नटखट पुत्र को अपने वक्ष से चुपका लिया|*

कर रहीं जिस समय रोहिणी कृष्ण लीला वर्णन |
थे कृष्ण उस समय अति व्यस्त धर्म सभा काज राजन || (२७०)

भावार्थ: जिस समय (माँ) रोहिणी कृष्ण लीला का वर्णन कर रहीं थीं, उस समय कृष्ण राजकीय कार्य के लिए धर्म सभा में अति व्यस्त थे|

जाने सर्वज्ञ कृष्ण जो हो रहा रुक्मिणी भवन |
हुई इच्छा सुनें माँ यशोदा नंदबाबा धामन् || (२७१)

भावार्थ: *सर्वज्ञ कृष्ण जान गए कि रुक्मिणी के भवन में क्या हो रहा है? इच्छा हुई कि माँ यशोदा और नंदबाबा के गुणगान सुनें|*

मांग क्षमा मंत्रीगण हेतु कार्य अत्यंत गरिमन् |
चले अति वेग तुरंत ओर देवी रुक्मिणी भवन || (२७२)

भावार्थ: *अति आवश्यक कार्य के लिए मंत्रीगण से क्षमा मांग वह तुरंत तीव्र गति से देवी रुक्मिणी के भवन की ओर चल दिए|*

देखे करते त्यज सभा कृष्ण भ्राता रेवतीरमन |
चल दिए पीछे तुरंत समझ सर्वज्ञ कृष्ण भाव मन || (२७३)

भावार्थ: *कृष्ण सभा को छोड़ कर जा रहे हैं, यह भाई बलराम ने देखा| सर्वज्ञ कृष्ण के मनोभाव समझते हुए वह तुरंत पीछे चल दिए|*

देखा द्वार बंद समझ गए माँ रोहिणी प्रयोजन |
लगा कर्ण द्वार सुनने लगे वार्ता नहीं हो विघ्न || (२७४)

भावार्थ: *(रुक्मिणी देवी के भवन के) बंद द्वार देख वह माँ रोहिणी का आशय समझ गए| द्वार पर कान लगाकर वार्ता सुनने लगे ताकि विघ्न न हो|*

पहुंचे समीप मैया यशोदा एक दिन बाल भगवन |
होगी आयु पञ्च वर्ष संग दाऊ बोले मधुर वचन || (२७५)

भावार्थ: *पांच वर्ष की अवस्था में एक दिन बाल कृष्ण मैया यशोदा के समीप भाई बलराम के साथ पहुंचे और मधुर वचन बोले|*

चराने गैया संग दाऊ जाऊं मैं वन यह मन्मन् |
हैं गोप धर्म हमारा रखें ध्यान स्वयं गौ पावन || (२७६)

भावार्थ: *यह इच्छा है कि दाऊ के संग मैं वन में गैया चराने जाऊं| हम गोप हैं| हमारा धर्म है कि हम स्वयं पवित्र गौ का ध्यान रखें|*

बोलीं मैया नहीं नितांत जाओ तुम चराने गौ वन |
हैं अनगिनत सेवक हेतु इस कार्य नंदबाबा भवन || (२७७)

भावार्थ: *मैया बोलीं, 'यह आवश्यक नहीं है कि तुम वन में गौ चराने जाओ| नंदबाबा के महल में अनगिनत सेवक इस कार्य के लिए हैं|'*

है मार्ग पूर्ण कंकट और तुम्हारे कोमल चरन |
घाम अति गहन जला देगी वह तुम्हारे कमल सम तन || (२७८)

भावार्थ: *मार्ग काँटों से भरा है और तुम्हारे पग कोमल हैं| अति तपती धूप तुम्हारे कमल जैसे शरीर को जला देगी|*

जब नहीं छोड़ी हठ बलराम और यशोदा नंदन |
बोलीं माँ ले जाओ गौ पर नहीं जाओ दूर वन || (२७९)

भावार्थ: *जब बलराम और कृष्ण ने हठ नहीं छोड़ी तब माँ बोलीं, 'गौ ले जाओ पर वन में दूर नहीं जाना|'*

बिता कुछ क्षण संग गौ लौटो तुम दोनों तुरंत भवन |
ठहरो लाती पादुका और छत्र हेतु तुम्हारे रक्षन || (२८०)

भावार्थ: 'कुछ समय गऊओं के साथ बिताकर तुरंत घर लौटो| ठहरो, जूते और छाता तुम्हारी रक्षा हेतु लाती हूँ|'

रोक माँ बोले कान्हा सुन हे मैया सरल पावन |
हैं गोवत्स पूजनीय और कोमल सम हमारे तन || (२८१)
लाओ चार चार पादुका हेतु प्रत्येक गौ नंदन |
और साथ में एक एक छत्र हेतु प्रत्येक सकरुन || (२८२)

भावार्थ: *माँ को रोक कर कान्हा बोले, 'हे भोली और पवित्र माँ, सुनो| गाय के बछड़े पूजनीय हैं और उनके शरीर भी हमारे समान कोमल हैं| प्रत्येक बछड़े के लिए चार चार जूते लाओ और साथ में प्रत्येक कोमल (बछड़े) के लिए एक एक छाता लाओ|'*

नहीं मैं स्वामी उनका हूँ उनका सेवक अनुनयिन् |
हैं वह आधार हमारे नहीं वह निर्भर हम भूजन || (२८३)

भावार्थ: *मैं उनका स्वामी नहीं हूँ| उनका विनम्र सेवक हूँ| वह हमारे आधार हैं| वह हम प्राणियों पर निर्भर नहीं हैं|*

हो गईं अवाक्य यशोदा सुन बाल कान्हा गहन वचन |
है उचित पर जाऊं स्वयं और नन्द संग तुम द्वयन || (२८४)
हूँ व्याकुल मैं सोच विरह और पाओ जो कष्ट वन |
हो रहीं माँ चिंतित व्यर्थ बोले तब यशोदा नंदन || (२८५)
देखो माँ चलती जब यह गौ चमरी मध्य मार्ग वन |
बुहारती पथ स्व-पूँछ करती स्वच्छ सब कंकट कंकन || (२८६)
बैठें हम छाया वृक्ष यमुन तट नहीं जाएं अंदर वन |
लें आनंद देख गौ और गौवत्स चरते हरित तृन || (२८७)
बजा बांसुरी सायं कर एकत्रित गौ लौटेंगे भवन |
होगा नहीं कष्ट कोई अपितु हो आनंदित तन मन || (२८८)

भावार्थ: *बाल कन्हैया के यह गूढ़ वचन सुन यशोदा अवाक्य हो गईं| बोलीं, 'उचित है, पर मैं स्वयं और नंदबाबा तुम दोनों के साथ जाएंगे| तुमसे विरह और वन में कष्ट को सोच कर मैं व्यथित हूँ|' तब कृष्ण बोले, 'माँ आप व्यर्थ मैं ही चिंतित हैं| यह चमरी गौ अपनी पूँछ से पथ को बुहारती चलती हैं जिससे सब कांटे और कंकड़ स्वच्छ हो जाते हैं (अतः हट जाते हैं)| यमुना के तट पर वृक्ष की छाया में बैठेंगे, वन के अंदर नहीं जाएंगे| गौ और बछड़ों को हरी घास चरते हुए देख हम आनंद लेंगे| सायं (काल में) बांसुरी बजा कर गौ को एकत्रित कर घर लौटेंगे| कोई कष्ट नहीं होगा, अपितु हमारा तन और मन आनंदित होगा|*

गए तब संग दाऊ और सखा चराने गौ कान्हा वन |
देखते रहे नन्द यशोदा हुए न जब तक ओझल नयन || (२८९)

भावार्थ: *तब दाऊ एवं सखाओं के साथ कान्हा गौ चराने वन चले गए| नन्द और यशोदा उन्हें जब तक वह नेत्रों से ओझल नहीं हो गए, देखते रहे|*

बोलीं आगे रोहिणी सुनो ध्यान से मेरे वचन |
करते क्रीड़ा संग सखा होते आनंदित बाल कृष्न || (२९०)

भावार्थ: *रोहिणी आगे बोलीं, 'मेरे वचन ध्यान से सुनो| सखाओं के साथ क्रीड़ा करते बाल कृष्ण आनंदित होते थे|*

खोलते सब सखा अपनी अपनी पोटली समय भोजन |
चख आहार यदि स्वादिष्ट दें कृष्ण अपनी जूठन || (२९१)
हो आनंदित खाएं जूठन कान्हा प्रेम सहित भोजन |
जो रूप हरि यहां द्वारका थे सम सखा बृजवासिन || (२९२)

भावार्थ: *भोजन के समय सभी सखा अपनी अपनी (भोजन की) पोटली खोलते थे| आहार चख कर यदि स्वादिष्ट होता तो जूठन कृष्ण को देते थे| आनंदित हो कान्हा प्रेम सहित उस जूठन को खाते| जो यहां द्वारका में प्रभु रूप हैं, वह बृजवासियों के लिए सखा समान थे|*

रहते वेश गोप कृष्ण बृज पहन मोर पंख पट्टबंधन |
कंठ माल वैजयंती अधर वेणु छेड़ती तान रमन || (२९३)

भावार्थ: *बृज में कृष्ण गोप वेश में रहते थे| मोर पंख की पगड़ी, गले में वैजयंती माला, होंठों पर बांसुरी मधुर तान छेड़ती हुई, थी|*

सुन वाद्य बांसुरी कृष्ण हो जाते मंत्रमुग्ध सब वन |
खग पशु वृक्ष नदी गिरि आदि संग मनुज होते अचेतन || (२९४)

भावार्थ: *कृष्ण की बांसुरी की धुन सुन वन में सब मंत्रमुग्ध हो जाते थे| मनुष्यों के साथ पशु, पक्षी, वृक्ष, नदी, पर्वत आदि अचेतन हो जाते थे (अपनी सुध बुध भूल जाते थे)|*

करने लगतीं नृत्य गोपियाँ सब भूल सुध बुध तन |
जैसे कर दिया कोई मायाकार उन पर कार्मन || (२९५)

भावार्थ: *अपने शरीर की सुध बुध भूल सब गोपियाँ नृत्य करने लगतीं जैसे किसी जादूगर ने उनको सम्मोहित कर दिया हो|*

गोपियों के प्रेम की महिमा

कहूँ कुछ नाम गोपियाँ जो थीं अति प्रिय कृष्न |
नहीं यह नाम पूर्ण क्योंकि प्रिय सब बृज वसन || (२९६)
राधा ललिता विशाखा चन्द्रावली आदि व्रजांगन |
थीं समवयस्क कान्हा करतीं क्रीड़ा हो अबंधन || (२९७)

भावार्थ: *कुछ गोपियों के नाम कहूँ जो कृष्ण को अति प्रिय थीं| यह नाम (सूची) पूर्ण नहीं हैं क्योंकि (कृष्ण को) सभी बृजवासी प्रिय थे| राधा, ललिता, विशाखा, चन्द्रावली आदि बृज बृजवासी कान्हा के समवयस्क थीं और स्वछंद हो खेलकूद करतीं थीं|*

नहीं रह सकें एक क्षण बिन कृष्ण था प्रेम अति गहन |
साथ वृद्धि आयु होने लगे लज्जा संस्कार उत्पन्न || (२९८)

भावार्थ: *उनका प्रेम अत्यंत गहन था| वह कृष्ण के बिना एक क्षण भी नहीं रह सकतीं| आयु वृद्धि के साथ उनमें लज्जा के संस्कार आने लगे|*

हुआ विवाह इन गोपियाँ हुए पर-पुरुष कृष्न |
था प्रेम अति बालपन पर हुआ अब दुर्लभ मिलन || (२९९)

भावार्थ: *इन गोपियाँ का विवाह हो गया| कृष्ण इनके लिए पर-पुरुष हो गए| बालपन में अत्यंत प्रेम था पर अब मिलना दूभर हो गया|*

करतीं प्रयास हेतु कुलधर्म लज्जा अग्रज भयन |
रहें दूर कृष्ण नहीं करें भाव स्व-प्रेम प्रभावन || (३००)

भावार्थ: *कुलधर्म, लज्जा और बड़ों के डर से प्रयास करती थीं कि कृष्ण से दूर रहें और अपने प्रेम को प्रकाशित न करें|*

होता असंभव रोकना सुनें जब वेणुनाद नंदनंदन |
हो एकत्रित करने लगतीं वह वेणुमाधुरी वर्णन || (३०१)

भावार्थ: *जब नंदनंदन के बांसुरी की नाद सुनतीं, तब रोकना असंभव हो जाता| एकत्रित हो वह बांसुरी के माधुर्य का वर्णन करने लगतीं|*

होतीं अभिभूत प्रेम कृष्ण करतीं दर्शन बंद नयन |
त्रिभंग ललित रूप मंद मंद मुस्कान हर लेती मन || (३०२)

भावार्थ: *कृष्ण के प्रेम में अभिभूत हो वह बंद नेत्रों से उनके दर्शन करतीं| (बांसुरी वादन के कारण कृष्ण के शरीर पर पड़ी) तीन मुद्राएं वाला मोहक रूप, मंद मंद मुस्कान उनका हृदय हर लेती|*

देख कृष्ण रूप स्व-सखी करें वह उनका आलिंगन |
डूब जातीं आनंद सिंधु हो मग्न अपने इस स्वप्न || (३०३)

भावार्थ: *अपनी सखी में कृष्ण रूप देख वह उनका आलिंगन करने लगतीं| अपने इस स्वप्न में मग्न हो वह आनंद के सागर में डूब जातीं|*

होतीं व्याकुल जब पातीं नहीं कृष्ण खुले नयन |
डूब भाव प्रेम वह तड़पने लगतीं हो कैसे दर्शन || (३०४)

भावार्थ: *नेत्र खुलने पर जब कृष्ण को नहीं पातीं थीं, तो प्रेम भाव में डूब कर व्याकुल हो वह तड़पने लगतीं कि कैसे दर्शन हों?*

कर रहीं हम विफल लाभ इन्द्रिय दिए जो हमें भगवन |
है धिक्कार यह जीवन करने लगतीं वह यह चिंतन || (३०५)

भावार्थ: *जो इन्द्रियाँ भगवान् ने हमें दीं हैं उसके लाभ को हम विफल कर रहें हैं (अर्थात हम उचित इन्द्रिय लाभ नहीं उठा पा रहे हैं)| इस जीवन को धिक्कार है, वह ऐसा सोचने लगतीं|*

कहतीं परस्पर सुनो सखी करें जो प्रतिदिन दर्शन |
धारी विचित्र वेष श्याम सुन्दर मनहर नन्दनन्दन || (३०६)

छेड़ते मधुर तान बांसुरी हो खड़े एक पग मध्य वन |
क्या चर क्या अचर खिंचते सभी उन ओर हो मुग्ध मन || (३०७)
हैं वह सुभग निहारतीं जो वृहद कमल सम हरि नयन |
करतीं स्वीकार सत्कार हेतु कृष्ण प्रेम चितवन || (३०८)

भावार्थ: *परस्पर (विवाहित गोपियाँ) कहतीं, 'हे सखी, जो प्रतिदिन विचित्र वेष धारी मनोहर नन्द के पुत्र श्याम सुन्दर का दर्शन करतीं हैं; जो वन के मध्य में एक पग पर खड़े हो बांसुरी के मधुर तान छेड़ते हुए, जिससे सभी चर, अचर मुग्ध मन से उनकी ओर खिंचे चले आते हैं; उनके वृहद कमल समान नेत्रों को निहारतीं हैं; जो कृष्ण के प्रेम भरे चितवन का सत्कार स्वीकार करतीं हैं; वही सौभाग्यशाली हैं|*

हैं हम अभागन बसें वृंदावन पर हेतु कुल बंधन |
हैं असमर्थ कर सकें श्री कृष्ण का निर्विघ्न दर्शन || (३०९)

भावार्थ: *हम कितनी अभागन हैं कि वृंदावन में रहते हुए भी कुल बंधन के कारण श्री कृष्ण का निरंतर दर्शन करने में असमर्थ हैं|*

बोलीं रोहिणी सुनो यह सभी प्रियतम भगवन |
प्रेम गोपी प्रति कृष्ण रहित हेतु और अकारन || (३१०)

भावार्थ: *रोहिणी बोलीं, 'हे भगवान् की सभी प्रियतम (महारानियों), आगे सुनो| कृष्ण के प्रति गोपियों का प्रेम निःस्वार्थ और अकारण (स्वाभाविक) है|*

नहीं इच्छा दें कृष्ण उन्हें आभरण भवन और धन |
बस एक ही कामना करें वह सेवा निःस्वार्थ भगवन || (३११)

भावार्थ: *उनकी इच्छा नहीं हैं कि कृष्ण उन्हें आभूषण, भवन, धन (आदि भौतिक वस्तुएं) दें| उनकी तो एक ही अभिलाषा हैं कि वह निःस्वार्थ भगवान् की सेवा करें|*

करें सदैव कर्म हों सकें उनके इष्ट कृष्ण प्रसन्न |
करें सहन गहन दुःख यदि दे उन्हें यह लघु प्रशमन || (३१२)

भावार्थः *सदैव वही कार्य करतीं जिससे उनके इष्ट कृष्ण प्रसन्न हों| उनकी लघु प्रसन्नता के लिए वह अत्यंत दुःख भी सहन करतीं|*

था एक ही लक्ष्य बृजवासिन हों सुखी यशोदा-नंदन |
पर यह सत्य विभक्त लक्ष्य आपके द्वारका नृपाङ्गन || (३१३)

भावार्थः *बृजवासियों का एक ही लक्ष्य था कि कृष्ण सुखी हों| लेकिन द्वारका महारानियों, आपके लक्ष्य विभाजित हैं|*

करतीं आशा दें कृष्ण तुम्हें श्रेष्ठ वस्त्र आभरन |
उपहार आदि से सदैव रखें वह आपको प्रसन्न || (३१४)

भावार्थः *आपकी अभिलाषा रहती है कि कृष्ण गुणवत्त वस्त्र,आभूषण, उपहार आदि से सदैव आपको प्रसन्न रखें|*

दस दस सुत और एक एक सुता में मग्न आपके मन |
इस हेतु बटा हुआ प्रेम आपका अनगिनत प्रयोजन || (३१५)

भावार्थः *दस दस पुत्र और एक एक पुत्री में आपका हृदय मग्न रहता है| इस कारण आपका प्रेम अनेक लक्ष्यों में बटा हुआ है|*

पर वह कर त्याग पति सुत सुता आदि लौकिक बंधन |
करतीं कार्य सम दधि मंथन गौ दोहन गृह शोधन ||
सदैव बस करतीं रहतीं स्व-हृदय नंदनंदन चिंतन || (३१६)

भावार्थः *पर वह पति, पुत्र, पुत्री आदि सांसारिक बंधनों को त्याग कर, दही बिलोते, गौ दोहन करते, गृह स्वच्छ करते, अपने हृदय में सदैव बस कृष्ण का चिंतन करतीं रहतीं|*

पुकारतीं रहतीं गोविन्द माधव माधवेति कृष्न |
नन्दनन्दन हो कहाँ आओ तुरंत दो हमें तुम दर्शन || (३१७)

भावार्थ: *पुकारतीं रहतीं, 'हे गोविन्द, माधव, माधवेति, कृष्ण, नन्दनन्दन कहाँ हो? आओ और तुरंत तुम हमें दर्शन दो|*

था यथा प्रेम गोपिन अखंड युक्त पूर्ण समर्पन |
करो उपमा प्रेम अपना इस अर्पण प्रति भगवन || (३१८)

भावार्थ: *इस प्रकार गोपियों का प्रेम अखंड और पूर्ण समर्पित था| तुम भगवान् के प्रति अपने प्रेम की इस अर्पण से तुलना करो|*

जानो तुम है प्रेम कृष्ण अनन्य प्रति उनके भक्तगन |
नहीं सह सकते विरह उनका रखते सदा उन्हें मन || (३१९)
यद्यपि हुआ समय बहुत कृष्ण छोड़े हुए बृज भुवन |
पर पुकारतीं जब गोपियाँ करते वह तुरंत सुमिरन || (३२०)

भावार्थ: *तुम जानती हो कि कृष्ण का प्रेम उनके भक्तों के प्रति अनन्य है| वह उन्हें सदैव अपने हृदय में रखते हैं| उनका विरह नहीं सह सकते| यद्यपि कृष्ण को बृज भूमि छोड़े हुए बहुत समय हो गया है, परन्तु जभी भी गोपियाँ उन्हें पुकारती हैं, वह उनको तुरंत स्मरण करते हैं|*

सुनो वृतांत कथा थी एकदा शरद पूर्णिमा नक्तन् |
थे पूर्ण रूप सोम फैला रहे प्रभा सब ओर शोभन || (३२१)
थे हरे भरे वृक्ष लदे हुए सुगन्धित पुष्प वृंदावन |
रचें रासलीला संग सखिन हुई इच्छा कृष्ण मन || (३२२)
छेड़ दिए तब मधुर नाद बांसुरी बाल नंदनंदन |
सुन स्वर वेणु हुए तब सब गोपियाँ के मुग्ध मन || (३२३)

भावार्थ: *एक बार शरद पूर्णिमा की रात्रि का वृतांत सुनो| चन्द्रमा अपने पूर्ण रूप में सब ओर उज्ज्वल आभा फैला रहे थे| वृंदावन के हरे भरे वृक्ष सुगन्धित पुष्पों से लदे थे| सखियों के साथ रास लीला रचें, ऐसी इच्छा कृष्ण के मन में हुई| बाल कृष्ण ने बांसुरी पर मधुर नाद छेड़ दिया|बांसुरी का स्वर सुनते ही सब गोपियों के मन मुग्ध हो गए|*

उस समय कर रही थीं कुछ गोपी गौ माता दोहन |
कुछ औटा रहीं दुग्ध और कुछ पका रहीं भोजन || (३२४)
कुछ कर रहीं सेवा पति कुछ कर रहीं अलंकृत तन |
कुछ पिला रहीं दुग्ध शिशु कर रहीं कुछ गृह शोधन || (३२५)
सुन स्वर वेणु छोड़ सब कार्य दौड़ीं वह ओर वन |
नहीं कीं चिंता लोक लज्जा थे मंत्रमुग्ध उनके मन || (३२६)

भावार्थ: *उस समय कुछ गोपियाँ गौ माँ को दुह रहीं थीं, कुछ दूध औटा रहीं थीं, कुछ भोजन पका रहीं थीं, कुछ पतियों की सेवा कर रहीं थीं, कुछ श्रृंगार कर रहीं थीं, कुछ शिशुओं को दूध पिला रहीं थीं, कुछ घर की सफाई कर रहीं थीं| बांसुरी का स्वर सुनते ही सभी कार्य छोड़कर वह वन की ओर दौड़ीं| उनके हृदय मंत्रमुग्ध हो गए थे| लोक लज्जा की उन्हें चिंता नहीं थी|*

होतीं एकत्रित समीप कृष्ण सभी गोपियाँ निधिवन |
मधुर नाद वेणु कृष्ण से हों मंत्रमुग्ध सबके मन ||
होता आरम्भ तब रास करतीं सब गोपियाँ नृत्यन् || (३२७)

भावार्थ: *कृष्ण के समीप सभी गोपियाँ निधिवन में एकत्रित होतीं| कृष्ण की बांसुरी के मधुर नाद से सबके मन मंत्रमुग्ध हो जाते| तब रास आरम्भ होता| सभी गोपियाँ नृत्य करने करतीं|*

हो मुग्ध देख प्रेम सखिन करने लगते कृष्ण गायन |
करने लगते गायन सभी तब उच्च स्वर में संग कृष्न || (३२८)

भावार्थ: *सखियों के प्रेम को देखकर कृष्ण मुग्ध हो गायन करने लगते| तब उच्च स्वर में सभी (गोपियाँ) कृष्ण के साथ गाने लगते|*

नए नए राग शास्त्रीय में होता यह मधुर गायन |
कभी राग ध्रुपद कभी धमार जो हर ले सब के मन || (३२९)

भावार्थ: *नए नए शास्त्रीय रागों में यह मधुर गायन होता था| कभी राग ध्रुपद में कभी धमार में, सब के मन हर लेता था|*

करें प्रशंसा कह साधु साधु बाल यशोदा-नंदन |
है अति मधुर राग असंभव कर सकूं मैं अनुसरन || (३३०)

भावार्थ: *'साधु साधु' कह कर बाल यशोदा नंदन प्रशंसा करते| अत्यंत मधुर राग है, इसका अनुसरण करना मेरे लिए असम्भव है (अर्थात इतने मधुर राग में तो मैं भी नहीं गा सकता)|*

चलता रास पूर्ण रात्रि करते हुए नृत्य गायन |
थक जातीं गोपियाँ जब होता मुख युक्त स्वेदन ||
पौंछते सम कमल सुकोमल सुगन्धित स्व-हस्त कृष्न || (३३१)

भावार्थ: *नृत्य और गायन करते हुए रास पूर्ण रात्रि चलता| जब गोपियाँ थक जातीं और उनके मुख पर पसीना आ जाता, तब कृष्ण अपने कमल समान सुकोमल और सुगन्धित हाथों से (पसीना) पोंछते|*

देतीं मान प्रेम कृष्ण गोपियाँ कर तिरछी चितवन |
समझ सको तुम नारि नृप त्याग इन सहज गोबालन || (३३२)
किया परित्याग लोक लज्जा आर्य धर्म इन व्रतिन् ||
था केवल लक्ष्य एक पा सकें दर्शन स्व-इष्ट नन्दनन्दन || (३३३)

भावार्थ: अपनी तिरछी चितवन से वह कृष्ण के प्रेम का सम्मान करतीं| हे महारानियों, इन सहज गोपियों का त्याग तुम समझ सकती हो| इन भक्तिनों ने लोक लज्जा और आर्य धर्म का परित्याग कर दिया| उनका केवल लक्ष्य था कि वह अपने इष्ट नंदनंदन के दर्शन पा सकें|

कुछ मूर्ख करें विरोध यह रास लीला कृत्य भगवन |
कहे स्व-मुख श्री कृष्ण सुनो सब सुर असुर भूजन || (३३४)

है सर्वथा निर्दोष निर्मल बिन सुख काम यह मिलन |
हूँ असमर्थ चुका सकूं यह निष्काम ऋण गोबालन || (३३५)

भावार्थ: *कुछ मूर्ख प्रभु के इस रास लीला कृत्य का विरोध करते हैं| श्री कृष्ण ने अपने मुख से कहा है, 'हे, सभी देव, असुर और प्राणियों, यह मिलन सर्वथा निर्दोष, निर्मल और काम एवं सुख से रहित है| इन गोपियाँ के निष्काम ऋण को चुकाने में मैं असमर्थ हूँ|*

कर सकतीं तुम अवश्य मुझे उऋण सौम्य रूप शोभन |
पर है चाह रहूँ ऋणी हर काल जब तक रहे भुवन || (३३६)

भावार्थ: *हे सौम्य रूप गुणवत्ता (गोपियों), आप मुझे अवश्य उऋण कर सकतीं हैं, परन्तु मेरी इच्छा है कि जब तक पृथ्वी है, तब तक मैं आपका ऋणी रहूँ|*

इस प्रेम को समर्थारति करते वेद ग्रन्थ उद्बोधन |
हेतु इस निष्काम प्रेम हो जाते वशीभूत भगवन || (३३७)

भावार्थ: *वेद और ग्रन्थ इस (प्रकार के) प्रेम को समर्थारति कहते हैं| इस निष्काम प्रेम से भगवान् वशीभूत हो जाते हैं|*

करते शास्त्र विभिन्न प्रकार से विवरण प्रेम प्रकरन |
प्रेम स्नेह मान प्रणय राग अनुराग मोदन मोहन ||
रूढ़ अधिरूढ़ भाव महाभाव रति काम और मादन || (३३८)

भावार्थ: *शास्त्रों में प्रेम प्रकरण का विभिन्न प्रकार से वर्णन कोय आगया है| प्रेम, स्नेह, मान, प्रणय, राग, अनुराग, मोदन, मोहन,रूढ़, अधिरूढ़, भाव, महाभाव, रति, काम और मादन|*

हो अनुराग और महाभाव स्थिति तुम सब नृपाङ्गन |
है कठिन अष्टसात्विक भाव जिसमें हैं बृजवासिन || (३३९)

भावार्थ: *आप सब महारानियाँ अनुराग और महाभाव (प्रेम) स्थिति में हो| अष्टसात्विक भाव जिसमें बृजवासी (गोपियाँ) हैं, वह कठिन है|*

है प्रेम तुम्हारा समान स्थिति धूमायित धुवन |
है ढकी हुई प्रेम ज्वाला आप सब धूम आवरन ||
पर है रहित व्याम लपट पावक प्रेम इन गोबालन || (३४०)

भावार्थ: *तुम्हारा प्रेम धुंए से ढकी अग्नि के समान है| आपकी प्रेम ज्वाला धुएं के आवरण से ढकी हुई है| परन्तु इन गोपियाँ का प्रेम धुएं से रहित अग्नि की लपटों के समान है|*

प्रेम उनका अवश्य उच्चतम हेतु करें स्मरण भगवन |
समझ स्थिति श्री कृष्ण मन नहीं करो तुम परिदेवन || (३४१)

भावार्थ: *उनका प्रेम अवश्य ही उच्चतम है, इसलिए प्रभु (उन्हें) स्मरण करते हैं| श्री कृष्ण के मन की स्थिति समझ तुम (उन पर) आक्षेप नहीं लगाओ|*

राधा जी की सर्वोत्कर्षता

अब सुनो ध्यान से तुम महात्म्य प्रेम श्री राधा महन |
कर स्मरण राधा हो रहा रोमांचित मम तन और मन || (३४२ क)
गए एक समय हेतु गोचारण संग सब सखा नन्दनन्दन |
थीं कई सहस्त्र गौएँ श्वेत श्याम और स्वर्ण वर्न || (३४२ख)
होता प्रतीत देख झुण्ड गौ हो जैसे त्रिनदी मिलन |
गंगा यमुना सरस्वती हो रहीं प्रवाहित इस भुवन || (३४२ ग)
कई योजन धरा पर दिखते केवल गौ मुंड और तन |
हों खड़े कतार बृजवासी हेतु करने दर्शन कृष्न || (३४२ घ)
हेतु लज्जा झाँक झरोखे करतीं बृज वधुएं दर्शन |
देखे तब कृष्ण खड़ीं राधा आड़ झरोखा एक भवन || (३४२ ङ)
तिरछी चितवन से कर रहीं वह नंदनंदन का अर्चन |
मुसकुरा कर कृष्ण स्वीकारे तुरंत उनका अभिनन्दन || (३४२ च)
छूट गई वेणु हस्त गिर गया भू मोर मुकुट पर्न |
हुआ अस्त व्यस्त पीताम्बर होने लगे अचेत कृष्न || (३४२ छ)
संभालते पूछा मधुमंगल हुआ क्या सख्य नंदनंदन |
नहीं कुछ बस आई याद मैया बाबा बोले भगवन || (३४२ ज)

भावार्थ: भावार्थ: *अब ध्यान से तुम महान आत्मा राधा के प्रेम का महात्म्य सुनो| राधा का स्मरण कर मेरा तन और मन रोमांचित हो रहा है| एक समय अपनी सभी सखाओं के साथ कृष्ण गौ चारण के लिए गए| कई सहस्त्र गौएँ श्वेत, श्याम और स्वर्ण वर्ण की थीं| गऊएँ का झुण्ड ऐसा प्रतीत होता था जैसे तीनों नदियाँ, का मिलन हो रहा हो| गंगा, यमुना और सरस्वती इस भूमि पर प्रवाहित हो रहीं हों| कई योजन तक पृथ्वी पर केवल गऊओं का मुंड और तन ही दिखाई देता था| कतार लगाकर बृजवासी कृष्ण के दर्शन के लिए खड़े हो जाते थे| (लोक) लज्जा के कारण बृज की वधुएं झरोखों से (कृष्ण का) दर्शन करती थीं| तब कृष्ण ने एक घर के झरोखे में राधा को खड़ा देखा| वह तिरछी चितवन से कृष्ण का अर्चन कर रहीं थीं| कृष्ण ने तुरंत मुसकुरा कर उनका अभिवादन स्वीकार किया| (राधा को देखने के पश्चात) बांसुरी हाथ से छूट गई| मोर पंख मुकुट धरती पर गिर गया| पीताम्बर अस्त व्यस्त हो गया| कृष्ण अचेत होने वाले ही थे कि मधुमंगल ने उन्हें सम्हाला और पूछा, 'हे सखा*

कृष्ण, क्या हुआ?' तब भगवान् बोले, 'कुछ नहीं, बस मैया और बाबा की याद आ गई|'

गए गृह राधा सांय संग सब सखा स्वयं श्री कृष्न |
कहे कृष्ण आओ प्रातः संग सखिन हेतु गौ चारन || (३४३)

भावार्थ: *सांय को सब सखाओं के साथ श्री कृष्ण राधा के घर गए| कृष्ण ने प्रातः गौ चारण के लिए सखियों सहित आने को आमंत्रित किया|*

ली आज्ञा मात पिता और बोलीं राधा मधुर वचन |
आऊं संग सखिन प्रातः अवश्य मैं हेतु गौ चारन || (३४४)

भावार्थ: *माता पिता की आज्ञा लेकर तब राधा मधुर वचन बोलीं, 'मैं अवश्य ही प्रातः सखियों के साथ गौ चारण के लिए आऊँगी|'*

हुआ आरम्भ इस प्रकार राधा और कृष्ण मिलन |
एकदा संग ललिता आदि सखी थीं राधा उपस्थित वन || (३४५)
संग कृष्ण हो प्रफुल्लित कर रहीं नृत्य और गायन |
तभी लिपट गई एक मधुमक्खी राधा के कोमल चरन || (३४६)
भयभीत राधा करें प्रयास छोड़े यह कीट उनका तन |
देख राधा भीरु   मधुमंगल भगाया तुरंत भृङ्गन || (३४७)

भावार्थ: *इस प्रकार राधा और कृष्ण का मिलन आरम्भ हुआ| एक बार राधा ललिता आदि सखियों के साथ वन में थीं|कृष्ण के साथ वह नृत्य और गायन करने में आनंदित थीं| तभी एक मधुमक्खी उनके कोमल चरण से लिपट गई| राधा भयभीत हो उस कीट को अपने तन (चरन) से छुड़ाने का प्रयास करने लगीं| तब राधा को भयभीत देख मधुमंगल ने तुरंत मधुमक्खी को भगाया|*

पर करने लगा परिहास   हे राधे हुए दूर मधुसूदन |
न समझ सकीं परिहास राधा मानीं यह सत्य वचन || (३४८)

नहीं जानतीं मधुमक्खी का ही अन्य नाम मधुसूदन |
कहाँ गए तुम नंदनंदन कहते करने लगीं वह रोदन || (३४९)
देख करते विलाप राधा स्वयं करने लगे विलाप कृष्न |
भर गए नेत्र अश्रु द्वि और हो गए दोनों अचेतन || (३५०)

भावार्थ: *परन्तु वह (मधुमंगल) परिहास करने लगा, 'हे राधे, मधुसूदन दूर हो गए|' राधा परिहास नहीं समझ सकीं| उन्होंने यह वचन सत्य समझे|वह नहीं जानतीं थीं की मधुमक्खी का दूसरा नाम मधुसूदन है| 'नंदनंदन कहाँ गए', यह कहते रोने लगीं| राधा को विलाप करते देख स्वयं कृष्ण भी विलाप करने लगे| उन दोनों के नेत्र अश्रु से भर गए और दोनों ही अचेत हो गए|*

थे वहां राधिका प्रिय मैना और सुक प्रिय कृष्ण |
हैं कृष्ण यहीं छोड़ो चिंत बोलीं मैना राधा कर्ण || (३५१)
कहे सुक कर्ण कृष्ण हैं राधा प्रसन्न और चेतन |
उठ गए तब हो आनंदित दोनों सुन यह मधुर वचन || (३५२)

भावार्थ: *वहां राधा की प्रिय मैना और कृष्ण के प्रिय तोता थे| मैना ने राधा के कान में कहा, 'कृष्ण यहीं हैं| चिंता छोड़ो'| तोता ने कृष्ण के कान में कहा, 'राधा प्रसन्न और चेतन हैं (मूर्छा से जाग गईं हैं)|' यह मधुर वचन सुन दोनों आनंदित हो उठ गए|*

देख दशा प्रेम राधा करने लगे श्री कृष्ण चिंतन |
रह निकट हूँ असमर्थ कर सकूं शांत यह विरह वेदन || (३५३)
झुलसतीं सोच ताप भावी विरह राधा प्रणयिन् |
पर रहूँ जब दूर होतीं भाव विभोर कर मम चिंतन || (३५४)
करतीं आलाप हंस संग तामाल वृक्ष और सखिन |
अतः श्रेष्ठ रहूँ दूर यही एक पथ रहें वह प्रसन्न || (३५५)

भावार्थ: *यह राधा की दशा देख श्री कृष्ण विचार करने लगे, 'निकट रह कर उनका विरह वेदन शांत करने में मैं असमर्थ हूँ| प्रिय राधा भावी विरह के ताप को सोच कर झुलसती रहतीं हैं| लेकिन जब दूर रहता हूँ तो मेरे स्मरण से भाव विभोर हो जातीं हैं|*

हंस कर तामाल (तेज पत्ता) वृक्ष और सखियों के साथ आलाप करतीं हैं| अतः उनको प्रसन्न रखने का श्रेष्ठ मार्ग उनसे दूर होना है|'

सोच यह करें प्रवास दूर हुई यह भावना उत्पन्न |
था यह भी एक हेतु किए प्रस्थान मथुरा नंदनंदन || (३५६)

भावार्थ: *यह सोच दूर वास करने की (श्री कृष्ण को) भावना उत्पन्न हुई| मथुरा प्रस्थान करने का कृष्ण का यह भी एक कारण था|*

बोलीं रोहिणी सुनो सब हैं सागर रस श्री कृष्न |
हैं वह स्वयं रस और रसिक जानो यह सत्य वचन || (३५७)

भावार्थ: *रोहिणी बोलीं सब सुनो , 'श्री कृष्ण रस के सागर हैं| वह स्वयं ही रस और रसिक (रस का आस्वादन करने वाले) हैं| इस सत्य वचन को जानो|*

हैं वह एक ही काल एक-रस और अनेक-रस वर्पन् |
हैं स्थित एक-रस जब विद्यमान साकार त्रिभुवन || (३५८)
वह सर्वज्ञ पूर्णतम प्राज्ञ ज्ञातज्ञ सभी प्रवर्तन |
पर जब हों रूप अनेक-रस करें व्यवहार सम भूजन || (३५९)
करें आस्वादन रस बन भोक्ता समझें यही सब जन |
पर करें स्वांग हैं अनभिज्ञ भाव आनंद उनके निषेवन || (३६०)

भावार्थ: *वह (श्री कृष्ण) एक ही समय में एक-रस और अनेक-रस रूप में हैं| तीनों लोकों में साकार रूप में वह एक-रस रूप में विद्यमान हैं| तब वह सर्वज्ञ हैं, पूर्ण हैं, बुद्धिमान हैं और सभी घटनाओं के ज्ञाता हैं| लेकिन जब अनेक- रस रूप में होते हैं तो प्राणियों के सामान व्यवहार करते हैं| भोक्ता बन रस का आस्वादन करते हैं, यही प्राणियों की समझ में आता है| परन्तु ऐसा स्वांग करते हैं कि उनकी सेवा से जो (प्राणियों को) आनंद की प्राप्ति होती है, उससे अनभिज्ञ हैं|*

कर रहीं अति आनंद प्राप्त राधा देख निरूपन |
लीला गुण आस्वादन मधुर स्वर वेणु बाल नंदनंदन || (३६१)

हैं अनभिज्ञ वह इन सब से कर रहे ऐसा प्रदर्शन |
पर थीं विद्यमान सब मधुरिमायें हिय श्री कृष्न || (३६२)
हेतु वर्णन यह भाव राधा लिए अवतार चैतन्य वर्पन् |
उसी काल हुआ विशाखा सखी राधा का अवतरन || (३६३)
श्री राय रामानंद स्वरूप में पाईं वह नया तन |
दिए प्रेम शिक्षा तट गोदावरी वह चैतन्य श्रीमन || (३६४)

भावार्थ: *बाल कृष्ण के स्वरुप, लीला, गुण और उनकी बांसुरी के मधुर स्वर का आस्वादन कर राधा को अत्यंत आनंद की प्राप्ति हो रही है, इस सबसे वह अनभिज्ञता का प्रदर्शन कर रहे थे| लेकिन यह सब मधुरिमायें श्री कृष्ण के हृदय में विद्यमान थीं| राधा के इस भाव को वर्णन करने उन्होंने चैतन्य रूप में अवतार लिया| उसी समय राधा की सखी विशाखा ने श्री राय रामानन्द के रूप में जन्म लिया| उन्होंने चैतन्य (महाप्रभु) को गोटावरी तट पर प्रेम की शिक्षा दी|*

देखें एक तन ही एक-रस और अनेक-रस का संमेलन |
रुप अवतार गौर हरि चैतन्य महाप्रभु शचीनंदन || (३६५)
कृष्ण एक-रस और अनेक-रस राधा-कृष्ण संधि तन |
लिए इस हेतु अवतार महाप्रभु देने जग प्रेम संवदन || (३६६)

भावार्थ *:एक ही शरीर में एक-रस और अनेक-रस का मिश्रण गौरहरि चैतन्य महाप्रभु शचीनंदन रूप अवतार है| कृष्ण एक-रस और राधा-कृष्ण का संयुक्त शरीर अनेक-रस है| विश्व को प्रेम का सन्देश देने हेतु महाप्रभु अवतरित हुए|*

नारद जी को भगवान् कृष्ण का वरदान

कर रहीं इस प्रकार रोहिणी लीला कृष्ण वर्णन |
हो विस्मित अत्यंत कर रहीं सब नृपाङ्गना श्रवन || (३६७)

भावार्थः *इस प्रकार रोहिणी (माँ) कृष्ण लीला का वर्णन कर रहीं थीं| सभी महारानियाँ अत्यंत चकित हो यह सुन रहीं थीं|*

हो गया हिय द्रवित माँ रोहिणी कर लीला स्मरन |
उधर खड़े द्वार सुन रहे कथा बलराम और कृष्न || (३६८)
करने लगे रुदन हरि कर स्मरण प्रेम बृजवासिन |
हुए संकुचित पग हस्त और रोमांचित उनका तन || (३६९)
आईं मिलने भाभी रुक्मिणी तभी सुभद्रा बहन |
देख हलधर और कृष्ण द्वार पर करते लीला श्रवन || (३७०)
हुईं अत्यंत भावुक वह भी देख दशा भ्राता कृष्न |
करने लगे सब प्रशंसा महिमा प्रेम बृजवासिन || (३७१)

भावार्थः *प्रभु बृजवासियों के प्रेम को स्मरण कर रोने लगे| उनके पग और हस्त संकुचित हो गए| शरीर रोमांचित हो गया| तभी बहन सुभद्रा भाभी रुक्मिणी से मिलने आईं| बलराम और कृष्ण को द्वार पर खड़े लीला श्रवण करते देखा| वह भी भाई कृष्ण की दशा देख कर अत्यंत भावुक हो गईं| सभी तब बृजवासियों के प्रेम के महिमा की प्रशंसा करें लगे|*

हो अति भावुक रोहिणीं करने लगीं प्रभूत रुदन |
हुआ अवरुद्ध कंठ हुईं असमर्थ करें आगे वर्णन || (३७२)

भावार्थः *अत्यंत भावुक होकर रोहिणी फूट फूट कर रोने लगीं| उनका गला अवरुद्ध हो गया| आगे वर्णन करने में असमर्थ हो गईं|*

सहम गए ब्रह्मऋषि नारद देख यह दृश्य अति वेदन |
है यह दोष मेरा जो किया प्रकट प्रश्न हिय स्पृशन् || (३७३)

करो क्षमा अपराध मेरा हे त्रिलोक प्रभु नारायन |
बोले हंसकर हरि निःसंदेह आप ही हैं मूल कारन || (३७४)
पर हूँ मैं अति प्रसन्न किए इस विषय का उदघाटन |
मांगिए वर इच्छित हूँ मैं तत्पर करूँ पूर्ण मन्मन् || (३७५)

भावार्थः *इस अत्यंत भावुक दृश्य को देखकर ब्रह्मऋषि नारद सहम गए| (सोचने लगे) यह मेरा ही दोष है कि मैंने हृदय को छूने वाला प्रश्न पूछा| हे' त्रिलोक के स्वामी नारायण, आप मेरा अपराध क्षमा करें|' तब हंसकर प्रभु बोले, 'निःसंदेह आप ही इस के मूल हेतु हैं| परन्तु इस विषय को लाने के लिए मैं आपसे अत्यंत प्रसन्न हूँ| जो भी आपकी इच्छा हो, वर मांगिए| मैं आपकी इच्छा पूर्ण करूंगा|'*

सुन यह मधुर वचन प्रभु हो गए मुनि नारद प्रसन्न |
बोले तब वह करबद्ध करते हुए श्री कृष्ण को नमन || (३७६)
प्रभु यदि प्रसन्न आप तो कीजिए पूर्ण यह मन्मन् |
हों स्थापित निकट काल मनोहर विग्रह निरूपन || (३७७)
आप संग बहन सुभद्रा और भाई रोहिणी-नन्दन |
जिनके दर्शन से हो जाएं दूर अघ और तरें भूजन || (३७८)

भावार्थः *प्रभु के यह मधुर वचन सुनकर मुनि नारद प्रसन्न हो गए| करबद्ध प्रभु को नमन करते हुए तब वह बोले, 'हे प्रभु यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मेरी इच्छा पूर्ण कीजिए| आप निकट भविष्य में बहन सुभद्रा और भाई बलराम के साथ मनोहर विग्रह रूप में स्थापित होइए जिनके दर्शन से सब पाप दूर हो जाएं तथा प्राणी मोक्ष प्राप्त करें|*

हंसकर कह तथास्तु बोले हरि हो अवश्य यही महन |
क्यों भूल गए आप साथ में लेना नाम चक्र सुदर्शन || (३७९)
करो प्रतीक्षा कुछ काल होगा अवश्य यह सत्य वचन |
हूँ स्थापित स्वरुप जगन्नाथ संग सुभद्रा और सङ्कर्षन || (३८०)

भावार्थ: *हंसकर तब प्रभु ने तथास्तु कहा, 'हे महात्मा, यह अवश्य होगा| आप सुदर्शन चक्र को क्यों भूल गए? कुछ काल प्रतीक्षा करो,मेरा वचन सत्य होगा| मैं सुभद्रा और बलराम के साथ जगन्नाथ रूप में स्थापित होऊंगा|*

जगन्नाथपुरी तट भरु नीलाद्रि गिरि संग सुदर्शन |
होऊं स्थापित कर सकें दर्शन जन हेतु निर्मोचन || (३८१)

भावार्थ: *जगन्नाथपुरी में सागर तट नीलाद्रि पर्वत पर सुदर्शन (चक्र) के साथ स्थापित होऊंगा| प्राणी मोक्ष हेतु दर्शन कर सकेंगे|*

किए क्यों कृष्ण चर्चा यहां विषय चक्र सुदर्शन |
कहें चैतन्य महाप्रभु समझो इसे धर ध्यान भूजन || (३८२)
प्रिय आयुध हरि अर्थ सुदर्शन अति सुन्दर दर्शन |
कर प्रदान दिव्य दृष्टि करता यह हृदय का शोधन || (३८३)
हों तब सत्य दर्शन बलराम सुभद्रा और नारायन |
अन्यथा करें जन केवल काष्ठ विग्रह का ही दर्शन || (३८४)

भावार्थ: *यहां सुदर्शन चक्र की चर्चा कृष्ण ने क्यों की? चैतन्य महाप्रभु कहते हैं कि हे प्राणियों, इसे ध्यान से सुनो| नारायण का प्रिय आयुध सुदर्शन का अर्थ है, अति सुन्दर दर्शन| यह दिव्य दृष्टि प्रदान कर हृदय को शुद्ध करता है जिससे बलराम, सुभद्रा और नारायण के साक्षात दर्शन होते हैं| अन्यथा प्राणी केवल काष्ठ की मूर्तियों का ही दर्शन करता है|*

कहें महाप्रभु है यह अति सुन्दर जगन्नाथ वर्णन |
पाए इहलोक सुख परलोक मोक्ष करे जो जन श्रवन || (३८५)

भावार्थ: *महाप्रभु कहते हैं कि यह जगन्नाथ का वर्णन अति सुन्दर है| जो प्राणी इसका श्रवण करेगा उसे इहलोक में शान्ति और परलोक (मरण पश्चात) में मोक्ष की प्राप्ति होगी|*

श्री कृष्ण के पश्चात बृजवासियों की दशा

गए जब श्री कृष्ण मथुरा संग श्री रोहिणी-नन्दन |
डूबा सम्पूर्ण बृज विरह नहीं सुध किसी तन मन || (३८६)

भावार्थ: *जब बलराम के साथ श्री कृष्ण मथुरा गए तब सम्पूर्ण बृज विरह में डूब गया| किसी को अपने मन और तन की सुध नहीं थी|*

गोप गोपियों संग गौ और वत्स छोड़े अपना भोजन |
नहीं चहचहाते खग नहीं खिलते पुष्प अब लता वन || (३८७)

भावार्थ: *गोप, गोपियों के साथ गौ और बछड़ों ने अपना भोजन छोड़ दिया| पक्षी नहीं चहचहाते और वन में लताओं में पुष्प नहीं खिलते|*

तापित विरह अग्नि   करते   रहते   बृजवासी रोदन |
कर रहे किसी प्रकार वह असहाय अपने प्राण धारन || (३८८)

भावार्थ: *विरह अग्नि में तपते हुए बृजवासी रोते रहते| वह असहाय किसी प्रकार अपने प्राण धारण किए हुए थे|*

करते रुदन गहन हो जाते जब बृजवासी अचेतन |
था केवल यही समय पा सके जब शान्ति उनका मन || (३८९)
थी स्थिति अति दयनीय राधा थीं वह मरणासन्न |
थी यही दशा कृष्ण मथुरा तड़पते थे विरह प्रियजन || (३९०)
राधा ललिता विशाखा आओ तुम सब मेरे समासन्न |
लिए अश्रु नेत्र होते मूर्छित पुकारते   नाम नंदनंदन || (३९१)
है यही स्थिति अब यहां द्वारका हृदय श्री भगवन |
सुनें जब भी चर्चा बृज कर रुदन हो जाते अचेतन || (३९२)

भावार्थः *बहुत रोते हुए जब बृजवासी मूर्छित हो जाते, तब केवल यही समय था जब उनका मन शान्ति पाता था| राधा की स्थिति अत्यंत दयनीय थी| वह मरणासन्न थीं| यही दशा कृष्ण की मथुरा में थी| वह अपने प्रियजनों के विरह में तड़प रहे थे| नेत्रों में अश्रु लिए कृष्ण नाम पुकारते और मूर्छित हो जाते, 'राधा, ललिता, विशाखा मेरे समीप आओ|' अब यही स्थिति श्री भगवान् की द्वारका में है| जब भी बृज की चर्चा होती, रोते हुए मूर्छित हो जाते|*

होता शोक उद्धव बलराम नारद आदि देख दशा कृष्न |
नारद से कहते बजा वीणा करो दूर कृष्ण का वञ्चन || (३९३)

भावार्थः *उद्धव,बलराम नारद आदि को कृष्ण की दशा देख दुःख होता| नारद जी से वह कहते कि आप वीणा बजाकर कृष्ण का मोह दूर कीजिए|*

नहीं यह उचित बोलते तब ब्रह्मऋषि नारद महन |
करेंगे हठ जाएं वृन्दावन आएं जब स्थिति चेतन || (३९४)
नहीं संभव रोक सके उन्हें हम हैं वह दृढ़ मनस्विन |
रहेंगे बृज सदैव नहीं लौटेंगे जानो यह सत्य वचन || (३९५)
अतः करो निर्णय कर विचार भली भांति सब अवन |
करने लगे विचार करें क्या सुन मुनि नारद वचन || (३९६)

भावार्थः *महात्मा ब्रह्मऋषि नारद बोलते, 'यह उचित नहीं होगा| चेतन अवस्था में आते ही (कृष्ण) वृन्दावन जाने की हठ करेंगे| वह दृढ़ मनोवृति के हैं, उन्हें रोकना असंभव होगा| (तब) सदैव बृज में ही रहेंगे| मेरे इन वचनों को सत्य मानो| अतः भली भांति हर कोण से विचार कर निर्णय लो|' मुनि नारद के यह वचन सुन सब विचार करने लगे कि अब क्या करें?*

बोले बलराम सुनो उद्धव ध्यान से मेरे गहन वचन |
जाओ बृज दो सन्देश आएंगे शीघ्र वहां कृष्न || (३९७)
होंगे साथ में बलराम रहेंगे कुछ दिन वहां द्वयन |
रह कुछ काल तब लौटेंगे हम द्वारका समझा कृष्न || (३९८)

भावार्थ: *बलराम बोले, ' हे उद्धव मेरे गंभीर वचनों को ध्यान से सुनो| तुम बृज जाओ और सन्देश दो कि कृष्ण शीघ्र ही वहां आएंगे| साथ में बलराम होंगे| दोनों वहां कुछ दिन रहेंगे| कुछ समय (बृज में) रहकर कृष्ण को समझा कर हम वापस द्वारका लौटेंगे|'*

सुन प्रसंग यह हुआ दुःखी हृदय उद्धव बुद्धिवन |
बोले तब करबद्ध सुनो हे रोहिणी-नन्दन मेरे वचन || (३९९)
मानो सत्य नहीं करेगा विश्वास कोई मेरा कथन |
कुछ वर्ष पूर्व गया बृज थे मथुरा में श्री कृष्न || (४००)
कहा मैंने तब बृजवासिन आएँगे शीघ्र कृष्न |
यद्यपि की विनती कई बार पर नहीं गए वहां भगवन || (४०१)
देख मुझे हो क्रोधित कहेंगे देखो आया अनृतिन् |
बोले वचन तब नारद नहीं उचित जाएं उद्धव महन || (४०२)
होगा यही उचित जाएं बृज स्वयं रोहिणी-नन्दन |
सुन वचन मुनि बोले हलधर नहीं कोई लाभ चिंतन || (४०३)

भावार्थ: *यह प्रसंग सुन बुद्धिमान उद्धव जी का हृदय दुःखी हुआ| करबद्ध बोले, 'हे बलराम, मेरे वचन सुनो| यह सत्य मानो कि मेरे कथन का कोई विश्वास नहीं करेगा| जब कृष्ण मथुरा में थे तो मैं (बृज) गया था| तब मैंने बृजवासीयों को कहा था कि कृष्ण शीघ्र आएंगे| यद्यपि मैंने कई बार विनती की, परन्तु प्रभु नहीं गए| मुझे देख (बृजवासी) क्रोधित हो जाएंगे और कहेंगे कि झूठा आ गया|' तब नारद जी बोले, 'महात्मा उद्धव जाएं, यह उचित नहीं है| स्वयं बलराम बृज जाएं, यही उचित होगा|' मुनि (नारद) के वचन सुन हलधर बोले, 'इस विचार का कोई लाभ नहीं है|'*

कहा मैंने कई बार चलो बृज साथ मेरे नंदनंदन |
टाला हर बार बनाया कोई न कोई पर्युपासन || (४०४)
यद्यपि कोमल पर हुआ क्यों पाषाण हृदय कृष्न |
नहीं समझ पाता क्यों नहीं जाता वह बृज भुवन || (४०५)
नहीं लाभ जाए वहां कोई कहा सत्य जो उद्धव महन |
नहीं करेगा विश्वास वहां कोई हमारे यह कथन || (४०६)

छोड़ो यह निर्णय कृष्ण पर जाए जब उसका मन्मन् |
आईं तब सुभद्रा वहां हो रहा था जहां यह चिंतन || (४०७)

भावार्थ: *मैंने कृष्ण से कई बार कहा कि मेरे साथ बृज चलो| पर प्रत्येक बार कोई न कोई बहाना बना टाल दिया| यद्यपि कृष्ण का हृदय कोमल है, परन्तु इस हेतु क्यों पाषाण बन गया है? वह बृज भूमि क्यों नहीं जाना चाहता, मैं नहीं समझ पाता| वहां (बृज) कोई जाए इसका कोई लाभ नहीं, यह महात्मा उद्धव ने सत्य ही कहा है| हमारे कथन पर वहां कोई विश्वास नहीं करेगा| यह निर्णय कृष्ण पर ही छोड़ो| जब उसकी इच्छा हो, जाए| यह विचार विमर्श जहां हो रहा था, वहां तब सुभद्रा आईं|*

देख दुःखी चिंतित सब और सुन दुःख भरे उनके वचन |
न करो चिंता बोलीं वचन तब मधुर सुभद्रा बहन || (४०८)
जाऊँगी मैं स्वयं शीघ्र बृज कहूँ आपके कथन |
बैठ गोद माँ यशोदा कहूंगी आ रहे आपके नंदन || (४०९)
जा गृह हर गोपी कहूंगी करो तैयारी अभिनन्दन |
आ रहे थे संग पर रोके उन्हें मार्ग में कई राजन || (४१०)
कर रहे प्रदान भेंट बहु कर उनका अर्चन पूजन |
होगा दूर विरह और होंगे बृजवासी प्रसन्न || (४११)
लाना तुम कृष्ण तब मिलें वह सभी बृजवासिन |
रह कुछ दिन ले आऊँगी मैं वापस द्वारका भगवन || (४१२)

भावार्थ: *सब को चिंतित और दुःखी देखकर एवं उनके दुःख भरे वचन सुनकर तब सुभद्रा बहन मधुर वचन बोलीं, ' आप चिंता न करो| मैं स्वयं बृज जाऊँगी और आपके कथन कहूंगी| माँ यशोदा की गोद में बैठकर कहूंगी कि आपके पुत्र आ रहे हैं| प्रत्येक गोपी के घर जाकर कहूंगी कि स्वागत की तैयारी करो| (कृष्ण) मेरे साथ ही आ रहे थे लेकिन मार्ग में कई राजाओं ने रोक लिया| उनका पूजन अर्चन कर वह उन्हें अनेक भेंट दे रहे हैं| (यह सुनकर) बृजवासीयों का विरह दूर होगा और वह प्रसन्न होंगे| तब आप कृष्ण को लेकर आ जाना| कुछ दिन रहकर मैं उन्हें द्वारका वापस ले आऊंगी|*

कीजिए प्रबंध दाऊ एक रथ हों अश्व तीव्र चलन |
जाऊं तुरंत निकट माँ यशोदा धाम वृंदावन || (४१३)

करो चर्चा यहां विरह बृजवासी तुम समक्ष कृष्न |
बजाएं मुनि नारद वीणा हों जब कृष्न अचेतन || (४१४)
करेंगे हठ जाएं बृज जागेगी जब मूर्छा भगवन |
कर प्रोत्साहित उन्हें आना सब संग उनके वृंदावन || (४१५)

भावार्थ: *दाऊ, एक तीव्र गति से चलने वाले अश्व के रथ का प्रबंध कीजिए| मैं तुरंत मैया यशोदा के पास यशोदा धाम जाउंगी| यहां आप कृष्ण के समक्ष ब्रजवासियों के विरह की चर्चा करो| जब कृष्ण अचेत हो जाएं तब मुनि नारद वीणा बजाएं| मूर्छा जागने पर भगवान् बृज जाने की हठ करेंगे| उन्हें प्रोत्साहित कर उनके साथ आप सब वृंदावन आ जाना|*

किया सबने सुभद्रा बहन के कथन का तब समर्थन |
किए प्रबंध दाऊ एक रथ युक्त तीव्र गामी अर्वन् || (४१६)
चलीं सुभद्रा तब बृज हो हिय प्रसन्न मैया मिलन |
किए उद्धव तब चर्चा विरह बृजवासी समक्ष कृष्न || (४१७)
हुए भावुक भर आए अश्रु नेत्र हरि कर राधा स्मरन |
करते विलाप हुए अचेत करें क्यों इतना दुःख सहन || (४१८)

भावार्थ: *सबने तब बहन सुभद्रा के कथन का समर्थन किया| दाऊ ने तीव्रगामी अश्व युक्त एक रथ का प्रबंध किया| तब सुभद्रा हृदय में यशोदा मैया से मिलन की प्रसन्नता धारण करते हुए बृज को चलीं| तब उद्धव ने श्री कृष्ण के समक्ष ब्रजवासियों के विरह की चर्चा की| प्रभु भावुक हो गए| राधा का स्मरण कर उनके नेत्र अश्रुओं से भर गए| 'इतना दुःख वह क्यों सह रही हैं', ऐसा विलाप करते हुए अचेत हो गए|*

बजा वीणा तब मुनि नारद किए दूर उनका अचेतन |
जागते ही करने लगे हठ जाएं अभी वह वृंदावन || (४१९)
किया समर्थन प्रस्ताव हरि उद्धव दाऊ नारद महन |
हुए तत्पर तुरंत सब हेतु प्रस्थान संग श्री कृष्न || (४२०)

भावार्थ: *तब मुनि नारद ने वीणा बजाकर उनकी मूर्छा दूर की| (मूर्छा से) जागते ही वह अभी वृंदावन जाने की हठ करने लगे| भगवान् के प्रस्ताव का उद्धव, बलराम*

और महात्मा नारद ने समर्थन किया| श्री कृष्ण के साथ प्रस्थान करने के लिए सभी तुरंत तैयार हो गए|

दी आज्ञा दाऊ दारुक सारथी ले आओ वाहन |
चले चढ़ रथ दाऊ संग कृष्ण उद्धव ओर वृंदावन ||
लीं साथ में बहन सुभद्रा थीं जो अपि तत्पर गमन || (४२१)

भावार्थ: *दाऊ ने सारथी दारुक को आज्ञा दी कि रथ ले आओ| रथ पर सवार हो दाऊ तब कृष्ण और उद्धव के साथ वृंदावन की ओर चले| साथ में बहन सुभद्रा को भी लिया जो प्रस्थान के लिए तत्पर थीं|*

था यह काल थीं जब लेटीं शय्या राधा मरणासन्न |
हो रहा था असहाय विरह हेतु प्रियतम नंदनंदन || (४२२)
थे चिंतित बृजवासी करें त्याग किसी क्षण वह तन |
कर रहीं प्रयास ललिता सखी रहें वह स्थिति चेतन || (४२३)
पर हो नहीं रही दूर मूर्छा स्वामिन वृंदावन |
पहुँची विपक्षा चन्द्रावली भद्रा आदि संसर्गिन् || (४२४)

भावार्थ: *यह वह समय था जब राधा मरणासन्न अवस्था में शय्या पर लेटीं थीं| कृष्ण के प्रेम का विरह असहनीय हो रहा था| बृजवासी चिंतित थे की किसी भी क्षण वह अपना शरीर त्याग कर सकतीं हैं| सखी ललिता उन्हें चेतन अवस्था में लाने का प्रयास कर रहीं थीं लेकिन राधा की मूर्छा दूर नहीं हो रही थी| विपक्षा, चन्द्रावली, भद्रा आदि सखियाँ भी पहुँच गईं|*

बोलीं चन्द्रावली सुनो राधे कहता यह मेरा मन |
होंगे उपस्थित किसी क्षण यहां मनहर नन्दनन्दन || (४२५)
सुन शब्द मधुर कर्ण आ रहे बृज प्रिय श्री कृष्न |
खोलीं नेत्र राधा पुकारते हैं कहाँ प्रिय निरंजन || (४२६)
न दो सांत्वना अनृत जानूं द्वारका में भगवन |
न करो प्रयास प्रेमवश प्रिय सखी रखूँ यह तन || (४२७)

मिले पंचतत्व यह तन शीघ्र करूँ यह विनती भगवन |
कर प्रणिपात भूमि माँ करूँ उनसे मैं यह निवेदन || (४२८)
पश्चात विलीन पंचतत्व हो मेरे अंग तन का वितरन |
पहुंचे जल तन विहार वाटिका द्वारका श्री कृष्न || (४२९)
करे सुशोभित मम तन अग्नि उनका श्रृंगार दर्पन |
मेरे अंगों का आकाश करे उनके आँगन में विचरन || (४३०)
हो मेरी तन धूलि उनके पथ नभ पृथ्वी गमनागमन |
करतीं विलाप इस प्रकार हो गईं वह पुनः अचेतन || (४३१)

भावार्थ: *चन्द्रावली बोलीं, 'हे राधे, मेरा मन यह कहता है कि किसी भी क्षण मनोहर नंदनंदन यहां उपस्थित होंगे|' कानों में यह मधुर शब्द सुनकर कि कृष्ण बृज आ रहे हैं, राधा ने नेत्र खोले और बोलीं, 'प्रिय निरंजन (भगवान्) कहाँ हैं? मुझे झूठी दिलासा मत दो| मैं जानतीं हूँ कि भगवान् द्वारका में हैं| हे प्रिय सखी, प्रेमवश यह प्रयास न करो कि मैं प्राण रखूँ| यह शरीर शीघ्र ही पंचतत्व में विलीन हो, ऐसी विनती भगवान् से करती हूँ| धरती माँ को प्रणाम कर उनसे विनती करती हूँ कि शरीर के पंचतत्व में विलीन के पश्चात मेरे शरीर का वितरण हो| मेरे शरीर का जल श्री कृष्ण की विहार वाटिका में द्वारका पहुंचे| मेरे शरीर की अग्नि उनके श्रृंगार दर्पण की शोभा बढ़ाए| मेरे अंगो का आकाश उनके आँगन में विचरण करे| मेरे शरीर की धूलि उनके आकाश और पृथ्वी पर चलने वाले मार्ग में हो|' इस प्रकार विलाप करती हुईं वह फिर मूर्छित हो गईं|*

श्री कृष्ण का बलराम और उद्धव के साथ बृज आगमन

तीव्र गति चल रथ पहुँच गया उसी क्षण वृंदावन |
घेर लिए बृजवासी कहे क्यों की इतनी देर कृष्न || (४३२)
हैं मरणासन्न अवस्था राधा छोड़ें किसी क्षण तन |
सुन यह दौड़े ओर गृह राधा तुरंत श्री मधुसूदन || (४३३)

भावार्थ: *तीव्र गति से चलता हुआ रथ उसी क्षण वृंदावन में पहुंचा| (वृंदावन में पहुंचते ही) ब्रजवासियों ने उन्हें घेर लिया और कहे, 'इतनी देर क्यों कर दी कृष्ण? राधा मरणासन्न अवस्था में हैं| किसी भी क्षण शरीर त्याग कर सकतीं हैं|' यह सुन श्री मधुसूदन तुरंत राधा के घर की ओर दौड़े|*

पहुँच समीप राधा करने लगे घोर विलाप कृष्न |
पहुँच गए तब वहां हलधर और सुभद्रा बहन || (४३४)
देख मरणासन्न राधा हुआ द्रवित उनका तन मन |
बोलीं ललिता तब कर्ण राधा आए यशोदा-नन्दन || (४३५)
मत त्यागो प्राण खोल नेत्र करो तुम उनके दर्शन |
सुन यह कर्ण प्रिय वचन लौटीं राधा दशा चेतन || (४३६)

भावार्थ: *राधा के समीप पहुँच कृष्ण विलाप घोर करने लगे| तब वहां बलराम और सुभद्रा भी पहुँच गए| राधा को मरणासन्न देख उनका तन और मन द्रवित हो गया| तब ललिता राधा के कानों में बोलीं, 'यशोदानन्दन आ गए हैं| प्राण मत त्यागो| नेत्र खोल उनके दर्शन करो|' कानों को प्रिय लगने वाले यह वचन सुनकर राधा की चेतना लौटी|*

है क्या सत्य ललिता आए मेरे प्रियतम मधुसूदन |
हिलाया सर सखी तब बोलीं हैं कहाँ सुहृदयन || ४३७)
डूब गईं राधा प्रेम कृष्ण ले नाम भूयो भुयन |
देख यह उन्माद राधा भूले कृष्ण सुध तन और मन || (४३८)

भावार्थ: *(राधा बोलीं) 'क्या यह सत्य है ललिता कि मेरे प्रियतम मधुसूदन आए हैं?' तब सखी ने सर हिलाया (अर्थात संकेत किया कि हाँ)| तब (राधा) बोलीं, 'मेरे सुह्रदय कहाँ हैं?' वह कृष्ण के प्रेम में बार बार उनका नाम लेकर डूब गईं| राधा का यह उन्माद देखा कृष्ण अपने तन और मन की सुध भूल गए|*

हुई अवस्था अचेत लोट गए तब भूमि पर नंदनंदन |
हैं कष्ट में प्रियतम कृष्ण देखीं राधा खोल नयन || (४३९)
प्रणादित बोलीं ललिता करो तुरंत कोई प्रयत्न |
कहीं न कर दें त्याग स्व-प्राण हमारे प्रिय नंदनंदन || (४४०)

भावार्थ: *नंदनंदन (कृष्ण) की अचेत अवस्था हो गई| वह भूमि पर लेट गए| राधा ने नेत्र खोल देखा कि कि प्रियतम कृष्ण कष्ट में हैं| उच्च स्वर में वह बोलीं, 'ललिता कोई प्रयत्न तुरंत करो| कहीं हमारे प्रिय कृष्ण अपने प्राण न त्याग दें?*

कहीं विशाखा तब कर्ण कृष्ण राधे राधे नाम पावन |
सुन सोम सम वचन हुई दूर कृष्ण अवस्था अचेतन || (४४१)
खोले नेत्र देख समक्ष राधा हुआ उनका मन प्रसन्न |
हुए आनंदित सभी देख यह दृश्य राधा कृष्ण मिलन || (४४२)

भावार्थ: *तब विशाखा ने कृष्ण के कानों में 'राधा, राधा' पवित्र नाम कहा| अमृत के समान वचन सुनते ही कृष्ण की मूर्छा दूर हो गई| नेत्र खोले| राधा को अपने सामने देख उनका मन प्रसन्न हो गया| इस कृष्ण-राधा के मिलन के दृश्य को देख सभी आनंदित हुए|*

कहते नारायण नारायण पहुंचे वहां नारद महन |
बजा वीणा किए स्तुति बहु भांति वह राधा कृष्न || (४४३)
हुए जब प्रसन्न कृष्ण कहें करो प्रभु पूर्ण मन्मन् |
करो प्रकाशित जग उन्मादित त्रिमूर्ति निरूपन || (४४४)
बलराम सुभद्रा सहित आप रहें सदैव इस भुवन |
कर स्थापित तीन विग्रह करें सब उनका दर्शन || (४४५)

पाएं धन धान्य सुख शान्ति इहलोक और मोक्ष मरन |
कहे तथास्तु कृष्ण तब हों पूर्ण अवश्य आपके वचन || (४४६)
रहूँ जगन्नाथपुरी मैं संग दाऊ व् सुभद्रा बहन |
होंगे साथ चक्र सुदर्शन भी देने जन दिव्य नयन || (४४७)
कर दर्शन सुदर्शन पा दिव्य नेत्र करें मेरा अर्चन |
पाएं निःसंदेह सुख शान्ति ऐश्वर्य इहलोक भूजन || (४४८)
मरण पश्चात आएं धाम साकेत वह पा निर्मोचन |
हुए प्रसन्न अति मुनि नारद सुन प्रभु के सोम वचन || (४४९)
करने लगे नृत्य बजा वीणा गूंजा स्वर नभ भुवन |
हे नारायण नहीं कोई कृपालु सम आप भगवन || (४५०)

भावार्थ: *तभी वहां 'नारायण, नारायण' कहते हुए महात्मा नारद पहुंचे| वीणा बजाकर बहु प्रकार से उन्होंने राधा और कृष्ण की स्तुति की| जब कृष्ण प्रसन्न हुए तो कहने लगे, 'हे प्रभु मेरी इच्छा पूर्ण करें| इस विश्व को उन्मादित त्रिमूर्ति स्वरुप में आप प्रकाशित करें| बलराम और सुभद्रा सहित आप पृथ्वी पर सदैव रहें| तीनों के विग्रह स्थापित हों जिससे प्राणी उनके दर्शन कर सकें| (उनके दर्शन से) इहलोक में धन-धान्य, सुख शान्ति प्राप्त हो और मरण पश्चात मोक्ष मिले|' तब कृष्ण ने कहा, 'तथास्तु' (ऐसा ही हो)| आपके वचन अवश्य पूर्ण होंगे| मैं जगन्नाथपुरी में दाऊ और सुभद्रा बहन के साथ रहूंगा| साथ में (मेरे दर्शन हेतु) प्राणियों को दिव्य नेत्र देने सुदर्शन चक्र भी स्थापित होंगे| जो सुदर्शन के दर्शन कर दिव्य नेत्र प्राप्त कर मेरी पूजा अर्चना करेंगे, उन्हें निःसंदेह इहलोक में सुख, शान्ति और ऐश्वर्य की प्राप्ति होगी और वह मरण पश्चात मोक्ष ले कर साकेत धाम आएंगे| प्रभु के अमृत समान वचन सुनकर मुनि नारद अत्यंत प्रसन्न हुए| वह वीणा बजाकर नृत्य करने लगे| समस्त पृथ्वी और आकाश में शब्द गूंजने लगे, 'हे नारायण, हे भगवन, आपके समान दयालु कोई नहीं है|*

श्री जगन्नाथ का सम्राट पुरुषोत्तम जाना पर प्रेम

कहे एक कथा प्रेम जगन्नाथ महाप्रभु शचीनंदन |
थे सम्राट उड़ीसा पुरुषोत्तम जाना भक्त भगवन || (४५१)

भावार्थ: *महाप्रभु शची-पुत्र (चैतन्य) ने जगन्नाथ के प्रेम की एक कथा कही| उड़ीसा के सम्राट पुरुषोत्तम जाना भगवान् के भक्त थे|*

थे वह अति सुन्दर बलशाली युवक प्रजा प्रिय राजन |
विद्यानगर दक्षिण भारत में था एक राज्य अति शक्वन् || (४५२)
थी उनके एक पुत्री युक्त सम्पूर्ण गुण और शोभन |
थी चाह करें वह विवाह स्व-पुत्री संग जाना राजन || (४५३)

भावार्थ: *वह (सम्राट पुरुषोत्तम जाना) अत्यंत सुन्दर बलशाली प्रजा के प्रिय राजा थे| दक्षिण भारत में विद्यानगर एक अत्यंत शक्तिशाली राज्य था| उनके एक पुत्री सम्पूर्ण गुणों से युक्त अत्यंत सुंदरी थीं| उनकी इच्छा थी कि वह अपनी पुत्री का विवाह सम्राट (पुरुषोत्तम) जाना के साथ करें|*

भेजे वह सन्देश उड़ीसा आएंगे मिलने जाना राजन |
पर नहीं कहे निश्चित तिथि थी इच्छा दें संसर्पन || (४५४)
करना चाहते स्वयं निरीक्षण धन धान्य और धृत्वन् |
आ गए वह अचानक एक दिन नगर पुरी संग कुलजन || (४५५)
दैवयोग से था वह प्रथम दिन रथ यात्रा भगवन |
था क्रम लगाएं झाड़ू समक्ष उस दिन जगन्नाथ वाहन ||
हो भाव विभोर भक्ति लगा रहे थे झाड़ू जाना राजन || (४५६)

भावार्थ: *उन्होंने उड़ीसा (राज्य) सन्देश भेजा कि सम्राट (पुरुषोत्तम जाना) से मिलने आएँगे| परन्तु वह आश्चर्य देने चाहते थे, अतः तिथि नहीं बतलाई| वह स्वयं (सम्राट का) धन-धान्य और वैभव का निरीक्षण करना चाहते थे| एक दिन अचानक वह परिवार सहित (जगन्नाथ) पुरी नगर आ गए| दैवयोग से वह भगवान् की रथ यात्रा का*

प्रथम दिन था| (सम्राट जाना का) ऐसा क्रम था कि उस दिन जगन्नाथ के रथ के समक्ष झाड़ू लगाएं| भक्ति में भाव विभोर होकर सम्राट जाना झाड़ू लगा रहे थे|

लग रहे थे वह समान सेवक पहने वस्त्र साधारन |
यद्यपि थे प्रभावित देख समृद्धि विद्यानगर राजन || (४५७)
यौवन और लावण्य पुरुषोत्तम जाना भक्त भगवन |
पर हुए निराश अति देख उन्हें झाड़ूदार निरूपन || (४५८)
लगता राज्य समृद्ध पर लगती नीच स्थिति भाव मन |
बचाने अल्प धन स्वयं ही लगा रहा झाड़ू यह राजन || (४५९)
नहीं करूँ विवाह स्व-पुत्री युक्त नीच प्रवृत्ति जन |
लौट गए विद्यानगर बिन मिले सम्राट जाना महन || (४६०)

भावार्थः *सेवक के समान साधारण वस्त्र पहन वह झाड़ू लगा रहे थे| यद्यपि विद्यानगर भगवद्भक्त सम्राट पुरुषोत्तम जाना की समृद्धि, यौवन और सुंदरता से प्रभावित थे, पर उन्हें झाड़ूदार के रूप में देखकर उन्हें निराशा हुई| (वह सोचने लगे) 'राज्य तो समृद्ध लगता है पर (राजा के) मन की स्थिति बड़ी नीच है| अल्प धन बचाने के लिए यह राजा स्वयं ही झाड़ू लगा रहा है| ऐसे नीच प्रवृत्ति के मनुष्य के साथ मैं अपनी पुत्री का विवाह नहीं करूंगा|' वह सम्राट (पुरुषोत्तम) जाना से बिना मिले ही विद्यानगर लौट गए|*

बीत गया बहुत काल पर नहीं आया कोई संवदन |
विद्यानगर नृप हैं क्यों चुप हेतु सुता पाणिग्रहन || (४६१)
भेजे दूत विद्यानगर जाने तब वह उनका भाव मन |
कहे नृप विद्यानगर नहीं दूँ सुता जाना राजन || (४६२)
हेतु बचत अल्प धन करे स्वच्छ पथ जो नीच भाव जन |
हुए क्रोधित अति सम्राट जाना सुन यह अवगणन || (४६३)

भावार्थः *बहुत समय बीत गया पर कोई सन्देश (विद्यानगर से) नहीं आया| विद्यानगर के सम्राट पुत्री के विवाह हेतु चुपक्यों हैं? विद्यानगर दूत भेज कर उन्हें उनके मन का भाव पता लगा| विद्यानगर सम्राट ने कहा कि मैं अपनी पुत्री नीच प्रवृत्ति के जाना को*

नहीं दूंगा जो अल्प धन की बचत के लिए पथ स्वच्छ करता है| यह अपमान सुन सम्राट जाना अत्यंत क्रोधित हुए|

दिए आदेश सेनापति करो तैयारी तुरंत तुम रन |
सिखलाऊँ मैं करना मान उन्हें जगन्नाथ भगवन || (४६४)
लिए बिन आज्ञा हरि जगन्नाथ कर दिए वह आक्रमन |
थे विद्यानगर सम्राट भक्त प्रथम पूज्य संकट-हरन || (४६५)
कर पूजन अर्चन गणपति किए वह उनका आवाहन |
आए लड़ने युद्ध स्वयं गणपति ओर विद्यानगर राजन || (४६६)

भावार्थ: *अपने सेनापति को आदेश दिया कि तुरंत युद्ध की तैयारी करो| मैं उन्हें जगन्नाथ भगवान् का सम्मान करना सिखलाऊँगा| बिना भगवान् जगन्नाथ से आज्ञा लिए उन्होंने आक्रमण कर दिया| विद्यानगर के सम्राट प्रथम पूज्य संकटहर्ता के भक्त थे| उन्होंने गणपति का पूजन अर्चन कर उनका आवाहन किया| स्वयं गणपति विद्यानगर राजा की ओर से युद्ध लड़ने आए|*

कैसे जीतते रण नृप जाना प्रत्यक् मूषकवाहन |
हो न जब तक कृपा और संग श्री जगन्नाथ भगवन || (४६७)
हार गए युद्ध और हुए अति निराश जाना राजन |
पहुंचे मंदिर हरि श्री जगन्नाथ करते विलाप गहन || (४६८)
हूँ मैं सेवक प्रभु आपका हारा कैसे मैं यह रन |
किया अपमान मेरा नृप विद्यानगर जानें भगवन || (४६९)
समझ मुझे झाड़ूदार नहीं दी स्व-सुता पानिग्रहन |
था आश्वस्त कृपा आपकी पर नहीं दिए साथ भगवन || (४७०)

भावार्थ: *सम्राट जाना गणेश भगवान् के विरुद्ध युद्ध कैसे जीतते, जब जगन्नाथ भगवान् की कृपा और साथ न हो? युद्ध हार गए| राजा जाना अत्यंत निराश हुए| भगवान श्री जगन्नाथ के मंदिर पहुंचे कर विलाप करने लगे| 'हे प्रभु, मैं तो आपका सेवक हूँ, फिर युद्ध कैसे हार गया? विद्यानगर सम्राट ने मेरा अपमान किया, यह प्रभु जानते हैं| मुझे झाड़ूदार समझ अपनी पुत्री का विवाह मेरे साथ नहीं किया| मैं आश्वस्त था कि आपकी कृपा है परन्तु प्रभु, आप साथ नहीं दिए|*

कर रहे थे गणपति विद्यानगर सम्राट सेना संचालन |
पुकारा आपको मैं हेतु मदद पर नहीं आए भगवन || (४७१)
समझेगा जग नहीं सामर्थ्य कर सकें आप भक्त रक्षन |
नहीं शक्ति आपके भक्त कर सकें स्वयं प्रतिरक्षन || (४७२)
है विषय लज्जा हेतु मम नहीं दिखाऊँ मुख भुवन |
क्या लाभ रखूँ प्राण त्यागूँ अभी जल और अन्न || (४७३)

भावार्थ: *विद्यानगर सम्राट की सेना का संचालन गणपति कर रहे थे| मैंने आपको मदद हेतु पुकारा, पर भगवन, आप नहीं आए| विश्व समझेगा कि आप में अपने भक्त की रक्षा करने की सामर्थ्य नहीं है, न ही आपके भक्तों में अपनी सुरक्षा करने की शक्ति है| यह मेरे लिए लज्जा का विषय है| मैं पृथ्वी पर अपना मुख नहीं दिखाऊँगा| प्राण रखने का क्या लाभ? मैं अभी जल और अन्न का त्याग करता हूँ|*

दिए उसी रात्रि स्वप्न में जगन्नाथ भगवान् दर्शन |
बोले सुन हे सम्राट करते क्यों हठ त्यागूँ जीवन || (४७४)
क्या ली थी आज्ञा मुझ से पूर्व किए तुम आरम्भ रन |
नहीं था उचित समय इस हेतु नहीं पाए मम स्वस्त्ययन || (४७५)
करो तैयारी पुनः रण पाओगे मुझे संग सैन्यजन |
हेतु विजय संग दाऊ रहूंगा मैं स्वयं उपस्थित रन || (४७६)
न हो चिंतित हो अभयी लड़ो युद्ध पूर्ण स्थामन् |
नहीं हरा सकेंगे तुम्हें संग गणेश विद्यानगर राजन || (४७७)

भावार्थ: *उसी रात्रि जगन्नाथ भगवान् ने स्वप्न में उन्हें दर्शन दिए और बोले, 'हे सम्राट, जीवन त्यागने की हठ क्यों करते हो? क्या युद्ध आरम्भ करने से पहले तुमने मुझ से आज्ञा ली थी? वह समय उचित नहीं था, इसलिए मेरा आशीर्वाद तुम्हें नहीं मिला| अब पुनः युद्ध की तैयारी करो| मैं तुम्हारे सैन्यदल के साथ रहूंगा| तुम्हारी विजय के लिए दाऊ के साथ मैं स्वयं युद्ध में उपस्थित होऊंगा| चिंता न करो| अभयी हो| पूर्ण शक्ति के साथ युद्ध लड़ो| विद्यानगर सम्राट गणेश के साथ होने पर भी तुम्हें नहीं हरा पाएंगे|'*

सुन प्रिय कर्ण वचन प्रभु हुए प्रसन्न जाना राजन |
कर एकत्रित सेना हुए तत्पर युक्त ऊर्जा हेतु रन || (४७८)

भावार्थ: *भगवान् के कर्ण प्रिय वचन सुनकर सम्राट जाना प्रसन्न हुए| सेना को एकत्रित कर पूर्ण ऊर्जा के साथ युद्ध को तत्पर हुए|*

चल दिए ओर विद्यानगर हेतु युद्ध वह भक्त भगवन |
पूर्व इसके हो सवार द्वि अश्व चले दाऊ संग कृष्न || (४७९)

भावार्थ: *वह भगवद्भक्त युद्ध हेतु विद्यानगर की ओर चल दिए| इससे पूर्व दो अश्वों पर सवार हो दाऊ के साथ कृष्ण भी चल दिए|*

था अश्व कृष्ण श्याम वर्ण और श्वेत रोहिणी-नन्दन |
हो रहे मोहित भूजन पथ देख द्वि सुन्दर युद्धिवन || (४८०)

भावार्थ: *कृष्ण (जगन्नाथ) का अश्व श्याम वर्ण का था और बलराम का श्वेत वर्ण| मार्ग में इन दोनों सुन्दर योद्धाओं को देख प्राणी मोहित हो रहे थे|*

थी ऋतु ग्रीष्म समय दोपहर सूर्य तप रहे अति गहन |
तभी देखे द्वि युवक आ रही ले मटकी छाछ ग्वालिन || (४८१)

भावार्थ: *गर्मी की ऋतु थी| दोपहर का समय था| सूर्य भीषण तप रहे थे| तभी उन दोनों युवकों (कृष्ण और बलराम) ने ग्वालिन को छाछ की मटकी लिए आते देखा|*

बोले कृष्ण हे मैया सूख रहा कंठ है प्यासा तन |
पिलाओ छाछ हों तृप्त दें तुम्हें आशीष भगवन || (४८२)

भावार्थ: *कृष्ण बोले, 'हे मैया, कंठ सूख रहा है| शरीर प्यासा है| छाछ पिलाओ| हम तृप्त होंगे| तुम्हें ईश्वर आशीर्वाद देंगे|*

बोली ग्वालिन अवश्य दूँ छाछ पर है क्या पास धन |
दो मूल्य हूँ निर्धन करूँ मैं इससे निर्वाह जीवन || (४८३)

भावार्थ: *ग्वालिन बोली,'छाछ अवश्य दूंगी, पर क्या तुम्हारे पास धन है? इसका मूल्य दो| मैं निर्धन हूँ| इसी से मैं अपना जीवन निर्वाह करती हूँ|'*

सुन करुण वचन ग्वालिन बोले श्री जगन्नाथ भगवन |
सुन मैया हम सैनिक पुरुषोत्तम जाना राजन || (४८४)
जा रहे लड़ने युद्ध करते हुए राज आदेश पालन |
नहीं धन अभी पर आ रहे पीछे नृप संग सैन्यगन || (४८५)
कहना उनसे पिए छाछ जो सवार अश्व दो युद्धिवन |
देंगे वह तुरंत उचित मूल्य छाछ हे मैया सुजन || (४८६)

भावार्थ: *ग्वालिन के करुण वचन सुनकर श्री जगन्नाथ प्रभु बोले, 'मैया सुन, हम सम्राट पुरुषोत्तम जाना के सैनिक हैं| राज आदेश का पालन करने हेतु युद्ध के लिए जा रहे हैं| अभी धन नहीं है परन्तु पीछे सम्राट सेना के साथ आ रहे हैं| उनसे कहना कि दो योद्धा जो अश्व पर सवार थे, उन्होंने छाछ पीया था| हे करुणामयी मैया, वह छाछ का मूल्य तुरंत देंगे|'*

बोली ग्वालिन अवश्य ही होंगे आपके सत्य वचन |
पर कैसे पहचानेंगे नृप पिए छाछ उनके युद्धिवन || (४८७)
उतार उंगल दिए तब द्वि अनामिका जगन्नाथ भगवन |
बोले दिखाना यह चिह्न नृप देंगे तुम्हें इच्छित धन || (४८८)

भावार्थ: *ग्वालिन बोली, 'अवश्य ही आपके वचन सत्य हैं| पर सम्राट कैसे पहचानेंगे कि उनके योद्धाओं ने छाछ पी थी|' तब जगन्नाथ भगवान् ने उंगली से उतार कर दो अंगूठियां दीं और बोले, 'यह चिह्न तुम सम्राट को दिखाना| वह तुम्हें इच्छित धन देंगे|'*

हो संतुष्ट दी तब कुम्भ छाछ ग्वालिन श्री भगवन |
बलदेव समेत पी छाछ मिटाई तृष्णा हुए सद्यस्तन || (४८९)

भावार्थ: *संतुष्ट हो तब छाछ का घड़ा ग्वालिन ने भगवान् को दे दिया| बलदेव समेत छाछ पी| अपनी प्यास मिटाई और ताजगी पाई|*

चले गए हेतु युद्ध यह द्वि पुरुष आए पीछे राजन |
करबद्ध पहुँच समीप नृप बोली सुहृदय ग्वालिन || (४९०)
जय जय सम्राट हो आपकी आयु सहस्त्र हायन |
पी छाछ द्वि योद्धा और दिए यह अनामिका चिह्न || (४९१)
कहे आ रहे सम्राट पीछे संग सेना देंगे मूल्य धन |
हुए अचंभित नृप जाना देख द्वि अनामिका स्वर्न || (४९२)
थे अंकित नाम बलदेव और श्री जगन्नाथ भगवन |
किए स्मरण यह मुद्रिकाएँ किए वह जो प्रभु अर्पन || (४९३)
हुए प्रसन्न संग मेरे हेतु रण स्वयं दाऊ और भगवन |
हूँ विजयी रण नहीं संशय दिए तब छाछ मूल्य धन || (४९४)

भावार्थ: *तब यह दोनों युद्ध के लिए चले गए| पीछे राजा सेना सहित पहुंचे| सुहृदय ग्वालिन राजा के समीप पहुँच करबद्ध बोली, 'सम्राट आपकी जय हो, जय हो| आपकी आयु सहस्त्र वर्ष हो| आपके दो सैनिकों ने छाछ पी और चिह्न स्वरुप यह दो मुद्रिकाएँ दीं| उन्होंने कहा कि सम्राट पीछे सेना सहित आ रहे हैं जो (छाछ का) मूल्य धन देंगे|' उन दो स्वर्ण मुद्रिकाएँ को देखकर सम्राट अचंभित हुए| उन पर बलदेव और श्री जगन्नाथ भगवान् के नाम अंकित थे| उन्हें स्मरण आया कि यह तो वही मुद्रिकाएँ हैं जो उन्होंने प्रभु को अर्पण कीं थीं| यह जानकर कि युद्ध में मेरे साथ दाऊ और भगवान् स्वयं हैं, वह अति प्रसन्न हुए| मैं युद्ध में अवश्य ही विजयी हूँगा, इसमें कोई संशय नहीं| तब उन्होंने छाछ का मूल्य चुकाया|*

दिए नृप एक भूखंड स्वरुप पुरस्कार उस ग्वालिन |
कहे हो तुम अति सुभग पिए छाछ तुम्हारा भगवन || (४९५)
कर सकेंगी कई पीढ़ी तुम्हारी अब भरण पोषन |
कर रहे वास वंशज उस ग्वालिन आज भी उस स्तापन || (४९६)

भावार्थ: सम्राट (जाना) ने पुरस्कार स्वरुप उसे एक भूखंड दिया और कहा कि तुम अत्यंत भाग्यशाली हो जिसका छाछ भगवान् ने पीया| इस से तुम्हारी कई पीढ़ियां भरण पोषण कर सकेंगी| आज भी उस स्थान पर उस ग्वालिन के वंशज वास कर रहे हैं|

बढ़ गए सम्राट आगे सहित अपने सैन्यदल करने रन |
कर आक्रमण विद्यानगर किए परास्त सैन्य द्विषन || (४९७)
पहचान गए गणपति आए हैं लड़ने दोनों भाई रन |
कर प्रणिपात ब लराम और जगन्नाथ डाले प्रहरन || (४९८)
बना लिए बंदी नृप विद्यानगर मंत्री और नृपाङ्गन |
उसी रात स्वप्न जाना आए श्री जगन्नाथ भगवन || (४९९)
करो स्वतंत्र तुरंत नृप विद्यानगर दिए प्रभु शासन |
हैं यह भक्त गणपति नहीं दो कष्ट इन्हें किसी प्रकरन || (५००)
ले जाओ सुता संग अपने करो जो हो तुम्हारे मन्मन् |
उठ गए जाना हो विचलित तुरंत सुन प्रभु नियोजन || (५०१)

भावार्थ: *अपने सैन्यदल के साथ तब युद्ध हेतु सम्राट आगे बढ़ गए| विद्यानगर पर आक्रमण कर उन्होंने रिपु की सेना को परास्त किया| गणपति पहचान गए कि दोनों भाई (बलराम और जगन्नाथ) युद्ध करने आए हैं| बलराम और जगन्नाथ को प्रणिपात कर उन्होंने अपने शस्त्र डाल दिए| तब विद्यानगर के सम्राट, मंत्रियों और राजकुमारी को बंदी बना लिया| उसी रात जाना के स्वप्न में श्री जगन्नाथ प्रभु आए| प्रभु ने आदेश दिया कि विद्यानगर के सम्राट को तुरंत स्वतंत्र करो| यह गणपति के भक्त हैं| इन्हें किसी प्रकार का कष्ट नहीं दो| इनकी पुत्री को अपने साथ ले जाओ और जो इच्छा हो, करो| प्रभु का आदेश सुन विचलित हो जाना उठ गए|*

दी आज्ञा अमात्य करें उपस्थित तुरंत बंदी राजन |
सादर नृप विद्यानगर लौटाए उनका खंड भुवन || (५०२)
पर बोले सुता आपकी जाएगी संग हमारे पट्टन |
लौटे तब स्व-नगर सम्राट जाना प्रिय श्री भगवन || (५०३)

भावार्थ: *महामंत्री को आदेश दिए कि तुरंत बंदी राजा को उपस्थित किया जाए| सादर उनको उनका राज्य लौटा दिए, पर बोले कि आपकी पुत्री हमारे साथ (हमारे) नगर जाएगी| श्री भगवान् के प्रिय सम्राट जाना तब अपने नगर (जगन्नाथपुरी) लौटे|*

पहुँच महल किए निर्णय नहीं करें इससे पाणिग्रहन |
दिए आदेश अमात्य ढूँढ़ो एक सरल झाड़ूदार जन || (५०४)

करो विवाह उसी से इसका मिले फल हेतु अवलेपन |
रोने लगीं राजसुता सुन नृप जाना कठोर वचन || (५०५)

भावार्थ: *महल पहुँच कर निर्णय किए कि हम इससे विवाह नहीं करेंगे| महामंत्री को आदेश दिए कि एक सामान्य झाड़ूदार को ढूंढें और उसी से इसका विवाह कराएं| इसके अभिमान का फल मिले| राजा जाना के यह कठोर वचन सुन राजकुमारी रोने लगीं|*

देख शोकाकुल नृप सुता पिघला दयालु अमात्य मन |
करबद्ध समक्ष सम्राट बोले हो अवश्य आज्ञा पालन || (५०६)
दीजिए कुछ समय नृप ढूंढ सकूं उपयुक्त वर-वरन |
करो प्रबंध निवास पाओ जब तक वर बोले राजन || (५०७)
है उचित बोले अमात्य रहे सम सुता यह मेरे भवन |
अवश्य नहीं मुझे कोई इससे विरोध बोले राजन || (५०८)

भावार्थ: *राजकुमारी को शोकाकुल देख दयालु महामंत्री का हृदय पिघल गया| सम्राट के समक्ष करबद्ध बोले, 'आपकी आज्ञा का अवश्य पालन होगा| हे सम्राट, मुझे कुछ समय दीजिए ताकि मैं इसके वरण हेतु उपयुक्त वर ढूंढ सकूं|' तब सम्राट बोले, 'जब तक वर नहीं मिल जाता, इसके रहने का उचित प्रबंध कीजिए|' महामंत्री बोले, 'यह उचित है| मेरे भवन में यह पुत्री समान रहे|' तब राजा बोले, 'अवश्य| इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है|'*

रहने लगीं नृप सुता तब पुत्री सम अमात्य भवन |
शीघ्र ही आया समय रथ यात्रा जगन्नाथ भगवन || (५०९)
लगाने लगे नृप झाड़ू समक्ष श्री जगन्नाथ वाहन |
पहुंचे तब अमात्य ले संग नृपाङ्गना करो तुम वरन || (५१०)
है आदेश नृप हो संग झाड़ूदार ही पाणिग्रहन |
समझ नीति अमात्य हो प्रसन्न किए तब नृप वरन || (५११)

भावार्थ: *राजकुमारी तब महामंत्री के भवन में पुत्री समान रहने लगीं| शीघ्र ही जगन्नाथ रथ यात्रा का समय आ गया| नृप (जाना) श्री जगन्नाथ के रथ के समक्ष झाड़ू लगाने*

लगे| तभी महामंत्री राजकुमारी को ले कर वहां पहुँच गए और कहा कि तुम इनका वरण करो| सम्राट का आदेश है कि झाड़ूदार के साथ ही तुम्हारा विवाह हो|' महामंत्री की नीति समझ तब प्रसन्न हो सम्राट ने विवाह किया|

लिया जन्म उनके तब एक पुत्र प्रतापरूद्र नामन |
हुए जो पार्षद महाप्रभु चैतन्य अवतार कृष्न || (५१२)
हैं जगन्नाथ प्रभु करुणामय और पतित पावन |
रक्षक शरणागत भक्त वत्सल दें शम और निर्मोचन || (५१३)

भावार्थ: *उनके एक पुत्र का जन्म हुआ जिनका नाम प्रतापरूद्र था| भगवान् कृष्ण के अवतार महाप्रभु चैतन्य के वह पार्षद हुए| जगन्नाथ भगवान् करुणामय और पापियों का उद्धार करने वाले हैं| शरणागतों के रक्षक, भक्त वत्सल, वह शान्ति और मोक्ष देते हैं|*

सम्राट प्रतापरुद्र को चैतन्य महाप्रभु के दर्शन

पिता नृप जाना समान थे उनके पुत्र भक्त भगवन |
हुए अति प्रतापी सम्राट प्रतापरुद्र नामन || (५१४)

भावार्थ: *पिता सम्राट जाना के समान उनके पुत्र प्रतापशाली सम्राट प्रतापरुद्र प्रभु के अनन्य भक्त थे|*

काल रथ यात्रा करते वह भी जगन्नाथ पथ मार्जन |
थे वह उत्सुक करें महाप्रभु श्री चैतन्य के दर्शन || (५१५)
थी बाधा वह थे सम्राट और महाप्रभु सन्यासिन |
था निषेध हेतु महाप्रभु करे लौकिक जन दर्शन || (५१६)

भावार्थ: *रथ यात्रा के समय वह भी (भगवान्) जगन्नाथ के मार्ग को स्वच्छ करते थे| उनकी बड़ी इच्छा थी कि वह महाप्रभु श्री चैतन्य के दर्शन करें| लेकिन इसमें बाधा थी कि वह सम्राट थे और महाप्रभु सन्यासी| महाप्रभु का दर्शन सांसारिक प्राणियों के लिए निषेध था|*

लौकिक नर नारि जो डूबे ऐश्वर्य मान और धन |
है निषेध करें सन्यासी उनका स्पर्श और दर्शन || (५१७)
कहते शास्त्र समझो इसे घृत और काष्ठ मिलन |
इस स्थिति कठिन कर सकें योगी स्व-नियंत्रन || (५१८)

भावार्थ: *सांसारिक नर नारि जो ऐश्वर्य, नाम और धन में डूबे हैं, उनका स्पर्श और दर्शन करना सन्यासी के लिए निषेध है| शास्त्र कहते हैं कि यह घी और लकड़ी का मिलन है| योगियों के लिए भी इस स्थिति में अपने आप को नियंत्रित रख पाना कठिन है|*

नहीं उचित बैठे जन एकांत संग सुता माँ बहन |
संगत विषय भोगी कामी भूजन करती विचलित मन || (५१९)

है निषेध इस हेतु करें सन्यासी संग ऐसे भूजन |
करते महाप्रभु संन्यास धर्म का दृढ़ता से पालन || ((५२०))

भावार्थ: *एकांत में प्राणी अपनी पुत्री, माँ, बहन के साथ बैठे, यह उचित नहीं है| विषय भोगी, कामी प्राणियों की संगत प्राणियों के मन विचलित कर देती है| इस कारण सन्यासियों के लिए ऐसे प्राणियों की संगत निषेध है| महाप्रभु संन्यास धर्म का दृढ़ता से पालन करते थे|*

समझे जग हैं सम्राट इसी श्रेणी सम लौकिक जन |
करते शास्त्र तुलना विषयी भूजन सम विषानन || (५२१)
यद्यपि प्रतापरुद्र थे उत्तम शासक भक्त भगवन |
पर थे निःसंदेह लौकिक विलास सामग्री सम्पन्न || (५२२)

भावार्थ: *सम्राट को विश्व इसी लौकिक प्राणियों की श्रेणी में समझता है| विषयी प्राणियों की तुलना शास्त्रों ने विषैले सर्प से की है| यद्यपि प्रतापरुद्र एक अच्छे शासक और भगवान् के भक्त थे, परन्तु निःसंदेह थे तो सांसारिक विलास सामग्री से सम्पन्न|*

किए विनती श्री नित्यानंद अद्वैताचार्य महन |
रॉय रामानन्द सार्वभौम भट्टाचार्य श्रीमन || (५२३)
हे महाप्रभु हैं भक्त अनन्य प्रतापरुद्र राजन |
कर कृपा उन पर हे दयालु प्रभु दीजिए दर्शन || (५२४)

भावार्थ: *महात्मा श्री नित्यानंद, अद्वैताचार्य, श्रीमन रॉय रामानन्द, सार्वभौम भट्टाचार्य ने उनसे विनती की, 'हे महाप्रभु, सम्राट प्रतापरुद्र अनन्य भक्त हैं| उन पर कृपा कर, हे दयालु प्रभु, उन्हें दर्शन दीजिए|'*

हो अप्रसन्न बोले महाप्रभु तब सुनो मेरे वचन |
यदि करो हठ तो छोड़ पुरी जाऊं मैं अन्य स्थापन || (५२५)
नहीं रहूँ यहां और संग तुम सब प्रिय लौकिक जन |
सुन वचन कठोर महाप्रभु पकड़े सब उनके चरन || (५२६)

करो क्षमा प्रभु हुई त्रुटि न करें पुनः भाविन |
हुए दुःखी प्रतापरुद्र सुन प्रभु के कठोर वचन || (५२७)

भावार्थ: *तब अप्रसन्न हो महाप्रभु बोले,'मेरे वचनों को सुनो| यदि तुम हठ करोगे तो मैं (जगन्नाथ) पुरी छोड़ अन्य स्थान को चला जाऊँगा| मैं यहां नहीं रहूंगा और न साथ ही तुम सब के जिन्हें सांसारिक प्राणी प्रिय हैं|' महाप्रभु के कठोर वचन सुनकर सबने उनके चरण पकड़ लिए| 'हे प्रभु, हम से त्रुटि हुई| क्षमा करें| भविष्य में ऐसा नहीं होगा|' प्रभु के कठोर वचन सुन कर प्रतापरुद्र दुःखी हुए|*

करने लगे विलाप प्रतापरुद्र है व्यर्थ जीवन |
करूं त्याग राज्य व् परिवार यदि न दें प्रभु दर्शन || (५२८)
छोड़ूँ ग्रहण अन्न जल हों न जब तक प्रभु प्रसन्न |
है श्रेष्ठ त्यागूँ जीवन करते हुए महाप्रभु स्मरन || (५२९)

भावार्थ: प्रतापरुद्र विलाप करने लगे| 'यह जीवन व्यर्थ है| यदि प्रभु दर्शन नहीं देते तो मैं राज्य और परिवार त्याग दूंगा|जब तक प्रभु प्रसन्न नहीं होते, अन्न जल ग्रहण करना छोड़ दूंगा| महाप्रभु का स्मरण करते हुए जीवन त्याग देना श्रेष्ठ है|'

कहे श्री सार्वभौम भट्टाचार्य तब यह मधुर वचन |
रखो धैर्य न लो कोई निर्णय सहसा हे राजन || (५३०)
जानते महाप्रभु हैं आप सेवक जगन्नाथ भगवन |
करते स्वच्छ पथ आप जाएं जब प्रभु गुंडिचा भवन || (५३१)
करते स्वीकार आपके सुत का प्रतिदिन अभिनंदन |
इस विशेष कृपा हेतु प्रभु देते आपको स्वस्त्ययन || (५३२)

भावार्थ: श्री सार्वभौम भट्टाचार्य जी ने तब यह मधुर वचन कहे, 'हे राजन, धैर्य रखो| कोई सहसा (शीघ्रता में) निर्णय न लो| महाप्रभु जानते हैं कि आप जगन्नाथ भगवान् के सेवक हैं| जब वह गुंडिचा भवन जाते हैं (रथ यात्रा समय में) तब आप उनके रथ के मार्ग को स्वच्छ करते हैं| आपके पुत्र का वह प्रतिदिन अभिनंदन स्वीकार करते हैं| इस विशेष कृपा से वह आपको आशीर्वाद देते हैं|

दूँ एक परामर्श यदि चाहें आप साक्षात दर्शन |
काल रथ यात्रा जब हो उन्मत्त समक्ष रथ भगवन || (५३३)
कर नृत्य महाप्रभु श्रांत करें विश्राम वल्लभ वन |
वेश भिक्षुक गाते ब्रज गीत आना उनके अभिमुखन || (५३४)
कर प्रणिपात पड़ जाना तुम उनके कमल सम चरन |
है मुझे विश्वास हो प्रसन्न देंगे वह तुम्हें स्वस्त्ययन || (५३५)
हैं अति दयालु श्री चैतन्य महाप्रभु अवतार कृष्न |
कर कृपा हो प्रसन्न करेंगे पूर्ण तुम्हारे सब मन्मन् || (५३६)

भावार्थ: 'यदि आप साक्षात दर्शन करना चाहते हैं तो एक सुझाव दूँ| रथ यात्रा के समय जब भगवान् के रथ के समक्ष उन्मत्त नृत्य करते हुए महाप्रभु थक जाएं और वल्लभ वन में विश्राम कर रहे हों, तब आप भिक्षुक का वेश बना ब्रज (गोपी) गीत गाते हुए प्रणिपात कर उनके कमल समान चरण पर पड़ जाना| मुझे विश्वास है कि प्रभु प्रसन्न होंगे और वह आपको आशीर्वाद देंगे| कृष्ण के अवतार चैतन्य महाप्रभु अत्यंत दयालु हैं| वह तुम पर प्रसन्न हो तुम्हारे इच्छाएं पूर्ण करेंगे|'

हुए अति प्रसन्न प्रतापरुद्र राजन सुन यह वचन |
पकड़ लिए तब श्री सार्वभौम भट्टाचार्य के चरन || (५३७)
नहीं कोई शुभेच्छु समान आपके हे संत महन |
करूं वही जो आदेश आपका दूँ यह दृढ़ वचन || (५३८)

भावार्थ: *सम्राट प्रतापरुद्र यह वचन सुन अति प्रसन्न हुए| उन्होंने श्री सार्वभौम भट्टाचार्य के चरण पकड़ लिए| 'हे महान संत, आपके समान शुभेच्छु कोई नहीं है| वही करूंगा जो आपने आदेश दिया, यह मेरा दृढ़ वचन है|'*

आया जब पावन समय रथ यात्रा जगन्नाथ भगवन |
किए वही नृप प्रतापरूद्र कहे जैसा संत महन || (५३९)
हुए अति प्रसन्न महाप्रभु देख भाव सरल राजन |
लगा लिए स्व-वक्ष और दिए अनगिनत आशीर्वचन || (५४०)

भावार्थः *जब जगन्नाथ भगवान् की रथ यात्रा का पवित्र समय आया तो सम्राट प्रतापरुद्र ने वही किया जैसा महान संत ने कहा था| राजा का अत्यंत सरल भाव देख महाप्रभु अत्यंत प्रसन्न हुए| उन्होंने उन्हें अपने वक्ष से लगा लिया और ढेरों आशीर्वाद दिए|*

गुंडिचा मंदिर को शुद्ध करना

पूर्व रथ यात्रा पर्व करें भक्त शुद्ध गुंडिचा भवन |
हो सके जिस से मंदिर योग्य विश्राम हेतु भगवन || (५४१)

भावार्थः *रथ यात्रा उत्सव से पूर्व भक्त गुंडिचा भवन को शुद्ध करते हैं जिससे मंदिर भगवान् के विश्राम हेतु योग्य हो सके|*

हैं एक ही प्रभु करें जो सृष्टि का सृजन पालन |
जैसे हैं एक रवि और एक शशि होते उदय भुवन || (५४२)
करते प्रकट स्वरुप भगवान् यथा हो भाव भक्तजन |
समान शशि यद्यपि बदलते रहते स्वरूप प्रति दिवन् || (५४३)
पर हैं शशि हर रूप चाहे बदलें कितने भी निरूपन |
हैं कृष्ण एक ही यद्यपि लिए अवतार अनेक वर्पन् || (५४४)

भावार्थः *जो सृष्टि का सृजन और पालन करते हैं, वह भगवान् एक ही हैं, जैसे सूर्य और चन्द्रमा एक ही हैं जो पृथ्वी पर उदय होते हैं| भक्तों के भाव के अनुसार प्रभु अपना स्वरुप प्रकट करते हैं|जिस प्रकार चन्द्रमा प्रतिदिन अपना रूप बदलते हैं, लेकिन हर रूप में वह चन्द्रमा ही हैं| उसी प्रकार कृष्ण एक ही हैं यद्यपि उन्होंने अनेक रूप में अवतार लिए हैं|*

हम सब जीव भी नहीं भिन्न पर हैं अंश श्री भगवन |
पर हेतु विनियम नहीं बन सकते स्वयं प्रभु समन || (५४५)
हैं हम दास हरि समझो यह भली भांति हे भूजन |
है युगपत सम्बन्ध प्रभु भिन्न और अभिन्न मनुज तन || (५४६)

भावार्थः *हम सब जीव भी प्रभु से भिन्न नहीं हैं, उनके ही अंश हैं| लेकिन सीमाओं के कारण हम प्रभु समान नहीं बन सकते| हे प्राणियो, हम भगवान् के सेवक हैं, यह भली भांति समझ लो| युगों से प्राणियों का सम्बन्ध प्रभु से भिन्न और अभिन्न का रहा है|*

जैसे लगतीं किरण रवि अभिन्न ताप पर हैं दो भिन्न |
सम्बन्ध अग्नि संग दाह लगे अभिन्न पर हैं यह भिन्न || (५४७)
सादृश्य समझो जीव भिन्न और अभिन्न श्री भगवन |
रहता जीव सदा मायावश पर प्रभु माया नियंत || (५४८)

भावार्थ: *जिस प्रकार सूर्य की किरणें और तपन अभिन्न लगती हैं परन्तु यह दोनों भिन्न हैं| अग्नि का सम्बन्ध दाह से अभिन्न लगता है पर यह भिन्न है| उसी प्रकार जीव श्री भगवान् से भिन्न और अभिन्न है| प्राणी सदा मायावश रहता है जबकि प्रभु माया के स्वामी हैं|*

मध्य जीव और हरि भेद अभेद को समझाए महामन |
दिए नाम अचिन्त्य भेदाभेद महाप्रभु चैतन्य पावन || (५४९)
दासता कृष्ण ही हमारा परम धर्म समझो भूजन |
अन्यथा वशीभूत माया प्रभु पड़ो बंधन जन्म-मरन || (५५०)

भावार्थ: *जीव और भगवान् के मध्य इस भेद और अभेद को गौरांग समझाए हैं| पवित्र चैतन्य महाप्रभु ने इसे अचिन्त्य भेदाभेद (सिद्धांत) नाम दिया है| हे प्राणियो, कृष्ण की दासता ही हमारा परम धर्म है, यह समझो| अन्यथा प्रभु की माया के वशीभूत हो जन्म-मरण के बंधन में पड़ जाओगे|*

होते अवतरित धरा भगवान् हेतु कल्याण भूजन |
कभी भेजते भू स्व-जन करने विकास धर्म सनातन || (५५१)

भावार्थ: *भगवान् पृथ्वी पर प्राणियों के कल्याण के लिए अवतरित होते हैं| कभी वह धरा पर सनातन धर्म का विकास करने स्व-जन (अपने भक्त को) भेजते हैं|*

नहीं कर पाते जन अनुभव हरि शुद्ध चिन्मय वर्पन् |
हेतु काम क्रोध मद लोभ मात्सर्य सम हिय दुर्गुन || (५५२)

भावार्थ: *प्राणी हृदय में काम, क्रोध, मद, लोभ, मात्सर्य समान दुर्गुण होने के कारण प्रभु के शुद्ध, चिन्मय स्वरुप का अनुभव नहीं कर पाते|*

नहीं हों प्रकट हरि हिय उनके जो दास इन दुर्गुन |
रहती लालसा विषय भोग युक्त अशुद्ध चित्त भूजन || (५५३)

भावार्थ: *जो इन दुर्गुणों के दास हैं, उनके हृदय में भगवान् प्रकट नहीं होते| अशुद्ध चित्त से युक्त प्राणियों में विषय भोग की लालसा रहती है|*

है अथाह सागर प्रेम चिन्मय धाम श्री मधुसूदन |
कर निःस्वार्थ सेवा उनकी पाएं अपार आनंद जन || (५५४)

भावार्थ: *श्री कृष्ण के चिन्मय धाम में प्रेम का अथाह सागर है| उनकी निःस्वार्थ सेवा कर प्राणी अपार आनंद की प्राप्ति करते हैं|*

है नितांत शुद्ध हृदय हेतु प्रबुद्ध प्रेम भगवन |
करें साधक निःस्वार्थ सेवा हरि है इस हेतु साधन ||
करना स्वच्छ गुंडिचा मंदिर करता यह लक्ष्य निष्पन्न || (५५५)

भावार्थ: *भगवान् में प्रेम जागरण करने के लिए शुद्ध हृदय होना आवश्यक है| भगवान् की निःस्वार्थ सेवा करना इसका (हृदय शुद्ध करने का) साधन है| गुंडिचा मंदिर को स्वच्छ करना इस उद्देश्य की पूर्ति करता है|*

दी यह शिक्षा स्वयं महाप्रभु चैतन्य अवतार भगवन |
करते वह स्वयं स्वच्छ काल रथ यात्रा गुंडिचा भवन || (५५६)

भावार्थ: *यह शिक्षा भगवान् के अवतार चैतन्य महाप्रभु ने स्वयं दी है| रथ यात्रा के समय गुंडिचा मंदिर को वह स्वयं स्वच्छ करते थे|*

पूर्व पधारे महाप्रभु इस जगन्नाथपुरी पावन |
करते यह कार्य सेवक सम्राट निर्वेद हेतु वेतन || (५५७)

भावार्थ: *महाप्रभु के इस पवित्र जगन्नाथपुरी में पधारने से पूर्व यह कार्य सम्राट के सेवक भावनाहीन हो केवल वेतन के लिए यह कार्य करते थे|*

हीन भाव भक्ति हिय न कर सकें वह जगन्नाथ प्रसन्न |
देख यह दशा अयथा हुए अत्यंत दुःखी चैतन्य भगवन || (५५८)
मिले पुरोहित काशीमिश्र और कहे हूँ मैं अर्दन |
भेजो तुरंत समाचार नृप करूँ मैं स्वयं मार्जन || (५५९)
नहीं आवश्यक करें नियुक्त सेवक हेतु इस वर्तन |
करें वह व्यवस्था केवल कुछ झाड़ू और जल भाजन || (५६०)

भावार्थ: *हृदय में भक्ति भाव हीनता से वह जगन्नाथ भगवान् को प्रसन्न नहीं कर सकते थे| यह दुर्दशा देख चैतन्य महाप्रभु अत्यंत दुःखी हुए| वह (राज) पुरोहित काशीमिश्र से मिले और कहा मैं अत्यंत दुःखी हूँ| सम्राट को समाचार भेजो कि मैं स्वयं सफाई करूंगा| इस कार्य के लिए सेवकों की नियुक्ति आवश्यक नहीं है| वह केवल कुछ झाड़ू और घड़ों का प्रबंध कर दें|*

हुए नृप विस्मित सुन पुरोहित काशीमिश्र वचन |
धन्य महाप्रभु हैं आपके भाव दृढ़ भक्ति भगवन || (५६१)
हैं हम अति सुभग करें यह कार्य स्वयं चैतन्य कृष्न |
दिए आदेश महामात्य करें वह सब उचित प्रबन्धन || (५६२)
हूँगा स्वयं भी उपस्थित सम पूर्वज करने मार्जन |
यह भव्य कार्य हेतु महाप्रभु देगा शिक्षा सब जन || (५६३)

भावार्थ: *सम्राट (राज) पुरोहित काशीमिश्र के वचन सुन विस्मित हुए| 'हे महाप्रभु, आप धन्य हैं जो भगवान् के प्रति आपके प्रगाढ़ भक्ति भाव हैं| हम अत्यंत भाग्यशाली हैं कि यह कार्य स्वयं चैतन्य कृष्ण करेंगे|' महामंत्री को आदेश दिए कि वह उचित प्रबंध करें और बोले, 'मैं स्वयं भी पूर्वजों की भांति इस स्वच्छता कार्य में उपस्थित हूँगा| महाप्रभु का यह भव्य कार्य समस्त प्राणियों के लिए शिक्षा देगा|'*

पा अनुमति नृप गए चैतन्य अग्रत गुंडिचा भवन |
हुई एकत्रित अपार भीड़ सुन महाप्रभु विवेचन || (५६४)
थे सब के कर झाड़ू कलश आदि वस्तु हेतु मार्जन |
हो प्रसन्न महाप्रभु लगाए तब सब के शीष चन्दन || (५६५)

भावार्थ: *सम्राट की अनुमति पा चैतन्य (महाप्रभु) गुंडिचा मंदिर के आगे पहुंचे| महाप्रभु का संकल्प सुन अपार भीड़ एकत्रित हो गई| सब के हाथों में सफाई के लिए झाड़ू और कलश आदि वस्तुएं थीं| महाप्रभु ने प्रसन्न हो सब के मस्तिष्क पर चन्दन (का तिलक) लगाया|*

लेते हरि नाम जपते महामंत्र हरे राम हरे कृष्न |
करने लगे स्वच्छ पथ प्रजाजन समक्ष गुंडिचा भवन || (५६६)
तत्पश्चात किए प्रवेश भीतर मंदिर चैतन्य भगवन |
स्व-कर करने लगे तब स्वच्छ अंदर बाहर गुंडिचा भवन || (५६७)

भावार्थ: *प्रभु का नाम लेते हुए और महामंत्र 'हरे राम,हरे कृष्ण' का जाप करते हुए सभी प्रजाजन गुंडिचा भवन के आगे मार्ग को स्वच्छ करने लगे| तत्पश्चात चैतन्य महाप्रभु ने मंदिर के अंदर प्रवेश किया| अपने हाथों से वह गुंडिचा मंदिर को अंदर बाहर से स्वच्छ करने लगे|*

कहे महाप्रभु करो जब कोई कार्य सेवा भगवन |
बोलते हुए हरि बोल करो सदा अविरल कीर्तन || (५६८)
करेंगे तब अनन्य कृपा तुम पर श्री जगन्नाथ भगवन |
बिन किए हरि संकीर्तन यदि करो तुम कार्य भगवन || (५६९)
होगा वह निष्फल कर्म नहीं भक्ति प्रति आनंद दायन |
ले शिक्षा यदि करें हम हर कार्य ले नाम नारायन || (५७०)
होंगे शुद्ध हृदय हमारे खुलें द्वार भक्ति भगवन |
हो मनुज जीवन सफल बढ़े प्रीत प्रभु अविच्छिन्न || (५७१)

भावार्थ: *महाप्रभु बोले, 'जब भी कोई प्रभु की सेवा का कार्य करो, 'हरि बोल' उच्चारण करते हुए सदा सतत कीर्तन करो| तब तुम पर श्री जगन्नाथ भगवान् अनन्य कृपा करेंगे| बिना हरि संकीर्तन किए यदि प्रभु का कार्य करोगे तो वह निष्फल कर्म बन कर रह जाएगा, प्रभु के प्रति भक्ति नहीं|' इस शिक्षा को ग्रहण कर यदि हम हर कार्य प्रभु का नाम ले कर करें, तब हमारे हृदय शुद्ध होंगे और प्रभु की भक्ति का द्वार खुल जाएगा| मनुष्य जीवन सफल होगा और भगवान् से निरंतर प्रेम बढ़ेगा|*

लगा रहे थे झाड़ू और धो रहे थे तल सहस्त्रस जन |
गूँज रही थी ध्वनि चहुँ ओर हरे राम हरे कृष्न || (५७२)
किए इस प्रकार स्वच्छ बाहर भीतर गुंडिचा भवन |
करो समान शुद्ध स्व-हृदय सन्देश है यही भगवन || (५७३)

भावार्थ: *सहस्त्रों प्राणी झाड़ू लगा रहे थे और तल को धो रहे थे| चारों ओर 'हरे राम, हरे कृष्ण' की ध्वनि गूँज रही थी| इस प्रकार गुंडिचा मंदिर को अंदर और बाहर से स्वच्छ किया| इसी प्रकार अपने हृदय को शुद्ध करो, यही प्रभु का सन्देश है|*

मायाबद्ध जीवों के कष्ट

हो हरि भक्ति प्रमुख लक्ष्य समझो भली भांति भूजन |
करो स्मरण श्रीलरूप गोस्वामिपाद के मधुर वचन || (५७४)
रहोगे विचलित सदा नहीं हृदय यदि भक्ति भगवन |
कर त्याग इच्छा दोष-दृष्टि ओर हरि करो शुद्ध चेतन || (५७५)

भावार्थः *हे प्राणियों, हरि भक्ति ही प्रमुख लक्ष्य बनाओ| श्रीलरूप गोस्वामिपाद के मधुर वचन स्मरण करो| यदि हृदय में प्रभु की भक्ति नहीं है तो सदैव विचलित रहोगे| इच्छा का और प्रभु में दोष-दृष्टि का त्याग कर अपनी आत्मा को शुद्ध बनाओ|*

त्यागो अन्य अभिलाषा जैसे जब तक रहूँ भुवन |
करता रहूँ इन्द्रियादि विषय भोगों का सेवन || (५७६)
करती यह युक्त कंटक तृण सम केवलाभक्ति भेदन |
नहीं हो प्राप्त नित्य आनंद यदि लिप्त वासना मन || (५७७)
करो कितने भी कर्म-चेष्टा याग-यज्ञ तप और ददन |
वासना युक्त कर्म ढके शुद्ध मन सम धूलि दर्पन || (५७८)

भावार्थः *अन्य अभिलाषा का त्याग करो जैसे मैं पृथ्वी पर जब तक रहूँ (अर्थात जीवित रहूँ), तब तक इन्द्रियादि विषय भोगों का सेवन करता रहूँ| यह (भावना) कांटे से युक्त तृण के समान केवलाभक्ति (प्रभु की पूर्ण भक्ति) को भेद देती है (अर्थात प्रभु की भक्ति को नष्ट कर देती है)| यदि मन (भोग) वासना में लिप्त हो तो नित्य (परम) आनंद की प्राप्ति नहीं हो सकती चाहे कितने भी कर्म-चेष्टा, याग-यज्ञ, तप और दान करो| वासना युक्त कर्म शुद्ध मन को उसी प्रकार ढक लेता है जैसे धुल दर्पण को|*

युक्त वासना सत और असत कर्म करते मलिन मन |
रहो दूर कर्म वासना करते यह विमुख भक्ति भगवन || (५७९)
नहीं कर सको दूर वासना हेतु कर्म समझो भूजन |
नहीं बुझा सके घृत अग्नि है प्रकृति प्रचोदन || (५८०)

भावार्थ: *वासना से युक्त सत और असत कर्म (दोनों प्रकार के ही कर्म) मन को दूषित करते हैं| वासना कर्म से दूर रहो क्योंकि यह प्रभु की भक्ति से विमुख करते हैं| हे प्राणी, वासना को कर्मों द्वारा (चाहे वह असत हों या असत) दूर नहीं कर सकते (अर्थात केवल प्रभु की भक्ति ही वासना को दूर कर सकती है)| यह प्रकृति का नियम है कि घृत अग्नि को नहीं बुझा सकता|*

केवल शुद्ध भक्ति प्रति हरि करती दूर भाव वासन |
करे भक्ति निर्मल हृदय करें वास तब वहां भगवन || (५८१)

भावार्थ: *केवल प्रभु की शुद्ध भक्ति ही वासना भाव को दूर करती है| भक्ति हृदय को निर्मल करती है तब वहां प्रभु वास करते हैं|*

नहीं हों दूर वासना हेतु करें जन भक्ति प्रदर्शन |
पर रहे भाव कपट निषिद्ध आचार लाभ उनके मन || (५८२)
न बनो सम पूतना ममता बाह्य पर भीतर विष गहन |
जब तक हिय कपट नहीं हो प्रवेश मन भगवद भजन || (५८३)

भावार्थ: *प्राणियों के भक्ति प्रदर्शन से वासना दूर नहीं हो सकती यदि हृदय में कपट भाव, निषिद्ध आचरण, लाभ आदि हों| पूतना के समान मत बनो जिसके बाहर तो ममता है परन्तु भीतर घोर विष है| जब तक हृदय में कपट रहता है तब तक मन में भगवद भजन प्रवेश नहीं कर सकता|*

त्यागो भाव प्रतिष्ठाशा सम समझें मुझे जन महन |
प्रदर्शन हरि भक्ति हेतु स्व-लाभ बनाए मनुज दुर्जन || (५८४)

भावार्थ: *प्रतिष्ठाशा के भाव का त्याग करो जैसे प्राणी मुझे महात्मा समझें| लाभ के हेतु प्रभु की भक्ति का प्रदर्शन प्राणी को दुर्जन बनाता है|*

होते पतित अपि महापुरुष महात्मा संतगन |
न हो यदि हृदय परिपूर्ण प्रेम श्री कृष्ण भगवन || (५८५)

कहें चैतन्य महाप्रभु सुनो ध्यान से मेरे वचन |
हो प्रेम सम श्रील हरिदास ठाकुर प्रति भगवन || (५८६)

भावार्थ: *यदि हृदय भगवान् श्री कृष्ण के प्रेम में परिपूर्ण न हो, तो महापुरुष, महात्मा और संतगण भी पतित हो जाते हैं| चैतन्य महाप्रभु कहते हैं कि मेरे वचन ध्यान से सुनो, 'श्रील हरिदास ठाकुर जी के समान भगवान् के प्रति प्रेम रखो|'*

आए पाश्चात्य देश से पुरी एक बार कुछ भक्तगन |
यद्यपि नहीं मिली अनुमति कर सकें जगन्नाथ दर्शन || (५८७)
गए टोटा गोपीनाथ श्रील हरिदास स्थान श्मशयन |
देखे माला शोभित कंठ श्रील सिद्ध बकुल स्थापन || (५८८)

भावार्थ: *पाश्चात्य देश से एक बार कुछ भक्तगण पुरी आए| यद्यपि उन्हें जगन्नाथ दर्शन की अनुमति तो नहीं मिली, पर वह टोटा गोपीनाथ और श्रील हरिदास (ठाकुर) जी के समाधि स्थल पर गए| सिद्ध बकुल में उन्होंने श्रील (हरिदास ठाकुर जी) के कंठ में शोभित माला देखी|*

हुई इच्छा हृदय पा सकें यह कण्ठमाल एक भक्तगन |
दे महत धन पुजारी लिए वह यह माला हुए प्रसन्न || (५८९)
सोचे जपूँ यह माला बनूँ मैं भी सम श्रील महन |
होगा अति सम्मान मेरा पड़ेंगे सब जन मेरे चरन || (५९०)

भावार्थ: *एक भक्त के हृदय में ऐसी इच्छा हुई कि वह इस कण्ठमाल को लें| पुजारी को अति धन देकर उन्होंने वह माला ले ली और प्रसन्न हुए| सोचा कि इस माला से जप करने से मैं भी श्रील (हरिदास ठाकुर) के समान बनूँ| मेरा अत्यंत मान होगा और सभी प्राणी मेरे चरणों पर पड़ेंगे|*

करते जाप इस प्रकार वह टहल रहे थे तट धृत्वन् |
उठी लहर उच्च तभी सागर खोये अपना संतुलन || (५९१)
बह गई कण्ठमाल अगाध सागर हुए वह अति उद्विग्न |
मिला फल उन्हें विचार बन सकें समान श्रील महन || (५९२)

भावार्थ: *इस प्रकार जाप करते वह समुद्र तट पर टहल रहे थे| तभी समुद्र से एक ऊंची लहर आई और वह अपना संतुलन खो बैठे| कण्ठमाल समुद्र के गहरे आगोश में समा गई| वह विचलित हो गए| महात्मा श्रील (श्री हरिदास ठाकुर जी) के समान बनने के विचार का उन्हें फल मिल गया|*

मिलती शिक्षा हमें कर हृदय शुद्ध और करते नमन |
करें हम निष्कपट भाव से श्रील का पथ अनुसरन || (५९३)
कर जप माला किए तप् महान संत ऋषि भक्तगन |
पर बिन प्रेम हिय प्रति प्रभु न पाएं भक्ति भगवन || (५९४)

भावार्थ: *इससे हमें शिक्षा मिलती है कि हृदय को शुद्ध और (महापुरुषों को) नमन करते हुए हम निष्कपट भाव से श्रील जी के पथ का अनुसरण करें| जैसा कि महान संत, ऋषि और भक्तगण माला जपते हैं, (उनका उसी प्रकार अनुसरण करने से), पर बिना प्रभु के प्रति प्रेम के भगवान् की भक्ति नहीं पा सकते|*

कहे महाप्रभु चैतन्य करो   अहिंसा   का अनुसरन |
अर्थ अहिंसा अवश्य न करो वध कभी किसी जीवन || (५९५)
पर रहे स्मरण नहीं हो कष्ट किसी जन हेतु कटु वचन |
न करो कभी ईर्ष्या द्वेष और निंदा वैष्णव भक्तगन || (५९६)

भावार्थ: *चैतन्य महाप्रभु ने कहा है कि अहिंसा का अनुसरण करो| अहिंसा का अर्थ अवश्य ही किसी के जीवन को क्षति पहुंचाना नहीं हैं, परन्तु स्मरण रहे कि कटु वचन से भी किसी प्राणी को कष्ट न हो| वैष्णव भक्तगण से ईर्ष्या, द्वेष न करो और न उनकी निंदा करो|*

पाओ निवृति इन दुर्गुण कर आज्ञा गुरु पालन |
होंगे दूर भव बंधन पाओगे तब तुम निर्मोचन || (५९७)
न रह माया बद्ध जीव तब होगा हृदय अति पावन |
यही एक विधि पा सकोगे प्रेम और कृपा भगवन || (५९८)

भावार्थः *गुरु की आज्ञा का पालन कर इन दुर्गुणों से निवृति पाओ| तब सांसारिक बंधन दूर होंगे और तुम्हें मोक्ष की प्राप्ति होगी| जीव माया बद्ध नहीं होगा और हृदय शुद्ध होगा| यही एक उपाय है जिससे प्रभु का प्रेम और कृपा पा सकोगे|*

वैष्णव भक्तों के गुण

सुनो अब कहे जो महाप्रभु गुण वैष्णव भक्तगन |
नहीं करते कभी निषिद्ध आचार ऐसे महान जन || (५९९)
जैसे रहें ब्रह्मचारी व् सन्यासी दूर काम भावन |
करते त्याग उसी प्रकार वैष्णव नास्तिक दुर्जन || (६००)

भावार्थ: *जो महाप्रभु ने वैष्णव भक्तों के गुण कहे हैं, वह अब सुनो| यह महान प्राणी (वैष्णव भक्त) कभी निषिद्ध आचार नहीं करते| जैसे ब्रह्मचारी और सन्यासी काम भावनाओं से दूर रहते हैं, ऐसे ही वैष्णव (भक्त) दुष्ट नास्तिक प्राणियों का त्याग कर देते हैं|*

हों दूर अवगुण जब होता जन अग्रसर भक्ति भगवन |
छोड़ सब अन्य साधन हो मग्न साधना हरि अनुक्षन || (६०१)

भावार्थ: *जब प्राणी भगवान् की भक्ति की ओर अग्रसर होता है, तब यह अवगुण दूर होते हैं| अन्य विधियों (प्रभु प्राप्ति हेतु) को छोड़ केवल भगवान् की साधना में निरंतर मग्न हो|*

समझो शब्द भली भांति कहे जो चैतन्य चरित भगवन |
कर त्याग संग अवैष्णव करो केवल वैष्णव अनुसरन || (६०२)
लौकिक और मायावादी को समझो अवैष्णव जन |
कृष्ण अभक्त और करता जो अवैध स्त्री संग दुर्जन || (६०३)
डूबा रहता त्रिवर्ग अर्थ काम अधर्म जो पापिन |
नहीं उपयुक्त बन सकें वैष्णव प्रिय प्रभु यह जन || (६०४)

भावार्थ: *जो प्रभु ने 'चैतन्य चरित' में शब्द कहे हैं, उन्हें भली भांति समझो| अवैष्णव प्राणियों का त्याग कर केवल वैष्णवों का अनुसरण करो| लौकिक, मायावादी, कृष्ण का अभक्त और जो दुष्ट अवैध स्त्री संग करता है, उसे अवैष्णव समझो| ऐसा पापी अर्थ, काम अधर्म, इन तीन वर्गों में डूबा रहता है| वह प्रभु का प्रिय वैष्णव होने के योग्य नहीं है|*

करो नियंत्रित वेग वाणी क्रोध जिह्वा उदर मन |
जननेन्द्रिय आदि क्रियाएं जो हेतु पतन भूजन || (६०५)

भावार्थ: *वाणी, क्रोध, जिह्वा, उदर, मन और जननेन्द्रिय आदि क्रियाएं के वेग को, जो मनुष्य के पतन का कारण हैं, नियंत्रित करो|*

कर सके नियंत्रण जो यह विकार वैष्णव धीर जन |
करता वह शासन भू करता विश्व उसका अनुसरन || (६०६)

भावार्थ: *जो वैष्णव धीर प्राणी इन विकारों को नियंत्रित कर सकता है, वह पृथ्वी पर शासन करता है| विश्व उसका अनुसरण करता है |*

है जिह्वा मूल कारण इन षट् विकार वेग भूजन |
यदि है वश जिह्वा होंगे अन्य वेग स्वतः नियन्त्रन || (६०७)

भावार्थ: *इन छै विकारों के वेग का मुख्य कारण जिह्वा है| यदि जिह्वा वश में हो तब अन्य वेग (विकार) स्वतः ही नियंत्रित होने|*

होते कार्य दो जिह्वा वदन और रस ग्रहण भोजन |
है अति आवश्यक लगाओ जन अंकुश कार्य वदन || (६०८)

भावार्थ: *जिह्वा के दो कार्य होते हैं, बोलना और भोजन का स्वाद चखना| हे प्राणी, इसके बोलने के कार्य पर अंकुश लगाना अति आवश्यक है|*

नहीं यदि अंकुश वदन जिह्वा हो जाता नष्ट जीवन |
करो स्मरण महाभारत ली आहुति अनेक युद्धिवन || (६०९)
किए जब इंद्रप्रस्थ अश्वमेध यज्ञ धर्मराज राजन |
थे उपस्थित वहां धृतराष्ट्र सुत युवराज दुर्योधन || (६१०)

भावार्थ: *यदि जिह्वा के बोलने पर अंकुश नहीं है, तो जीवन नष्ट हो जाता है| महाभारत को स्मरण करो जिसने अनेक योद्धाओं की आहुति ली| जब सम्राट धर्मराज*

(युधिष्ठिर) ने इंद्रप्रस्थ में अश्वमेध यज्ञ किया तब वहां धृतराष्ट्र पुत्र युवराज दुर्योधन उपस्थित थे|

हेतु माया था कठिन करना भेद जल थल उनके भवन |
चलने लगे सतह पर जल समझ थल युवराज दुर्योधन || (६११)
गिर पड़े सरस् भीग गए वस्त्र और उनका समस्त तन |
हंसी द्रौपदी देख दृश्य बोलीं हे सुत हीन-नयन || (६१२)
लगता है हो तुम भी अंध न कर सको भेद थल उदन् |
चुभे सम तीर हिय दुर्योधन द्रौपदी के कटु वचन || (६१३)
यही हेतु लिए संकल्प युवराज लें इसका निर्यातन |
हुआ युद्ध महाभारत हेतु कई लक्ष योद्धा मरन || (६१४)

भावार्थ: *माया के कारण उनके महल में जल और थल में अंतर करना कठिन था (उनका महल मायावी था)| युवराज दुर्योधन थल समझ जल की साथ पर चलने लगे| उस पानी के सरोवर में वह गिर पड़े| उनका समस्त शरीर और वस्त्र भीग गए| यह दृश्य देख द्रौपदी हंसी और बोलीं, 'लगता है नेत्रहीन का पुत्र भी अंधा है जो जल और तहलका भेद नहीं कर सकता|' द्रौपदी के यह कटु वचन दुर्योधन के हृदय को तीर की भांति चुभ गए|इसका प्रतिशोध लेने का उन्होंने संकल्प किया जिसके कारण महाभारत युद्ध हुआ जिसमें कई लाख योद्धा मारे गए|*

कहे महाप्रभु लगाओ अंकुश वदन न हो नष्ट जीवन |
उसी प्रकार हो नियंत्रित जिह्वा कर सके भेद भोजन || (६१५)
नहीं करे अभक्ष्य भोज सम मांस मछली प्याज लहसुन |
रहे दूर निषिद्ध खाद्य पदार्थ और नशीले व्यसन || (६१६)

भावार्थ: *महाप्रभु ने कहा है कि बोलने पर अंकुश लगाओ ताकि जीवन नष्ट न हो| उसी प्रकार जिह्वा पर नियंत्रण रखो कि वह भोजन में भेद कर सके| अभक्ष्य भोजन जैसे मांस, मछली, प्याज, लहसुन नहीं खाए| निषिद्ध खाद्य पदार्थ एवं नशीले व्यसन से दूर रहे|*

है सरल विधि कर सको नियंत्रण जिह्वा हे भूजन |
करो ग्रहण भोजन वही जो हो अर्पित प्रथम भगवन || (६१७)
समझ प्रभु प्रसाद करो तुम तब पावन भोज सेवन |
करते रहो जाप महामंत्र हरे राम हरे कृष्न || (६१८)

भावार्थ: *हे प्राणियों ,जिह्वा को नियंत्रित करने का एक सरल उपाय है| वही भोजन ग्रहण करो जो पहले प्रभु को अर्पित है| इसे प्रभु का प्रसाद समझ तब इस पवित्र भोजन का सेवन करो| महामंत्र 'हरे राम हरे कृष्ण' का जाप करते रहो|*

करो पालन श्रील रुपि गोस्वामीपाद वचन |
न करो अति और मित आहार तथा वृथा वदन || (६१९)
करो त्याग प्रवृत्ति संग दुर्जन और संचय धन |
समझो रिपु भक्ति प्रतिकूल चेष्टा और चंचल मन || (६२०)

भावार्थ: *श्रील रुपि गोस्वामीपाद के वचनों का पालन करो| अधिक अथवा कम आहार न करो| वृथा न बोले| दुर्जन के संग और धन संचय की प्रवृत्ति का त्याग करो| भक्ति के प्रतिकूल चेष्टा और चंचल मन को शत्रु समझो|*

रहेंगे जब तक यह दोष और अनर्थ हृदय भूजन |
नहीं होगी कृपा और विराजमान उस हिय भगवन || (६२१)

भावार्थ: *जब तक यह दोष और अनर्थ प्राणी के हृदय में रहेंगे, तब तक प्रभु न तो उनके हृदय में विराजमान होंगे और न ही उनकी कृपा प्राप्त होगी|*

नित्यानन्द रुप प्रभु और उनके प्रकाश गुरुजन |
करेंगे   दूर यह दुर्गुण   करो उन्हें   पूर्ण   समर्पन || (६२२)
करो स्मरण महाभारत बने जब प्रभु सारथी अर्जुन |
हुए शरणागत   अर्जुन तब किए वह पथ प्रदर्शन || (६२३)

भावार्थः *जब नित्यानंद स्वरुप प्रभु और उनके प्रकाश गुरुदेव को पूर्ण समर्पण करेंगे तब वह यह दुर्गुण दूर करेंगे| महाभारत (युद्ध) को स्मरण करो जब प्रभु अर्जुन के सारथी बने थे| जब अर्जुन उनके शरणागत हुए तब उन्होंने उनका मार्ग प्रदर्शन किया|*

सद्गुरु के लक्षण

दिखाए हमें चैतन्य स्वयं सुनो यह सद्गुरु लक्षन |
एक बार कर रहे थे गौरा गुंडिचा मंदिर मार्जन || (६२४)
तभी धो पग महाप्रभु पीया एक भक्त अमृत चरन |
हो क्रुद्ध बोले चैतन्य किया क्यों यह कृत्य श्रमन || (६२५)
हूँ मैं एक लौकिक और प्रभु जगन्नाथ स्वयं भगवन |
है यह अपराध घोर करो समक्ष प्रभु मेरा अर्चन || (६२६)
हे कृपालु हरि करो क्षमा मुझे और इस मूर्ख जन |
पुकारे चैतन्य शिष्य दामोदर सुनो हे प्रिय परिजन || (६२७)
है यह कैसा गौड़ीय भक्त कर रहा अपमान भगवन |
तब हेतु शम चैतन्य पकड़ी बांह दामोदर उस जन || (६२८)
प्रत्यक्ष रूप दी आज्ञा जाओ तुरंत बाहर इस भवन |
पर गए स्वयं संग उसके और बोले सुनो भक्तजन || (६२९)
किए तुम उत्कृष्ट हैं स्वयं चैतन्य जगन्नाथ भगवन |
की लीला हुए रुष्ट दे सकें वह शिक्षा लौकिक भूजन || (६३०)

भावार्थ: *चैतन्य महाप्रभु ने हमें स्वयं सद्गुरु के लक्षण बताए हैं| एक बार चैतन्य महाप्रभु गुंडिचा मंदिर को स्वच्छ कर रहे थे| तभी एक भक्त ने महाप्रभु के चरण धो चरणामृत पी लिया| क्रोधित हो तब चैतन्य महाप्रभु बोले, 'तुमने यह बुरा कर्म क्यों किया? मैं एक साधारण प्राणी हूँ और जगन्नाथ स्वयं भगवान् हैं| उनके समक्ष मेरी अर्चना करना घोर अपराध है| हे कृपालु जगन्नाथ, मुझे और इस मूर्ख मनुष्य को क्षमा करो|' तब वह अपने शिष्य दामोदर को पुकारे, 'हे प्रिय शिष्य, यह कैसा गौड़ीय भक्त है जो जगन्नाथ का अनादर कर रहा है|' तब महाप्रभु शांत हों, इसलिए प्रत्यक्ष में दामोदर जी ने उस भक्त की बांह पकड़ कर उसे मंदिर से तुरंत बाहर जाने की आज्ञा दी| साथ में वह स्वयं भी बाहर गए और बोले, 'हे भक्त, सुनो| तुमने अति उत्तम किया| चैतन्य स्वयं ही जगन्नाथ प्रभु हैं| तुमसे रुष्ट होने की लीला की ताकि सांसारिक प्राणियों को शिक्षा दे सकें|'*

जाना समीप जब कर रहें हों विश्राम शची-नंदन |
मांगना क्षमा कह हुई भूल घोर मुझ से भगवन || (६३१)

हैं दयालु वह करेंगे क्षमा सुन तुम्हारा निवेदन |
किया वह भक्त वही कहे जैसा दामोदर भक्त महन || (६३२)
भर अश्रु नैन पड़ पग कर दिए सजल महाप्रभु चरन |
कर क्षमा लगाए कंठ महाप्रभु चैतन्य उस दीन जन || (६३३)

भावार्थ: *(भक्त दामोदर जी ने कहा) 'जब महाप्रभु विश्राम कर रहे हों, तब उनके समीप जाना| उनसे क्षमा मांगना कि हे प्रभु, मुझ से घोर भूल हो गई| महाप्रभु दयालु हैं| तुम्हारा निवेदन सुन वह तुम्हें क्षमा कर देंगे'| उस भक्त ने वही किया जैसा महात्मा दामोदर जी ने बताया| नेत्रों के अश्रु से उसने महाप्रभु के पैरों पर पड़ उनके चरण गीले कर दिए| महाप्रभु ने उस दीन मनुष्य को क्षमा कर दिया और गले लगा लिया|*

दी उत्कृष्ट शिक्षा हेतु इस लीला महाप्रभु महन |
है अनुचित सम्मुख विग्रह करना किसी जन अर्चन || (६३४)
होना क्रोधित दर्शाना प्रेम या देना प्रचोदन |
अतिरिक्त गुरु सम्मुख हरि न करो किसी का अर्चन || (६३५)

भावार्थ: *चैतन्य महाप्रभु ने इस लीला से उत्तम शिक्षा दी| विग्रह के सम्मुख किसी का अर्चन करना, क्रोधित होना, प्रेम दर्शाना या किसी को आज्ञा देना अनुचित है| सद्गुरु के अतिरिक्त प्रभु के समक्ष किसी का भी अर्चन न करें|*

सद्गुरु नहीं देगा अनुमति स्व-शिष्य सम्मुख भगवन |
कर अर्पण पुष्प उन्हें पीए चरणामृत धो उनके चरन || (६३६)
रहते दूर मिथ्य अहंकार सद्गुरु और वैष्णव जन |
समझ दीन स्वयं रहते वह आश्रित निरंतर भगवन || (६३७)

भावार्थ: *प्रभु के सम्मुख सद्गुरु अपने शिष्य को उन पर पुष्प अर्पण कर, उनके चरण धो चरणामृत पीने की अनुमति नहीं देते| सद्गुरु और वैष्णव प्राणी ऐसे मिथ्या अहंकार से दूर रहते हैं| स्वयं को दीन समझ वह सदैव प्रभु पर आश्रित रहते हैं|*

कहें चैतन्य महाप्रभु सुनो सब मेरे गहन वचन |
यदि चाहो करें कृपा प्रभु और आप पाएं मोचन || (६३८)
हो मग्न राधे कृष्ण करो अनुभव गंध उनकी स्व-तन |
समझ स्वयं सम तृण दीन हीन सहिष्णु अधिक विटपिन् || (६३९)
करते हुए सम्मान सद्गुरु कुल वृद्ध जपो नाम भगवन |
मिलेगी शान्ति इहलोक और परलोक निर्मोचन || (६४०)

भावार्थ: *चैतन्य महाप्रभु कहते हैं कि यदि प्रभु की कृपा और आप मोचन चाहते हैं तो सब मेरे गहन वचन सुनो| राधा कृष्ण में मग्न होकर उनकी गंध अपने शरीर में अनुभव करो (अर्थात अपने को उनमें विलीन करो)| अपने को तृण सामान दीन हीन समझ और वृक्ष से भी अधिक सहिष्णु बन अपने सद्गुरु और कुल वृद्धों को सम्मान देते हुए हरि नाम जपो| इससे इहलोक में शान्ति और परलोक (मरण पश्चात) में मोक्ष की प्राप्ति होगी|*

है नाम जप राधे कृष्ण समान करें सेवा श्री भगवन |
हैं त्रि अवस्था नामापराध नामाभास नामपावन || (६४१)
करें जप बिन श्रद्धा युक्त प्रयास और लौकिक बंधन |
है यह नामापराध समझो भली भांति तुम हे भूजन || (६४२)

भावार्थ: *राधा कृष्ण का नाम जपना ही भगवान् की सेवा करने के समान है| नामापराध, नामाभास और नामपावन (नाम जपने की) तीन अवस्थाएं हैं| जब श्रद्धा से रहित, प्रयास के साथ और जग-बंधन में (अर्थात कामना के साथ) जप किया जाता है तो यह नामापराध है, इसे प्राणियों भली भांति समझो|*

यदि हो श्रद्धा हरि पर जपें नाम हेतु लाभ लौक्यन |
कहते इसे नामाभास दे यह अवश्य सुख इस जीवन || (६४३)
पर यदि चाह आनंद इहलोक और परलोक मोचन |
जपो नाम राधा कृष्ण संग श्रद्धा कर आत्म समर्पन || (६४४)
है यह जप हरि नामपावन जो करता शुद्ध अंतःकरन |
करें निवास वहां राधा कृष्ण करते हिय शुद्ध उस जन || (६४५)

भावार्थ: *यदि प्रभु में श्रद्धा हो परन्तु सांसारिक लाभ के लिए हरि नाम जप किया जाता है तो यह नामाभास कहलाता है| यह इहलोक में सुख अवश्य देता है| पर यदि इहलोक में आनंद और परलोक में मुक्ति की चाह है तो आत्मसमर्पण कर श्रद्धा से राधे कृष्ण नाम जपो| यह भगवान् का नामपावन कहलाता है जो अंतःकरण को शुद्ध करता है| वहां राधा कृष्ण निवास करते हैं और उस प्राणी का हृदय शुद्ध हो जाता है|*

कहें महाप्रभु है संभव न लगे मन प्रारम्भ में जपन |
पर रुचि अति करें श्रवण कथा और लीला भगवन || (६४६)
करते श्रवण प्रभु कथा लगेगा एक दिन जप में मन |
अतः सुनो कथा हरि पुनः पुनः संग विशुद्ध भक्तगन || (६४७)

भावार्थ: *महाप्रभु कहते हैं यह संभव है कि प्रारम्भ में जप में मन न लगे| परन्तु हरि कथा और लीला सुनने में अत्यंत रुचि होनी चाहिए| प्रभु कथा सुनते हुए एक दिन जप में मन लगने लगेगा| अतः प्रभु की कथा बार बार विशुद्ध भक्तों के साथ सुनो|*

रहे स्मरण करें जो सद्गुरु होता लक्ष्य उसका पावन |
निःस्वार्थ भाव हेतु करें प्रसन्न वैष्णव संत भगवन || (६४८)
रहित लौकिक कामना करते अर्पण लोकहित जीवन |
करो समर्पित सद्गुरु ऐसे अपना तन मन और धन || (६४९)

भावार्थ: *यह स्मरण रहे कि सद्गुरु जो भी करते हैं, उसका लक्ष्य पवित्र होता है| निःस्वार्थ भावना से वह वैष्णव जन, संत जन और भगवान् की प्रसन्नता के लिए (कार्य) करते हैं| सांसारिक कामनाओं से रहित वह अपना जीवन लोक कल्याण हेतु अर्पित करते हैं| ऐसे सद्गुरु को अपना तन, मन और धन समर्पित करो|*

करो स्मरण कथित कृष्ण श्रीमद्भगवदगीता प्रवचन |
हे कौन्तेय करो जो भी सांसारिक कर्म इस भुवन || (६५०)
सम भोजन होम दान तप आदि करो मुझे सब अर्पन |
करूँ मैं अघहीन तुम्हें पाओ शान्ति और मोचन || (६५१)

भावार्थः *कृष्ण के श्रीमद्भगवद्गीता में कहे प्रवचन स्मरण करो, 'हे कौन्तेय, इस पृथ्वी पर जो भी सांसारिक कर्म करो, जैसे भोजन, होम, दान, तप आदि, सब मुझे अर्पित करो| मैं तुम्हें पाप रहित कर दूंगा| तुम्हें शान्ति और मोक्ष की प्राप्ति होगी|'*

करें यदि हम सदैव पालन निर्देश श्री मधुसूदन |
होगा हिय शुद्ध हमारा पा जाएंगे हम तत्व-भगवन || (६५२)

भावार्थः *यदि हम श्री मधुसूदन के निर्देश का सदैव पालन करें तो हमारा हृदय शुद्ध हो जाएगा और हम परमात्म-तत्व की प्राप्ति कर लेंगे|*

चैतन्य महाप्रभु काल में रथ यात्रा वर्णन

करें वृतांत रथ यात्रा पूर्व महाप्रभु आगमन |
सजते थे त्रिरथ पृथक हेतु बहन भाई और भगवन || (६५३)
होता प्रथम रथ बलराम तब सुभद्रा फिर भगवन |
खींचते थे रथ तीनों गज और सेवक पुरी राजन || (६५४)

भावार्थ: *महाप्रभु के (जगन्नाथ पुरी) आगमन से पहले रथ यात्रा का वृतांत सुनाएं| तीन पृथक रथ भगवान् (जगन्नाथ), भाई (बलराम) और बहन (सुभद्रा) के लिए सजते थे| प्रथम बलराम, उसके बाद सुभद्रा बहन, फिर जगन्नाथ भगवान् का रथ| तीनों रथ हाथी और पुरी सम्राट के सेवक खींचते थे|*

समक्ष रथ नहीं था करता कोई नृत्य और कीर्तन |
थी नीरसता परिसर नहीं भाव भक्ति मध्य भक्तगन || (६५५)

भावार्थ: *रथ के समक्ष कोई नृत्य और कीर्तन का प्रबंध नहीं था| परिसर में नीरसता थी| भक्तों में कोई भक्ति भाव नहीं था|*

हुए अप्रसन्न चैतन्य नहीं यह उचित हो नीरसता जन |
लक्ष्य रथ यात्रा करना जाग्रत भक्ति मध्य भक्त भगवन || (६५६)
है संभव यह तभी जब हो रथ यात्रा रसमय संपन्न |
बोले चैतन्य आओ करें मिल जुल नृत्य और कीर्तन || (६५७)

भावार्थ: *(यह देख) चैतन्य महाप्रभु अप्रसन्न हुए| प्राणियों में नीरसता उचित नहीं है| रथ यात्रा का लक्ष्य भगवद भक्तों में भक्ति जाग्रत करना है| यह तभी संभव है जब रथ यात्रा को रसमय संपन्न किया जाए| चैतन्य महाप्रभु बोले, 'आओ, सब मिल जुल कर नृत्य और कीर्तन करें|'*

सुन आज्ञा महाप्रभु हुए चंहु ओर भक्तगण प्रसन्न |
हुए एकत्रित सहस्त्रस भक्तगण समक्ष प्रभु वाहन || (६५८)

संग महाप्रभु करने लगे सब भक्त नृत्य और कीर्तन |
बजाने लगे ढोल मृदंग आदि वाद्य निपुण वादन || (६५९)
हरि बोल शब्द गूंजने लगे चहुँ ओर नभ और भुवन |
डूबा आनंद और भक्ति रसमय समस्त वातावरन || (६६०)

भावार्थ: *महाप्रभु की आज्ञा सुन चारों दिशाओं में भक्तगण प्रसन्न हुए| सहस्त्रों की संख्या में प्रभु के रथ के समक्ष भक्तगण एकत्रित हुए| महाप्रभु के साथ सभी नृत्य और कीर्तन करने लगे| निपुण संगीतज्ञ ढोल, मृदंग आदि वाद्य बजाने लगे| हरि बोल शब्द से आकाश और पृथ्वी गूँज उठी| समस्त वातावरण आनंद और भक्ति के रस में डूब गया|*

पूर्व आरम्भ रथ यात्रा आएं विश्ववासु वंशजन |
ले गोद विग्रह सुभद्रा बलराम जगन्नाथ भगवन || (६६१)
बिठाएं रथ निर्दिष्ट त्रि विग्रह यथोचित अध्यासन |
था यह कार्य अति कठिन थे अति भारी प्रतियातन || (६६२)
प्रेम विभोर भांति गोपी देते प्रभु मधुर ताडन |
करें प्रयास हों रथारूढ़ प्रभु सहित भाई बहन || (६६३)
पर करें प्रभु लीला आएं धरा नहीं चढ़ें वाहन |
करें प्रयास फिर हो विभोर भक्ति समस्त भक्तगन || (६६४)
कर स्वीकार भक्ति चढ़ें तब प्रभु रथ संग भाई बहन |
बीतता पूरा दिन इस प्रयास हों रथारूढ़ भगवन || (६६५)

भावार्थ: *रथ यात्रा के आरम्भ से पूर्व विश्ववासु वंशजन आते| वह प्रभु जगन्नाथ, बलराम और सुभद्रा के विग्रहों को गोद में लेकर निर्दिष्ट तीनों रथों में यथोचित स्थानों पर बिठाते| यह कार्य अत्यंत कठिन था| विग्रह अति भारी थे| गोपियों की भांति भक्ति में विभोर होकर प्रभु को मधुर गालियां देते हुए वह भगवान, उनके भाई और बहन को रथ पर चढ़ाने का प्रयास करते| प्रभु लीला करते| फिर से भूतल पर आ जाते, रथ में आसीन नहीं होते| भक्ति में डूब समस्त भक्तगण फिर से प्रयास करते| तब उनकी भक्ति को स्वीकार कर प्रभु भाई और बहन के साथ रथ में आसीन होते| प्रभु को रथ में आसीन करने के प्रयास में पूरा दिन बीत जाता था|*

जब हो जाते रथारूढ़ जगन्नाथ भाई और बहन |
करते स्वच्छ पथ ले झाड़ू पुरी नृप संग मंत्रीगन || (६६६)
कर त्याग राजसी वेश समान साधारण प्रजाजन |
छिड़कते जल चन्दन करें आरम्भ रथ यात्रा राजन || (६६७)

भावार्थ: *जब प्रभु (जगन्नाथ), भाई (बलराम) और बहन (सुभद्रा) रथ पर आसीन हो जाते, तब पुरी सम्राट अपने मंत्रीगणों के साथ झाड़ू से रथ के मार्ग को स्वच्छ करते| राजसी वस्त्र त्याग सम्राट साधारण प्रजा के समान चन्दन जल छिड़कते हुए रथ यात्रा को आरम्भ करते|*

तब होते प्रकट श्री चैतन्य महाप्रभु संग भक्तगन |
करते नृप अलंकृत उन्हें तब डाल कंठ माला सुमन || (६६८)
लगाते अपने कर से तिलक मस्तिष्क महाप्रभु चन्दन |
करें प्रजाजन सुशोभित कंठ पुष्पहार सभी भक्तगन || (६६९)
दें आदेश तब चैतन्य हों विभक्त चार समूह सभी जन |
चलो समक्ष रथ करते गुणगान प्रभु और कीर्तन || (६७०)

भावार्थ: *तब महाप्रभु चैतन्य अपने भक्तों के साथ प्रकट होते| सम्राट उनके कंठ में पुष्प माला डाल और मस्तिष्क पर चन्दन लगा उन्हें अलंकृत करते| प्रजाजन सभी भक्तगणों के कंठ को पुष्पमाला से सुशोभित करते| तब चैतन्य महाप्रभु सभी प्राणियों को आदेश देते कि चार भागों में विभक्त हो प्रभु का गुणगान और कीर्तन करते हुए रथ के समक्ष चलो|*

होते प्रत्येक संघ छै गायक और दो मृदंग वादन |
करते नृत्य श्री नित्यानंद होते नेता प्रथम गन || (६७१)
श्री अद्वैताचार्य द्वि श्री हरिदास ठाकुर त्रितन |
श्री वक्रेश्वर पंडित करते नेतृत्व चतुर्थ मंडलन || (६७२)

भावार्थ: *प्रत्येक समूह में छै गायक (कीर्तन करने हेतु) और दो मृदंग बजाने वाले होते थे| नृत्य करते प्रथम समूह के नेता श्री नित्यानंद, श्री अद्वैताचार्य द्वितीय, श्री हरिदास ठाकुर तृतीय और श्री वक्रेश्वर पंडित चतुर्थ समूह का नेतृत्व करते|*

श्रीस्वरुप दामोदर श्रीवास पंडित निपुण गायन |
श्री मुकुंद और श्री गोविन्द घोष करते कीर्तन || (६७३)
चलते समक्ष रथ करते नृत्य होता रसमय वातावरन |
स्वयं प्रभु चैतन्य करते नृत्य चलें संग हरि वाहन || (६७४)

भावार्थ: *गायन में निपुण श्रीस्वरुप दामोदर, श्रीवास पंडित, श्री मुकुंद और श्री गोविन्द घोष कीर्तन करते, नृत्य करते, रथ के समक्ष चलते| वातावरण (भक्ति) रसमय होता| स्वयं महाप्रभु चैतन्य नृत्य करते हुए प्रभु के रथ के साथ चलते|*

होते प्रकट अनेक रूप महाप्रभु तब उस उत्सव महन |
देखता कर रहे नृत्य चैतन्य संग प्रत्येक भक्तगन || (६७५)

भावार्थ: *उस महान उत्सव में चैतन्य महाप्रभु अनेक रूप में प्रकट होते| प्रत्येक भक्त यही देखता कि महाप्रभु उसके साथ नृत्य कर रहे हैं|*

बहती प्रेम अश्रु धारा निरंतर उनके कमल नयन |
करते नृत्य तीव्र गति जैसे कृष्ण लीला पावन || (६७६)

भावार्थ: *उनके कमल नेत्रों से (नृत्य के समय) प्रेम अश्रु धारा बहती| उनके नृत्य की गति तीव्र होती, जैसे कृष्ण की पवित्र लीला|*

करो स्मरण करते जब भोजन नन्दनंदन भांडीरवन |
होता प्रतीत हर सखा करें वह उसके संग भोजन || (६७७)
खिला रहा मैं कृष्ण और खिला रहे वह मुझे व्यंजन |
हैं शत कोटि कृष्ण संग शत कोटि गोपी उपस्थित वन || (६७८)
कर रहे नृत्य कृष्ण संग मध्य द्वि गोपी हो मग्न |
होते प्रकट उसी प्रकार महाप्रभु मध्य इन भक्तगन || (६७९)

भावार्थ: *स्मरण करो जब कृष्ण भांडीरवन में भोजन करते थे तब हर सखा को यही प्रतीत होता था कि वह उसी के साथ भोजन कर रहे हैं| मैं कृष्ण को भोजन खिला रहा हूँ और वह मुझे खिला रहे हैं| शत कोटि गोपियों के मध्य शत कोटि कृष्ण वन में*

उपस्थित हो जाते| प्रत्येक दो गोपियों के मध्य मग्न हो कृष्ण नृत्य करते| उसी प्रकार महाप्रभु भक्तगणों के मध्य (अनेक रूपमें) प्रकट हो जाते|

देख हरि प्रेम चैतन्य होते सम्राट पुरी भक्ति मग्न |
बहती अश्रु धारा नैन और गिर जाते चैतन्य चरन || (६८०)
उठाते तब सार्वभौम भट्टाचार्य लगाते स्व-तन |
हो सुभग अति नृप जो पाए कृपा चैतन्य भगवन || (६८१)
जो दुर्लभ देव ऐश्वर्य कर पा रहे वह आप दर्शन |
धन्य धन्य स्वयं आप और प्रजा बोले भक्त यह वचन || (६८२)

भावार्थ: *चैतन्य महाप्रभु का भगवान् के प्रति प्रेम देख पुरी सम्राट (भगवान् की) भक्ति में मग्न हो जाते| उनके नेत्रों से अश्रु धारा बहती और वह महाप्रभु के चरणों में गिर जाते| तब सार्वभौम भट्टाचार्य उन्हें उठाते और अपने शरीर से लगाते| वह महान भक्त बोलते, 'हे सम्राट, आप अत्यंत भाग्यशाली हैं जो चैतन्य महाप्रभु की आप पर कृपा है| जो ऐश्वर्य देवताओं को भी दुर्लभ है, उसके दर्शन आप कर रहे हैं| आप और आपकी प्रजा धन्य है, धन्य है|'*

पहुंचता रथ जब मध्य मार्ग बलिगण्डी नामक स्थापन |
था जहां ओर वाम सुन्दर पुष्प उद्यान सम वृंदावन || (६८३)
दाहिनी ओर वृक्ष नारियल सुशोभित नारिकेलन |
होता समय करें जगन्नाथ संग भाई बहन भोजन || (६८४)

भावार्थ: *जब रथ मध्य मार्ग में बलिगण्डी नामक स्थान पर पहुंचता, जिसके बाईं ओर वृंदावन के सामान सुन्दर उद्यान था और दाईं ओर नारियल के वृक्ष श्रीफल से सुशोभित थे, तब जगन्नाथ (भगवान्), भाई (बलराम) और बहन (सुभद्रा) का भोजन का समय होता|*

संग मंत्री और रानी करते राजा तब भोज अर्पन |
भाई बलराम बहन सुभद्रा और जगन्नाथ भगवन || (६८५)
अन्य भक्त करते अर्पण स्थान जहां खड़े वह केलिवन |
करते स्वीकार भोग सब भक्त हेतु दृष्टि भगवन || (६८६)

भावार्थः *मंत्री और रानी के साथ तब राजा जगन्नाथ, भाई बलराम और बहन सुभद्रा को भोजन अर्पित करते| अन्य भक्त वन के जिस स्थान पर खड़े थे, वहीं से भोजन अर्पण करते| भगवान् सब के भोग को दृष्टि द्वारा स्वीकार करते|*

हेतु विश्राम तब चले जाते महाप्रभु ओर वाम वन |
लेट जाते छाया वृक्ष एक करते सेवन शीतल पवन || (६८७)
आती मुस्कराहट मुख उनके कर ब्रज लीला स्मरन |
बहने लगते अश्रु प्रेमवश खो जाते वह प्रभु मनन || (६८८)

भावार्थः *विश्राम हेतु तब महाप्रभु वन के बाईं ओर चले जाते| एक वृक्ष की छाया में लेट वह शीतल पवन का सेवन करते| ब्रज लीला का स्मरण कर उनके मुख पर मुस्कराहट आ जाती| प्रेम वश अश्रु बहने लगते और वह प्रभु की साधना में खो जाते|*

तब जाते नृप हेतु चरण सेवा चैतन्य कंज लोचन |
दबाते स्व-कर पग महाप्रभु करते गोपी गीत गायन || (६८९)
हे प्रिय कृष्ण हुआ ब्रज बैकुंठ हेतु लिए आप जनन |
गा रहे ऐश्वर्य महिमा ब्रजमंडल सब देवी देवगन || (६९०)
कर वास श्री यहां कर रहीं अलंकृत प्रत्येक भवन |
पर हम गोपी होतीं खिन्न हेतु विरह जब न हों दर्शन || (६९१)
कर रहीं धारण प्राण हम हेतु लक्ष्य बसें हिय कृष्न |
न हों दूर दृष्टि नहीं सह पाएंगे हम विरह एक क्षन || (६९२)

भावार्थः *तब सम्राट कमल समान नेत्र वाले चैतन्य महाप्रभु की चरण सेवा को जाते| महाप्रभु के पग अपने हाथों से दबाते हुए गोपी गीत का गायन करते| 'हे कृष्ण आपके जन्म लेने से ब्रज स्वर्ग हो गया| सभी देवी देवता ब्रजमण्डल की महिमा और ऐश्वर्य का गुणगान कर रहे हैं| लक्ष्मी यहां वास कर प्रत्येक गृह को अलंकृत कर रहीं हैं (अर्थात निर्धनता दूर कर रहीं हैं)| परन्तु हम गोपी जब आपके दर्शन नहीं होते, तब विरह के कारण दुःखी हो जाती हैं| हम अपने प्राणों को धारण केवल एक लक्ष्य से ही कर रहीं हैं कि कृष्ण हमारे हृदय में बसें| आप हमारी दृष्टि से दूर न हों| हम आपका विरह एक क्षण भी सहन नहीं कर सकते| '*

भाव भक्ति अश्रुमय नैन गा रहे थे गोपी गीत राजन |
हो रहे थे भावाविष्ट अति महाप्रभु सुन नृप गायन || (६९३)
विगलित हिय बोले कौन उड़ेलता यह सुधा वचन |
खोल नेत्र देखा स्वयं नृप बैठे समक्ष कर रहे गायन || (६९४)
धन्य धन्य नृप है प्रेम आपका अनन्य प्रति भगवन |
गाते रहो निरंतर रस गान लगे अति मधुर श्रवन || (६९५)

भावार्थ: *अश्रुमय नेत्र और भक्ति भाव से सम्राट 'गोपी गीत' गा रहे थे| सम्राट के गायन को सुन महाप्रभु अत्यंत भाव विहार हो रहे थे| द्रवित हृदय से महाप्रभु बोले, 'कौन यह अमृत वचन कर्ण में उड़ेल रहा है?' नेत्र खोल कर देखा कि स्वयं सम्राट उनके समक्ष बैठे गायन कर रहे हैं| (महाप्रभु बोले) 'हे सम्राट, आप धन्य हो, धन्य हो, आपका प्रभु के प्रति अनन्य प्रेम है| निरंतर गाते रहो| यह अमृत गान कर्णों को मधुर लग रहा है|'*

गाए तब आगे नृप कहें गोपी डूब प्रेम कृष्न |
होते जब विचलित हम हेतु विरह न पा सकें दर्शन || (६९६)
देती जीवन कथा आपकी है जो सम सुधा भगवन |
करते स्तुति स्वरुप आपके हरि शिव और चतुरानन || (६९७)
हों नष्ट अघ नियति या कर्म सुनें जब कथा भगवन |
अति मंगलमय प्रभु प्रेम दायिनी दे आनंद भक्तजन || (६९८)

भावार्थ: सम्राट आगे गाने लगे, 'कृष्ण प्रेम में डूबी गोपियाँ कहती हैं कि जब हम आपके दर्शन न पाने के कारण विरह में विचलित होते हैं तो आपकी कथा जो अमृत समान है, वह जीवन देती है| आपके स्वरुप की विष्णु, ब्रह्मा और शिव स्तुति करते हैं| हे भगवन, आपकी कथा सुनने से नियति और कर्म द्वारा पाप नष्ट हो जाते हैं| यह (कथा) अति मंगलमय, प्रभु का प्रेम देने वाली और भक्तों को आनंद देने वाली है|'

कथा कृष्ण स्वरुप सुधा करे जो भी श्रवण भूजन |
पा सुख यश धन इहलोक पा जाता परलोक मोचन || (६९९)

भावार्थ: *अमृत स्वरुप कृष्ण कथा को जो भी प्राणी श्रवण करता है, वह इहलोक में धन-धान्य, सुख और यश पाता है तथा परलोक में (मरण पश्चात) मोक्ष पाता है|*

सुन मधुर गान मुख नृप बोले महाप्रभु हे राजन |
दिए तुम अमूल्य रत्न मुझे लेकिन मैं तो निर्धन || (७००)
नहीं दे सकता कुछ तुम्हें अतिरिक्त आशीर्वचन |
आओ लगो कंठ मेरे करो स्वीकार मम आलिंगन || (७०१)
सुन प्रिय वचन महाप्रभु पड़े नृप तुरंत उनके चरन |
बह रहे अश्रु नेत्र पाए निधि सम राज त्रिभुवन || (७०२)
उठा हस्त तब महाप्रभु चैतन्य लगाए कंठ राजन |
नहीं था पार आनंद नृप धोए स्कंध अश्रु नयन || (७०३)

भावार्थ: *सम्राट के मुख से मधुर गान सुन महाप्रभु बोले, 'हे राजन, तुमने मुझे अमूल्य रत्न दिया है लेकिन मैं तो निर्धन हूँ| मैं आशीर्वचन के अतिरिक्त आपको कुछ नहीं दे सकता| आओ मेरे गले लगो और मेरा आलिंगन स्वीकार करो|' महाप्रभु के प्रिय वचन सुन सम्राट तुरंत उनके चरणों पर गिर गाए| उनके नेत्रों से अश्रु धारा बह रही थी| उन्होंने तीनों लोकों के राज के समान निधि पा ली| तब महाप्रभु ने उन्हें अपने हाथों से उठाकर गले लगा लिया| सम्राट के आनंद की कोई सीमा नहीं थी| उन्होंने (महाप्रभु के) कंधे अपने अश्रुओं से भिगा दिए|*

गूढ़ भाव गोपी गीत

सुनाए तब गूढ़ भाव गोपी गीत चैतन्य शुचि-नंदन |
बोले महाप्रभु हैं अति सुन्दर और गूढ़ इसके वचन || (७०४)

भावार्थ: *तब शुचि-नंदन चैतन्य ने गोपी गीत के गूढ़ भाव सुनाए| महाप्रभु बोले कि इसके वचन अत्यंत सुन्दर और गूढ़ हैं|*

दर्शाते यह भाव विरह गोपिन प्रति कृष्ण भगवन |
समझो प्रेम उनका भर अश्रु नैन कर रहीं निवेदन || (७०५)
हे प्रभु दो दर्शन नहीं तो है व्यर्थ रखें हम तन |
त्यागें प्राण हम शीघ्र नहीं समझो इसे प्रहसन || (७०६)

भावार्थ: *यह कृष्ण भगवान् के प्रति गोपियों के विरह भाव दर्शाते हैं| (महाप्रभु कहते हैं) उनका प्रेम समझो| नेत्रों में अश्रु लिए वह निवेदन कर रहीं हैं, 'हे प्रभु हमें दर्शन दें अन्यथा हमारी जीना व्यर्थ है| हम शीघ्र ही प्राण त्याग देंगे, इसे परिहास न समझो|'*

<u>जन्मना ब्रजः</u> हे ब्रज में लिए अवतार कृष्ण भगवन |
प्रेमवश कर रहीं स्वच्छ माता श्री आपका भवन || (७०७)
संग सखिन कर अनेक सेवा बना रही सुन्दर वृंदावन |
है निःसंदेह ब्रज उत्कृष्ट लिए आप जहां अवतरन || (७०८)

भावार्थ: जन्मना ब्रजः *हे ब्रज में अवतार लिए कृष्ण भगवान्, प्रेमवश माता लक्ष्मी आपके गृह को स्वच्छ कर रहीं हैं| वह सखियों के साथ अनेक सेवा करती हुई वृंदावन को सुन्दर बना रहीं हैं| निःसंदेह ब्रज उत्कृष्ट है जहां आपने अवतार लिया|*

<u>तव कथामृतं</u> है सम सुधा लीला आपकी भगवन |
करते प्रवेश हृदय भक्त करें जब वह कथा श्रवन || (७०९)
सम इष्ट गुरु सखा जनयित्र हो भाव जैसा भक्त मन |
कर प्रवेश हृदय भक्त करते दूर आप सभी दुर्गुन || (७१०)
हों जब दूर लौकिक दुर्गुण सम काम क्रोध वासन |
होता शुद्ध हृदय भक्त पा जाता वह तब तत्व-भगवन || (७११)

भावार्थ: तव कथामृतं *आपकी लीला हे भगवन, अमृत समान है| जब भक्त आपकी कथा का श्रवण करता है तो आप उसके हृदय में प्रवेश कर जाते हैं| इष्ट, गुरु, सखा, माता-पिता, जैसा (आपके प्रति) भक्त का भाव होता है, (उस भाव से) आप भक्त के हृदय में प्रवेश कर उसके दुर्गुण दूर करते हैं| सांसारिक दुर्गुण जैसे काम, क्रोध, वासना, जब दूर हो जाते हैं, तब भक्त का हृदय शुद्ध हो जाता है और उसे परमात्म-तत्व मिल जाता है|*

पा रहा दुःख जीव प्रभु पड़ा हुआ चक्र आवागमन |
हैं लीला प्रभु समान जल शीतल झुलस रहा जो जन || (७१२)
होती शांत अंतर्मन ज्वाला करें जब कथा श्रवन |
अतः करो प्रभु लीला सदैव श्रवण पठन और मनन || (७१३)

भावार्थ: *आवागमन (जन्म और मृत्यु) के चक्र में पड़ा हुआ जीव दुःख पा रहा है| आपकी लीला झुलसते हुए प्राणी के लिए शीतल जल के समान हैं| कथा के श्रवण से अंतर्मन की ज्वाला शान्त होती है| अतः प्रभु लीला का सदैव श्रवण, पठन और मनन करो|*

हेतु श्राप विप्र थी निश्चित मृत्यु परीक्षित राजन |
पश्चात सात दिन डसेंगे सर्पराज तक्षक विषानन || (७१४)
नहीं संभव टल सके श्राप घोर दिए पुत्र ब्राह्मन |
अतः गए सम्राट तट गंगा ले निर्देश सुकदेव महन || (७१५)
त्याग राज्य जल भोजन निद्रा आदि सब सुख राजन |
किए वह सात दिन निरंतर कथा श्री भागवत श्रवन || (७१६)

भावार्थ: *ब्राह्मण के श्राप के कारण जब सम्राट परीक्षित की मृत्यु निश्चित थी, सात दिन के पश्चात सर्पराज विषानन तक्षक उन्हें डसेंगे, ब्राह्मण पुत्र का श्राप टालना असंभव था, तब महात्मा सुकदेव की सलाह पर सम्राट गंगा तट पर गए| राज्य, जल, भोजन, निद्रा आदि सभी सुखों का त्याग कर सात दिन तक सम्राट ने श्री भागवत कथा सुनी|*

श्री गुरु मुख द्वारा भगवद कथा गुण भजन कीर्तन |
होती अचूक औषधि भव रोग उपयुक्त मुमुक्षजन || (७१७)
होती यह अप्रिय दुर्जन नास्तिक विमुख भगवन |
पर देती सुभग कर्ण मिष्ट आनंद और निर्मोचन || (७१८)

भावार्थ: *श्री गुरु के मुख से कही भगवद कथा, (भगवद) गुण, भजन, कीर्तन भव-रोग की अचूक औषधि है जो मुमुक्ष प्राणियों के लिए उपयुक्त है| यह दुष्ट, नास्तिक और प्रभु से विमुख प्राणियों के लिए अप्रिय, परन्तु सौभाग्यशाली प्राणियों को कर्ण प्रिय, आनंद दायिनी और मोक्ष देने वाली होती है|*

सुक देव गोस्वामी हैं रहित भोग विलास धर्मात्मन् |
नहीं समान उनके रसिक तत्वज्ञ हरि भक्त इस भुवन || (७१९)
कर श्रवण कथा भागवत मुख गुरु महाज्ञानी जन |
पश्चात सर्प दंश पाए सम्राट परीक्षित निर्मोचन || (७२०)

भावार्थ: *गोस्वामी सुक देव भोग विलास से रहित महात्मा हैं| उनके समान इस पृथ्वी पर रसिक परमात्म-तत्व जानने वाला भक्त और कोई नहीं है| ऐसे महाज्ञानी गुरु के मुख से भागवत कथा सुनने के कारण सर्प के डसने के पश्चात सम्राट परीक्षित को मोक्ष की प्राप्ति हुई|*

कहें महाप्रभु चैतन्य सुनो हे समस्त सुभग भूजन |
चाहो यदि स्व-कल्याण करो हरि कथा श्रवण पठन || (७२१)

भावार्थ: *महाप्रभु चैतन्य कहते हैं हैं कि हे समस्त भाग्यशाली प्राणियों, यदि तुम अपना कल्याण चाहते हो तो हरि कथा का श्रवण और पठन करो|*

<u>तव कथामृतं तप्त जीवनं</u> है चाह यदि शम उल्लसन |
करो निरंतर श्रवण हरि कथा करे यह तृप्त जीवन || (७२२)

भावार्थ: तव कथामृतं तप्त जीवनं *यदि शान्ति और प्रसन्नता की चाह है तो निरंतर हरि कथा का श्रवण करें| यह जीवन को तृप्त करती है|*

चढ़ता हुआ सोपान भक्ति करे भक्त प्राप्त भगवन |
डूबता वह आनंद सागर नहीं सम कोई उपार्जन || (७२३)

भावार्थ: *भक्ति की सीधी पर चढ़ता हुआ भक्त भगवान् को प्राप्त कर लेता है| वह आनंद के सागर में डूब जाता है जिस से अधिक लाभदायक कुछ नहीं|*

<u>कविभिरीडितं</u> करें जब महात्मा कथा हरि वाचन |
सम गोस्वामी सुकदेव वाल्मीकि कृष्ण द्वैपायन || (७२४)
समझो जैसे कह रहे हों कथा समक्ष स्वयं चतुरानन |
पाते फल दिव्य सुभग जन पाएं जो यह अवसर पावन || (७२५)

भावार्थ: कविभिरीडितं *जब गोस्वामी सुकदेव, (महर्षि) वाल्मीकि, कृष्ण द्वैपायन (महर्षि वेद व्यास) समान महात्मा हरि कथा का वाचन कर रहे हों तो अपने समक्ष उन्हें स्वयं ब्रह्मा के समान कथा वाचक समझो| जिन सौभाग्यशाली प्राणियों को यह पवित्र अवसर प्राप्त होता है, उन्हें दिव्य फल प्राप्त होते हैं|*

<u>कल्मषापहं</u> हो जाते नष्ट अघ करें जब कथा श्रवन |
देते शुभ फल हरि कर्म करो हे भक्त संग कीर्तन || (७२६)

भावार्थ: कल्मषापहं *जब (प्रभु) कथा श्रवण की जाती है तो पाप नष्ट हो जाते हैं| प्रभु कर्मों का शुभ फल देते हैं| हे भक्तगण, साथ में प्रभु कीर्तन करो|*

<u>श्रवणमंगलं</u> होता सदैव मंगल उन भक्तगण जीवन |
जो करते निरंतर श्रवण हरि कथा और करते भजन || (७२७)

भावार्थ: श्रवणमंगलं *जो भक्तगण निरंतर हरि कथा श्रवण एवं भजन करते हैं, उनके जीवन में सदैव मंगल होता है|*

<u>श्रीमदाततं</u> पाएं श्री और यश भक्त सदैव त्रिभुवन |
जो श्रद्धापूर्वक करें हरि कथा श्रवण पठन मनन || (७२८)

भावार्थ: श्रीमदाततं *जो भक्त श्रद्धापूर्वक हरि कथा का श्रवण, पठन और मनन करते हैं उन्हें तीनों लोकों में यश और श्री (धन-धान्य) की प्राप्ति होती है|*

<u>भूरिदा</u> समझो उसे ही सर्वश्रेष्ठ भक्तगण इस भुवन |
जो करे दान श्री कृष्ण कथा माध्यम कर्म और वचन || (७२९)
करते उद्धार ऐसे दाता जग हेतु हरि महिमा गायन |
नहीं बन सकता भूरिदा नृप करे दान समस्त धन || (७३०)

भावार्थ: भूरिदा *इस पृथ्वी पर उसे ही सर्वश्रेष्ठ भक्त समझो जो कर्म और वचन से श्री कृष्ण कथा दान करता है (अर्थात हरि कथा सुनाता है)| ऐसे दाता संसार का उद्धार प्रभु की महिमा गायन करने से करते हैं| सम्राट भूरिदा नहीं हो सकता चाहे वह समस्त धन दान कर दे (अर्थात श्री हरि कथा सुनाना धन दान से अधिक श्रेष्ठ है)|*

कहें आगे महाप्रभु है विशेष गोपी गीत गायन |
जल रहे जो भक्त विरह व्यथा हेतु न पा सके भगवन || (७३१)
दे गोपी गीत शम समझें वह स्थिति गोपी ब्रज भुवन |
किए कैसे ब्रजवासी बिना कृष्ण निर्वाह जीवन || (७३२)

भावार्थ: *आगे महाप्रभु कहते हैं कि गोपी गीत का गायन विशेष है| जो भक्त प्रभु को न पाने के कारण विरह व्यथा में जल रहे हैं, यह उनके लिए ब्रज भूमि में गोपियों की स्थिति समझा कर उन्हें शीतलता देती है| (यह बताती है कि) कैसे ब्रजवासियों ने बिना कृष्ण के जीवन निर्वाह किया (अर्थात तुम भी उसी प्रकार हरि गुण गाते अपना जीवन निर्वाह करो, निराश न हो)|*

पूर्व इससे कि आए उनके जीवन मनमोहक नन्दनंदन |
समझो थे अपने परिवार में ब्रजवासी कैसे प्रसन्न || (७३३)
किया क्या चमत्कार कृष्ण कि हो गए वह उनके विमन |
छूटा लौकिक लाभ रहता सदा मग्न श्री कृष्ण में मन || (७३४)
समझो रहता जिसका लौकिक लाभ में सदैव मन |
न करे श्रवण पठन कथा हरि पड़ा रहे चक्र जन्म मरन || (७३५)

भावार्थ: *इससे पहले कि ब्रजवासियों के जीवन में मनमोहक कृष्ण आए, समझो कि अपने परिवार में वह कैसे प्रसन्न थे? कृष्ण ने क्या चमत्कार किया कि वह उनके दीवाने हो गए| सांसारिक लाभ छूट गया और वह सदैव कृष्ण में मग्न हो गए| यदि कोई सांसारिक लाभ में सदैव मग्न रहता है, हरि कथा का श्रवण, पठन नहीं करता , वह जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है|*

यद्यपि कहते संत ऋषि आदि करो हरि कथा श्रवन |
होगा मंगल इहलोक और पश्चात मरण निर्मोचन || (७३६)
पर कहती गोपी गीत है यह घोर छल जानो भूजन |
करोगे यदि श्रवण पठन हरि कथा हो स्व-विस्मरन || (७३७)
डूब प्रेम छलिया कृष्ण भूल जाओगे संतति भवन |
हो समान हमारे विरह में भटकोगे नगर और वन || (७३८)
पूछोगे हर मनुज खग पशु कीट वृक्ष करते रुदन |
हे पथिक यदि देखे तो बतलाओ हैं कहाँ मधुसूदन || (७३९)
नहीं मिलेगा चैन होगा जीवन कठिन सुनो भूजन |
नहीं कर सको सहन यह दुःख तो न करो कथा श्रवन || (७४०)

भावार्थ: *यद्यपि संत, ऋषि आदि कहते हैं कि हरि कथा सुनने से इहलोक में कल्याण और मृत्यु पश्चात मोक्ष मिलता है, पर गोपी गीत कहती हैं कि यह घोर छलावा है| यदि हरि कथा का श्रवण, पठन करोगे तो स्वयं की विस्मृति हो जाएगी| छलिया कृष्ण के प्रेम में डूबकर संतान और गृह भूल जाओगे| हमारे समान विरह में नगर और वन में भटकोगे| रोते हुए प्रत्येक प्राणी, पक्षी, पशु, कीट, वृक्ष से पूछोगे कि हे पथिक, यदि तुम देखे हो तो बताओ कृष्ण कहाँ हैं? हे प्राणी, तुम्हारा जीवन कठिन हो जाएगा| तुम्हें चैन नहीं मिलेगा| यदि यह दुःख सहन नहीं कर सकते तो हरि कथा नहीं सुनो|*

रहो सावधान उन वाचक जो समान संत इस भुवन |
दें प्रलोभन भांति बक कहें हो मंगल सुन कथा भगवन || (७४१)
भांति महर्षि सुक देव करते मोहित हेतु मधुर वचन |
बना देते भिक्षुक डुबा प्रेम छलिया कृष्ण भगवन || (७४२)
हैं यह सम व्याध जो करें आकर्षित खग हेतु भोजन |
हैं वाचक भूरिदाजना करें जो नाश श्रोतागन || (७४३)
करो प्रयास रहो दूर इनसे परन्तु है यह विडंबन |
नहीं रह पाओगे दूर यदि बसे नैन छलिया कृष्न || (७४४)
है सारांश गोपी गीत सुनो ध्यान से हे भूजन |
कर पठन श्रवण मनन हरि कथा काटो सहज भव बंधन || (७४५)
है यही विधि एक सरल पा सको लक्ष्य मनुज इस भुवन |
अतः कहें महाप्रभु बसाओ हिय छवि मनमोहन || (७४६)

भावार्थः *संत समान संसार में जो वाचक हैं, उनसे सावधान रहो| बगुले की भांति प्रलोभन देकर कि (हरि) कथा सुनोगे तो तुम्हारा मंगल होगा, महर्षि सुक देव की भांति अपने मधुर वचनों से यह मोहित करेंगे| छलिया कृष्ण भगवान् के प्रेम में डुबाकर भिक्षुक बना देंगे| यह व्याध के समान हैं जो अपने भोजन के लिए पक्षियों को आकर्षित करते हैं| यह (कथा) वाचक, भूरिदाजना, श्रोताओं को नष्ट करते हैं| इनसे दूर रहने का प्रयास करो लेकिन विडम्बना यह है कि यदि नेत्रों में छलिया कृष्ण बस जाते हैं तो इनसे दूर नहीं रह पाओगे| (यहां गोपी गीत में कथा वाचकों को श्रोताओं का नाश करने वाला कहा है| वास्तव में इसका अर्थ है कि वह श्रोताओं के पापों का नाश करते हैं और श्रोताओं का भगवान से मिलान कराते हैं| इसमें दुःख तो अवश्य है| सांसारिक सुख जैसे घर, पत्नी, संतान आदि का त्याग कर मनुष्य प्रभु के प्रेम में डूब जाता है और फिर वह उनके विरह में तड़पता है| अतः यह प्रारम्भ में विष के समान लगता है| परन्तु इसका अंत अमृतमयी है| प्राणी अपने लक्ष्य, मोक्ष, की प्राप्ति इसी प्रभु प्रेम से कर पाता है|) हे प्राणियों, गोपी गीत का सारांश ध्यान से सुनो| हरि कथा का पठन, श्रवण और मनन कर भव बंधन को काटो| यही एक सरल विधि है जिससे इस धरा पर मनुष्य जीवन के लक्ष्य (मोक्ष) को पा सकोगे| अतः महाप्रभु कहते हैं कि मनमोहन (कृष्ण) की छवि अपने हृदय में बसा लो|*

रथ यात्रा में चैतन्य भाव

हो भाव चैतन्य लें जब भक्त भाग रथ यात्रा भगवन |
दर्शाए यह स्वयं महाप्रभु कर कर्मनिष्ठ प्रदर्शन || (७४७)

भावार्थ: *जब प्रभु के रथ यात्रा में भक्त भाग लें तो उनके भाव चैतन्य (शुद्ध) होने चाहिए| यह महाप्रभु ने स्वयं कर्मनिष्ठ (व्यवहारिक) प्रदर्शन से दर्शाया|*

हो भाव विभोर करते उत्सव वह नृत्य और कीर्तन |
देखते विग्रह जैसे साक्षात श्याम सुन्दर नंदनंदन || (७४८)

भावार्थ: *भाव विभोर होकर वह (महाप्रभु) उत्सव में नृत्य और कीर्तन करते| वह विग्रह को साक्षात सुन्दर श्याम कृष्ण ही देखते|*

करते नृत्य पुकारते गौरा हे अन्तर्यामी भगवन |
सृजन पालन संहार कर्ता आश्रय जीव त्रिभुवन || (७४९)
यद्यपि अजन्मा पर लिए आप जन्म हेतु लोक प्रदर्शन |
जनन गर्भ देवकी है दिखावा जानें यह बुद्धिवन || (७५०)
रह बन पुत्र यशोदा नन्द किए तुम ब्रज भूमि पावन |
बन सारथी अर्जुन दे उसे निर्देश किए संहार दुर्जन || (७५१)

भावार्थ: *नृत्य करते महाप्रभु पुकारते, 'हे अन्तर्यामी भगवान्, सृजन, पालन और संहार कर्ता, तीनों लोकों में जीवों के आश्रय, यद्यपि आप अजन्मा हैं परन्तु लोक प्रदर्शन के लिए आपने जन्म (अवतार) लिया| देवकी के गर्भ से आप जन्मे, यह तो दिखावा मात्र है, ऐसा बुद्धिमान जानते हैं| यशोदा और नन्द के पुत्र बन आपने ब्रज भूमि को पवित्र किया| अर्जुन के सारथी बन उन्हें निर्देश दे आपने दुष्ट प्राणियों का संहार किया|*

सब स्थावर जंगम जन का किए आप लौकिक दुःख हरन |
युक्त मनोहर मुस्कान हरि किए आप सम्मोहित भूजन || (७५२)
किए नष्ट विरह जनित संताप गोप वनिता ब्रज भुवन |
जय जय हे प्रभु कृष्ण करो स्वीकार मेरा अभिनंदन || (७५३)

भावार्थ: *समस्त स्थावर (स्थित जीव जैसे वृक्ष आदि) और जंगम (गतिशील जीव जैसे मनुष्य, पक्षी, पशु आदि) जीवों के आपने लौकिक दुःख दूर किए| मनोहर मुस्कान से युक्त भगवन, आप प्राणियों को सम्मोहित करते हैं| आपने ब्रज भूमि वासी गोप और गोपियों के विरह से उत्पन्न संताप दूर किए| हे प्रभु कृष्ण, जय हो, जय हो| मेरा अभिनंदन आप स्वीकार कीजिए|*

छोड़ द्वारका आए आप ब्रज हेतु गोपी प्रेम बंधन |
कीं बहु प्रकार शृंगार आपका तब ब्रजवासिन || (७५४)
लगाईं अधर आपके बलपूर्वक वेणु सुनाएं ध्वन |
हुए सुशोभित आप तब युक्त पंख मोर स्व-वेष्टन || (७५५)
की विनय कहें आप नहीं द्वारकाधीश पर नन्दनंदन |
प्रेमवश मुसकुराते किए आप उनके निर्देश पालन || (७५६)

भावार्थ: *गोपियों के प्रेमवश आप द्वारका छोड़ ब्रज आए| तब ब्रजवासियों (गोपियों) ने आपका बहु प्रकार शृंगार किया| बल पूर्वक आपके अधरों पर बाँसुरी लगाईं ताकि आप (बाँसुरी की) धुन सुनाएं| आपकी पगड़ी मोर पंख से सुशोभित हुई| तब उन्होंने विनती की कि आप कहें आप द्वारकाधीश नहीं, बल्कि नन्द के पुत्र हैं| प्रेमवश मुसकुराते हुए तब आपने उनके निर्देशों का पालन किया|*

कहें चैतन्य गाते हुए इस प्रकार लीला भगवन |
गाओ गुणगान रासलीला की जो कृष्ण वृंदावन || (७५७)
करो स्मरण राधा-कुंड श्याम-कुंड गोकुल भुवन |
युक्त निष्काम भाव शुद्ध प्रेम हिय करो हरि भजन || (७५८)
है यह प्रेम जो बढ़ता निरंतर कराए हरि दर्शन |
करे युक्त स्नेह मान प्रणय राग अनुराग ओर भगवन || (७५९)

भावार्थ: *चैतन्य (महाप्रभु) कहते हैं की इस प्रका प्रभु की लीला गाते हुए कृष्ण की रासलीला का गुणगान करो जो कृष्ण ने वृन्दावन में की| राधा-कुंड, श्याम-कुंड और गोकुल धाम का स्मरण करो| निष्काम भाव और हृदय में शुद्ध भाव से युक्त हो प्रभु का भजन करो|वकयेह प्रेम निरंतर बढ़ता हुआ प्रभु की दर्शन कराएगा| भगवान् के प्रति स्नेह, मान, प्रणय, राग, अनुराग से युक्त करेगा|*

हो विभावित भाव राधा महाप्रभु चैतन्य श्रीमन |
पुकारते वह गोपी-भर्त्तु हे श्री जगन्नाथ भगवन || (७६०)
प्रिय सर्वाधिक गोपिन रहें आप उनके वशीकरन |
बनूँ मैं सेवक श्री कृष्ण करो पूर्ण मेरा मन्मन् || (७६१)

भावार्थः *राधा के भाव में विभोर हो श्रीमान चैतन्य महाप्रभु श्री जगन्नाथ भगवान् को 'गोपी-भर्त्तु' कह कर पुकारते| (वह कहते) 'गोपियों के सर्वाधिक प्रिय आप उनके वशीकरण में रहते हैं| मैं कृष्ण के दास का सेवक बनूँ, ऐसी मेरी इच्छा को पूर्ण करें|'*

यद्यपि हैं महाप्रभु चैतन्य स्वयं जगन्नाथ भगवन |
पर करते विनय महाप्रभु करबद्ध सुनो नारायन || (७६२)
करो कल्याण सब भक्त ले रहे भाग जो उत्सव पावन |
नहीं हम कोई वर्ण ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र जन || (७६३)
न ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ या सन्यासीगन |
हम हैं तन से अतीत जीवात्मा है भाव सेवा कृष्न || (७६४)

भावार्थः *यद्यपि चैतन्य महाप्रभु स्वयं जगन्नाथ भगवान् हैं, पर वह करबद्ध प्रार्थना करते हैं कि हे नारायण, जो भी भक्तगण इस पवित्र उत्सव में भाग ले रहे हैं, उनका कल्याण करो| हम कोई वर्ण जैसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र नहीं हैं| न ही ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ या सन्यासी हैं| हम शरीर से अतीत जीवात्मा हैं| हमारा भाव कृष्ण सेवा है|*

रखते यह भक्तगण भाव प्रेम ओर जगन्नाथ भगवन |
सम शांत दास्य सख्य वात्सल्य और मधुर पञ्च भावन || (७६५)
जानें है प्रिय अति आपको भाव गोपी ब्रजवासिन |
पुकारूँ मैं और भक्त आपको गोपी-भर्त्तु भगवन || (७६६)

भावार्थः *(महाप्रभु चैतन्य जगन्नाथ भगवान् से कहते हैं) हे जगन्नाथ भगवन, आपके प्रति यह भक्तगण शांत, दास्य, सख्य, वात्सल्य और मधुर,इन पञ्च भावों से युक्त प्रेम भाव रखते हैं| हम जानते हैं कि आपको ब्रजवासी गोपियों का भाव अति प्रिय है, इसलिए मैं और भक्त आपको 'गोपी-भर्त्तु' भगवान् कह कर पुकारते हैं|*

नहीं हम भक्त करें जो विहार संग रुक्मिणी कृष्न |
नहीं हम चाहें दें दर्शन रूप चतुर्भुज नारायन || (७६७)
करें हम प्रेम आपको सम निष्ठ गोपिन दास्य भावन |
बसो हृदय हमारे धर रूप सम ब्रजवासी नंदनंदन || (७६८)

भावार्थ: *हम रुक्मिणी के साथ विहार करने वाले कृष्ण (द्वारकाधीश) के भक्त नहीं हैं| न ही हमारी चाह है कि हम नारायण (आपका) के चतुर्भुज रूप का दर्शन करें| हम तो आपको निष्ठ गोपियों के समान दास्य भाव से प्रेम करते हैं| हमारे हृदय में आप ब्रजवासी नंदनंदन का रूप धारण कर बसिए|*

न पुकार सकें वह नाम जगन्नाथ हो भावावेश गहन |
निकलें बोल मुखारविंद बस जज गग जज गग भगवन || (७६९)
हो रहा विगलित हृदय और भरे अश्रु उनके नयन |
रहते समान परम रसिक भक्त मध्य रथ यात्रा भगवन || (७७०)

भावार्थ: *वह (महाप्रभु) गहन भावावेश में जगन्नाथ नाम भी नहीं पुकार सकते थे| उनके मुखारविंद से बस 'जज गग जज गग भगवन' ही निकलता| हृदय भाव विभोर हो रहा होता और नेत्र अश्रुओं से परिपूर्ण होते| भगवान् की रथ यात्रा के मध्य वह परम रसिक भक्त के समान रहते|*

भाव राधा हृदय कहें प्रत्यक्ष मिल रहा मैं भगवन |
बहुत समय से झुलस रहा मैं विरह अग्नि प्रिय कृष्न || (७७१)
पा लिया प्राण प्रियतम अब कर रहा समक्ष दर्शन |
करो कल्याण प्रभु मेरा और सब उपस्थित भक्तगन || (७७२)

भावार्थ: *राधा भाव हृदय में रखते हुए प्रत्यक्ष कहते मैं भगवान् से मिल रहा हूँ| मैं बहुत समय से कृष्ण की विरह अग्नि में झुलस रहा हूँ| मैंने प्राण प्रियतम को पा लिया| मैं उनके प्रत्यक्ष दर्शन कर रहा हूँ| हे प्रभु, मेरा और समस्त उपस्थित भक्तगणों का कल्याण करो|*

जब चैतन्य महाप्रभु करते नृत्य और गाते कीर्तन |
चलते साथ रथ जगन्नाथ करते कृष्ण लीला स्मरन || (७७३)
आयु एकादश में छोड़े नन्दगांव गए मथुरा पट्टन |
कर वध कंस छुड़ाए जनयित्र थे जो बंद काराभवन || (७७४)
दिए राज्य नृप उग्रसेन हुआ वातावरण सामन |
पर थे चिंतित कर रहा जरासंध बार बार आक्रमन || (७७५)

भावार्थ: *जब चैतन्य महाप्रभु नृत्य करते हुए और कीर्तन करते जगन्नाथ रथ के साथ चलते तब कृष्ण लीलाओं का स्मरण करते रहते| ११ वर्ष की आयु में कृष्ण ने नन्दगांव छोड़ दिया और मथुरा नगर चले गए| कंस को मार अपने माता पिता को कारावास से छुड़ाया| सम्राट उग्रसेन को राज्य दिया जिससे वातावरण शांत हुआ| लेकिन वह जरासंध के बार बार आक्रमण करने से चिंतित थे|*

तब दिए आदेश विश्वकर्मा करें निर्माण नया पट्टन |
दिशा पश्चिम तट समुद्र द्वारका नगरी अति पावन || (७७६)
हुए स्थांतरित संग सभी यदुकुल तब वहां भगवन |
डूबे विरह मथुरा वासी छोड़े जब प्रभु जन्म भुवन || (७७७)

भावार्थ: *तब उन्होंने विश्वकर्मा को एक नए नगर, पश्चिम दिशा में समुद्र तट पर अत्यंत पवित्र नगरी द्वारका, का निर्माण करने का आदेश दिया| तब सभी यदुकुल वंश के साथ भगवान् वहां बस गए| जब प्रभु ने अपना जन्म स्थान (मथुरा) छोड़ा, तब मथुरा वासी विरह में डूब गए|*

कहें कथा अब आए जब छोड़ नन्दगांव मथुरा कृष्न |
थी आयु एकादस वर्ष उनकी कहे जैसे पूर्व कथन || (७७८)
डूब गए समस्त ब्रजवासी महासागर विरह भगवन |
भेजे तब ब्रज प्रमत उद्धव हेतु सांत्वना श्री कृष्न || (७७९)

भावार्थ: *जब नन्दगाँव छोड़ कृष्ण मथुरा आ गए तब की कथा सुनाएं जैसा पहले कहा तब उनकी आयु ११ वर्ष की थी| भगवान् के विरह महासागर में समस्त ब्रजवासी डूब गए| तब उनको सांत्वना देने श्री कृष्ण ने बुद्धिमान उद्धव को ब्रज भेजा|*

उद्धव का ब्रज आना

थे श्री कृष्ण अत्यंत दुःखी समझ स्थिति ब्रजवासिन |
करते माँ जसुमति बाबा नन्द सब सखा गोपी स्मरन || (७८०)
था कठिन समझ सके स्थिति हृदय पक्ष द्वि कोई जन |
कहें प्रमत भाई उद्धव हो न चिंतित तुम प्रिय कृष्न || (७८१)
मैं जाऊं ब्रज हेतु सांत्वना दूँ आपका संवदन |
था अहंकार ज्ञान उन्हें न समझ पा रहे प्रेम वेदन || (७८२)

भावार्थ: *श्री कृष्ण ब्रजवासियों की स्थिति समझ अत्यंत दुःखी थे| माँ यशोदा, बाबा नन्द, सब सखा और गोपियाँ को स्मरण करते थे| किसी प्राणी के लिए दोनों पक्षों के हृदय की स्थिति समझना कठिन था| तब बुद्धिमान भाई उद्धव ने कहा, 'हे कृष्ण, आप चिंतित न हों| मैं स्वयं ब्रज जा उन्हें सांत्वना और आपका सन्देश दूंगा|' उन्हें अपने ज्ञान का बड़ा अहंकार था| वह प्रेम की वेदना को नहीं समझ पा रहे थे|*

मिलती जब गोपियाँ परस्पर ब्रज करती हुईं रुदन |
कर लेतीं शांत विरह ताप कह अन्य सखी स्व-वेदन || (७८३)
करते रुदन देख राधा खिन्न कहतीं ललिता स्नेहन् |
न हो अधीर सखी नहीं दूर हैं हृदय हमारे कृष्न || (७८४)

भावार्थ: *जब ब्रज में गोपियाँ परस्पर रोती हुई मिलतीं तो एक दूसरे से दुःख कहकर अपने विरह ताप को शांत कर लेतीं| जब राधा को रोते हुए दुःखी प्रिय ललिता देखतीं तब कहतीं, 'हे सखी अधीर न हो| कृष्ण दूर नहीं हैं, वह तो हमारे हृदय में हैं|'*

पर था नहीं कोई नगर जो बाँट सके दुःख भगवन |
कर स्वीकार प्रस्ताव उद्धव कहे कृष्ण मधुर वचन || (७८५)
जाओ ब्रज दो सांत्वना करो दूर दुःख हेतु विद्मन् |
सुन प्रसन्नता उनकी होगा हिय मेरा भी उल्लसन || (७८६)

भावार्थ: *परन्तु नगर (मथुरा) में कोई नहीं था जो प्रभु का दुःख बाँट सके| उद्धव का प्रस्ताव स्वीकार कर कृष्ण मधुर वचन बोले, 'तुम ब्रज जा ज्ञान से सांत्वना देकर (उनका) दुःख दूर करो| वह प्रसन्न हैं, यह जानकर मेरा हृदय भी प्रफुल्लित होगा|'*

तब दिए आदेश कृष्ण सारथी करो तैयार वाहन |
स्वर्ण निर्मित रथ हों विशेष तुरग चलें सम पवन || (७८७)
पहनाए उद्धव कंठ अपनी माला और आभूषन |
लग रहे उद्धव समान कृष्ण वर्ण श्याम संरूप तन || (७८८)
थे गुणवित्त और स्वर भी जैसे बोल रहे स्वयं कृष्न |
चल पड़े वह ओर ब्रज देने सन्देश श्री कृष्ण भगवन || (७८९)

भावार्थ: *तब कृष्ण ने सारथी को आदेश दिया कि स्वर्ण निर्मित रथ वायु की गति से चलने वाले अश्व के साथ तैयार करो| अपनी माला उनके कंठ में और आभूषण पहनाए| उद्धव संरूप शरीर और श्याम वर्ण के कारण कृष्ण समान लग रहे थे| वह (कृष्ण समान) बुद्धिमान थे और उनका स्वर ऐसा था जैसे स्वयं कृष्ण बोल रहे हों| तब श्री कृष्ण भगवान् का सन्देश देने वह ब्रज की ओर चल पड़े|*

जब पहुंचे उद्धव नंदगांव था समय सायं सुहावन |
देखा उड़ती धूल नभ हेतु खुर गायें लौटतीं भवन || (७९०)
था धूलिमय परिसर नहीं देखा कोई उद्धव आगमन |
कर रहे विचार दें कैसे परिचय समक्ष ब्रजवासिन || (७९१)
किए तब लीला श्री कृष्ण हुए विस्मित उद्धव महन |
हुआ प्रकट अद्भुत दृश्य तब समक्ष श्री उद्धव नयन || (७९२)

भावार्थ: *जब उद्धव नन्दगांव पहुंचे, सुहावनी सायं का समय था| उन्होंने घर लौटती हुईं गायों के खुर से आकाश में उड़ती धूल देखी| सारा वातावरण धुलिमय था, इस कारण किसी ने उद्धव का आना नहीं देखा| वह विचार कर रहे थे कि किस प्रकार ब्रजवासियों को अपना परिचय दें, तभी श्री कृष्ण ने लीला की जिससे महात्मा उद्धव अचंभित हो गए| श्री उद्धव के नेत्रों के समक्ष एक अद्भुत दृश्य प्रकट हो गया|*

देखे उद्धव फुदकते बछड़े चंहु ओर श्याम व् श्वेत वर्न |
छूते भू था चुचुआ रहा दुग्ध गौएँ के प्रशून थन || (७९३)
नहीं करातीं पान दुग्ध गौवत्स पुकार रहीं कृष्न |
पिलाएं हम दुग्ध बछड़े दें जब निर्देश नन्दनंदन || (७९४)

भावार्थ: *उद्धव ने फुदकते श्याम और श्वेत वर्ण के बछड़े चारों ओर देखे| भूमि को छूते भरे हुए थनों से गौओं का दुग्ध चुचुआ रहा था| गौएँ बछड़ों को दुग्ध नहीं पिलातीं, वह कृष्ण को पुकार रहीं हैं| जब कृष्ण निर्देश दें तब वह अपने बछड़ों को दुग्ध पिलाएं|*

करते गुणगान कृष्ण कर रहीं गोपियाँ दधि मंथन |
हे गोविन्द दामोदर माधव हो प्रकट समक्ष तत्क्षन || (७९५)
बज रहे कङ्कण कर और निकलता अद्भुत स्वर घट-मंथन |
धिक् ताम धिक् ताम मानो कह रहा करो हरि भजन || (७९६)

भावार्थ: *कृष्ण का गुणगान करते गोपियाँ दही बिलो रहीं हैं| हे गोविन्द, दामोदर, माधव तुरंत प्रकट होइए| उनके हाथों में चूड़ियां बज रही हैं और मटकी से अद्भुत स्वर 'धिक् ताम, धिक् ताम' निकल रहा है मानो कह रहा है कि हरि का भजन करो|*

देखे जलते दीप घृत सर्वत्र करते परिसर पावन |
मंद मंद प्रकाश निकलता कर रहा था मोहित नयन || (७९७)
फैलाती सुगंध पुष्प चहुँ ओर चल रही मंद पवन |
मंडराते भँवरे पुष्प मानो बजाते अनंग मधुर स्वन || (७९८)

भावार्थ: *घी के दीए सर्वत्र जल रहे थे जो वातावरण को पवित्र कर रहे थे| उनसे निकलता हुआ धीमा धीमा प्रकाश नेत्रों को मोहित कर रहा था| चारों ओर पुष्पों की सुगंध फैलाती मंद पवन चल रही थी| भौंरे पुष्पों पर मंडराते ऐसे लग रहे थे जैसे कामदेव शंख बजा रहे हों|*

कर रहे सर्वत्र गान कोयल और अन्य खग भामिन् |
कर रहे नृत्य मयूर निकालते मुख केका केका ध्वन् || (७९९)

भावार्थ: *कोयल और अन्य सुन्दर पक्षी सर्वत्र गान कर रहे थे| मयूर 'केका केका' मुख से ध्वनि निकालते नृत्य कर रहे थे|*

पुकार रहे सखा चहुँ ओर हो प्रकट हे मधुसूदन |
हुआ अनुभव उद्धव हैं उपस्थित संग उनके श्री कृष्न || (८००)

भावार्थ: *सखा चारों ओर पुकार रहे हैं 'हे मधुसूदन प्रकट हो'| उद्धव को ऐसा अनुभव हुआ कि श्री कृष्ण उनके साथ उपस्थित हैं|*

बढ़ा उत्साह देख लीला प्रभु गए तब वह नन्द भवन |
भेजा सन्देश बाबा नन्द आए मिलने उद्धव सखा कृष्न || (८०१)
सुन सन्देश दौड़े द्वार लाए सादर उन्हें अंदर भवन |
हुए विस्मित उद्धव देख अव्यवस्थित गृह नन्द महन || (८०२)

भावार्थ: *प्रभु की लीला देख उनका उत्साह बढ़ा और वह नन्द जी के गृह गए| नन्द बाबा को सन्देश भेजा कि कृष्ण के सखा उद्धव मिलने आए हैं| सन्देश सुन द्वार पर (नन्द बाबा) दौड़े आए और उन्हें सादर अंदर ले गए|महात्मा नन्द का अव्यवस्थित घर देख उद्धव को आश्चर्य हुआ|*

पड़े बर्तन बिन मंजे औंधे न कहीं दुग्ध दही मक्खन |
लगा जैसे नहीं किया कोई गृह स्वच्छ बहु कालन || (८०३)

भावार्थ: *बर्तन बिन मंजे औंधे पड़े हुए थे| कहीं दूध, दही, मक्खन नहीं था| ऐसा लगा कि दीर्घ समय से किसी ने गृह को स्वच्छ नहीं किया|*

देखा करते रुदन मैया जसुमति एक कोण में भवन |
था तन कंकाल सम किया नहीं जैसे बहु काल भोजन || (८०४)
था चूल्हे पर जाल मकरक न जला वह दीर्घ वादन |
आई लज्जा नन्द बाबा करें क्या अर्पित उन्हें भोजन || (८०५)
भेजा सन्देश एक गृह विप्र आए प्रिय सखा कृष्न |
हैं थके भूखे भेजो तुम शीघ्र उन हेतु कुछ भोजन || (८०६)

भावार्थः *यशोदा मैया को रोते हुए गृह के एक कोने में देखा| उनका शरीर कंकाल के समान हो गया था जैसे बहुत समय से उन्होंने भोजन नहीं किया| चूल्हा अधिक समय से नहीं जला था| मकड़ी ने उस पर जाला बना रखा था| घर में अर्पित करने को कुछ भोजन नहीं था, नन्द बाबा शर्मिन्दा हुए| तब एक ब्राह्मण के घर उन्होंने सन्देश भेजा कि कृष्ण के प्रिय सखा आए हैं, थके और भूखे हैं| उनके लिए शीघ्र तुम कुछ भोजन भेजो|*

बनाई खीर उसने पर न थी शक्कर गृह उस निर्धन |
आया दौड़ता वह ले खीर बिन मधु नन्द बाबा भवन || (८०७)
थे क्षुधित उद्धव खाई खीर सम पचपन भोग सुरामन् |
कहे तब बाबा नन्द करो विश्राम करेंगे फिर जल्पन् || (८०८)

भावार्थः *उसने (ब्राह्मण ने) खीर बनाई थी लेकिन उस निर्धन के घर शक्कर नहीं थी| वह बिना शक्कर की खीर ले नन्द बाबा के घर दौड़ता हुआ आया| उद्धव भूखे थे, उन्होंने उस खीर को स्वादिष्ट पचपन भोग के समान खाया| तब नन्द बाबा ने कहा अब विश्राम करो, फिर बातें करेंगे|*

देख हैं थके उद्धव बुलाए सेवक करो पाद सम्वाहन |
सो गए प्रगाढ़ नींद तब तत्काल श्री उद्धव महन || (८०९)
जागे भोर देखा हैं नंद बाबा बैठे उनके अभिमुखन |
था मुख मलीन लगा नहीं किए पूर्ण निशा शयन || (८१०)

भावार्थ: *उद्धव थके हैं, यह देख (नन्द बाबा ने) सेवक बुलाए और कहा इनके पग दबाओ| तब तत्काल महात्मा श्री उद्धव गहन निद्रा में सो गए| प्रातः काल जब जागे तो देखा नंद बाबा उनके सिरहाने बैठे हैं| उनके मुख पर दुःख था| लग रहा था जैसे वह पूर्ण रात्रि नहीं सोए हैं|*

किए प्रणिपात उद्धव तुरंत कर स्पर्श उनके चरन |
अश्रुमय नैन लगा कंठ दिए वह अनेक आशीर्वचन || (८११)

भावार्थ: *तुरंत उद्धव ने उनके पग स्पर्श कर उन्हें प्रणाम किया| अश्रु भरे नेत्रों से गले लगा उन्होंने ढेर आशीर्वाद दिए|*

हुई इच्छा नन्द पूछें है कैसा मेरा लाला कृष्न |
पर रुंध गया गला न बोले सके शब्द कृष्ण आनन || (८१२)
धर धैर्य नेत्र अश्रु बोले तब कैसे वसुदेव स्नेहन् |
हैं वह सुभग दिया जन्म पुत्र सम वासुदेव कृष्न || (८१३)
सुना पश्चात मरण कंस लौट रहे यदुवंशी स्व-पट्टन |
अब निर्भयता मथुरा राजनगर प्रजा अति प्रसन्न || (८१४)

भावार्थ: *नन्द (बाबा) की इच्छा हुई कि वह पूछें मेरा लाला कृष्ण कैसा है? लेकिन उनका गला रुंध गया| 'कृष्ण' शब्द मुख से न बोल सके| फिर धैर्य धरकर अश्रुमय नेत्रों से बोले, 'मेरे मित्र वसुदेव कैसे हैं? वह अत्यंत भाग्यशाली हैं कि उन्होंने वासुदेव कृष्ण जैसे पुत्र को जन्म दिया है| सुना है कि कंस के मरण के पश्चात यदुवंशी अपने नगर लौट रहे हैं (कंस के भयवश जिन यदुवंशियों ने मथुरा छोड़ दिया था, वह अब वापस आ रहे हैं)| मथुरा राजधानी में अब निर्भयता है और प्रजा अत्यंत प्रसन्न है|'*

फिर रोक अश्रु किसी प्रकार बोले नन्द देखो महन |
हुई अंध उसकी मैया यशुमति करते निरंतर रुदन || (८१५)
क्या करता स्मरण कभी उसे उसका प्रिय पुत्र कृष्न |
हो रहा जीना कठिन उसका एक पल भी बिन प्रणयिन् || (८१६)

भावार्थ: *फिर आंसुओं को किसी प्रकार रोक कर नन्द (बाबा) बोले, 'हे महात्मा देखो| निरंतर रोते उसकी मैया यशोदा अंधी हो गई है| क्या उसका प्रिय पुत्र कृष्ण कभी उसको याद करता है? अपने प्राणप्रिय के बिना एक पल भी उसका जीना कठिन हो रहा है|'*

था वह सम पुत्र हेतु सभी सखी यशोदा इस भुवन |
उतारतीं आरती सायं लौटता जब वह गौ चारन || (८१७)
लेती बलैयां ले जातीं वह अपने घर हेतु भोजन |
कह काकी लग जाता कंठ उनके उनका प्रिय कृष्न || (८१८)

क्या करता स्मरण उन्हें जो किए निछावर स्व-जीवन |
क्या कहूँ दशा सखा जो खेले संग तट यमुना अवनि || (८१९)
गोपियाँ राधा ललिता विशाखा आदि करतीं रुदन |
भूलीं सुध बुध तन मन नहीं इच्छा रखें यह जीवन || (८२०)

भावार्थ: *इस धरा (ब्रज भूमि) पर यशोदा की सखियों के लिए वह पुत्र समान था| सायं को जब गैया चरा कर आता तो उसकी आरती उतारतीं| उसकी बलैयां लेतीं और अपने घर उसे खाने के लिए ले जातीं| उनका प्रिय पुत्र कृष्ण काकी कह कर उनके गले लग जाता| जिन्होंने अपना जीवन न्योछावर कर दिया, क्या वह उनको याद करता है? उन (कृष्ण के) मित्रों की दशा क्या कहूँ जो उसके साथ यमुना नदी के तट पर खेलते थे| राधा, ललिता, विशाखा आदि गोपियाँ रोती रहतीं हैं| अपने तन मन की सुध बुध भूल गईं हैं| जीवित रहने की उनकी इच्छा नहीं है|*

करतीं प्रेम यह गोपियाँ कृष्ण शताधिक स्व-जीवन |
गौ बछड़े देखते रहते कहाँ गया बांसुरी वादन || (८२१)
यह तो सब चेतन उद्धव कहूँ कैसे दशा अचेतन |
वृक्ष लता नद झरने आदि हैं क्षुब्ध विरह प्रिय कृष्न || (८२२)

भावार्थ: *यह गोपियाँ कृष्ण को अपने जीवन से सौ गुना अधिक प्रेम करतीं हैं| गौ बछड़े देखते रहते हैं कि बांसुरी वादन कहाँ गया? यह सब तो उद्धव, चेतन हैं, अचेतन की दशा कैसे कहूँ? वृक्ष, लता, नदियाँ, झरने आदि सभी प्रिय कृष्ण के विरह में क्षुब्ध हैं|*

बह रही थी अश्रु धारा निरंतर नन्द बाबा नयन |
हो भावुक बोले तब उद्धव सुनो बाबा मम वचन || (८२३)
रख धैर्य रोक रुदन सुनो कृपया सन्देश कृष्न |
हैं व्यथित कर स्मरण ब्रज आएंगे अवश्य मधुसूदन || (८२४)

भावार्थ: *नन्द बाबा के नेत्रों से निरंतर अश्रु धारा बह रही थी| तब भावुक हो उद्धव बोले, 'बाबा मेरे वचन सुनो|रोना रोक धैर्य से आप कृपया कृष्ण का सन्देश सुनिए| ब्रज को स्मरण कर कृष्ण व्यथित हैं| वह अवश्य (ब्रज) आएंगे|'*

सुन शब्द सहानुभूति टूटा बाँध धैर्य नन्द महन |
बोले है अति सुन्दर सहज हमारा प्रिय मनमोहन || (८२५)
नासिका सम पुष्प तिल श्याम वर्ण और कमल लोचन |
लगता सुन्दर अनुत्तम देखता जब वह तिरछी चितवन || (८२६)
मधुर कोमल कपोल बिखरते सौंदर्य जब दे स्मयन |
हों मुस्कुराहट पर निछावर लोक मेरे मधुसूदन || (८२७)
हो गया अवरुद्ध कंठ करते स्मरण प्रिय कृष्न |
रोने लगे फूट फूट नंद बाबा हो विरह में उद्विग्न || (८२८)

भावार्थ: *सहानुभूति के शब्द सुन महात्मा नन्द के धैर्य का बाँध टूट गया और बोले, 'मेरा प्रिय मनमोहन अत्यंत सुन्दर और सहज है| नासिका तिल के पुष्प के समान (सुन्दर), श्याम वर्ण और कमल लोचन है (नेत्र कमल के समान सुन्दर हैं)| जब वह तिरछी दृष्टि से देखता है तब सुन्दर और अद्भुत लगता है| मधुर कोमल अधर मुस्कुराने पर उसकी सौंदर्यता बढ़ा देते हैं| मेरे मधुसूदन की मुस्कराहट पर विश्व निछावर है|' प्रिय कृष्ण को स्मरण करते उनका गला भर आया| नंद बाबा विरह में व्यथित हो फूट फूट कर रोने लगे|*

कर बद्ध हो नत मस्तक चरण बोले तब उद्धव विचक्षन |
हे बाबा है धन्य अनुराग आपका प्रति मधुसूदन || (८२९)
यद्यपि देखे बहु जन इस जग कहते वह परम भक्त कृष्न |
पर नहीं संभव हो अनुराग समान आप त्रिभुवन || (८३०)

भावार्थ: *हाथ जोड़ चरण में नत मस्तक हो बुद्धिमान उद्धव बोले, 'हे बाबा, मधुसूदन के प्रति आपका प्रेम धन्य है| यद्यपि इस विश्व में बहुत प्राणियों को देखा है जो यह कहते हैं कि वह कृष्ण के परम भक्त हैं, पर आपके जैसा प्रेम होना तीनों लोकों में असंभव है|*

न करें चिंता आप दिया स्वयं श्री कृष्ण यह वचन |
आएंगे वह अवश्य ब्रज नहीं कोई संशय एतस्मिन् || (८३१)
हैं व्यस्त इस काल वह राजकाज और धर्म कर्मन् |
पर करते रहते स्मरण आप मैया और ब्रजवासिन || (८३२)

भावार्थ: *आप चिंता नहीं करें| स्वयं श्री कृष्ण ने यह वचन दिया है कि वह ब्रज लौट कर अवश्य आएंगे| हे महात्मा, इसमें कोई संदेह नहीं है| इस समय वह राजकाज और धर्म कार्य में व्यस्त हैं| आप, मैया और ब्रजवासियों को स्मरण करते रहते हैं|*

हो गए विकल नन्द बाबा सुन प्रेम भरे उद्धव वचन |
बोले पुनः है सत्य उद्धव करे कन्हैया हमारा रक्षन || (८३३)

भावार्थ: *उद्धव के प्रेम भरे वचन सुन नन्द बाबा विकल हो गए और पुनः बोले, 'उद्धव, यह सत्य है कि कन्हैया हमारा रक्षण करता है|'*

जब जब आईं विपत्ति ब्रज किए सदा रक्षा कृष्न |
की पान उसने दावाग्नि हेतु रक्षा गौ और सखिन || (८३४)
हेतु नष्ट दम्भ इंद्र जब किए पूजा गिरि गोवर्धन |
हो क्रुद्ध इंद्र चाहे डुबो दें ब्रज कर वर्षा गहन || (८३५)
सप्त दिन सप्त रात्रि निरंतर हुई मूसलाधार वर्षन |
उठाए भांति छत्र गोवर्धन हेतु रक्षा ब्रजवासिन || (८३६)

भावार्थ: *जब जब ब्रज पर विपत्ति आई, वह रक्षक बने| गौ और सखाओं की रक्षा के लिए दावाग्नि का पान किया| इंद्र के अहंकार को नष्ट करने के लिए जब पर्वत गोवर्धन की पूजा की तब क्रुद्ध हो कर इंद्र ने घोर वर्षा कर ब्रज को डुबाना चाहा, सात दिन और सात रात तक निरंतर मूसलाधार वर्षा की, तब गोवर्धन को छत्र की भांति उठा कर ब्रजवासियों की रक्षा की|*

आया जब असुर वृषभासुर धार वृषभ निरूपन |
मारा उसे कृष्ण पहुंचाया यमलोक दिया मोचन || (८३७)
उसी भांति आए केशी अघासुर बकासुर दुर्जन |
कर वध दैत्य सभी की रक्षा कन्हैया ब्रज भुवन || (८३८)

भावार्थ: *जब वृषभासुर दैत्य बैल का रूप धारण कर आया तब कृष्ण ने उसे मारकर यमलोक पहुंचाया और उसको मोक्ष दिया| उसी भांति जब केशी, अघासुर, बकासुर दुष्ट आए तो उन सभी दैत्यों का वध कर कन्हैया ने ब्रज भूमि की रक्षा की|*

डूब रहे विरह हम सब ब्रजवासी करते यह स्मरन |
यदि नहीं आए कृष्ण ब्रज तो करेंगे त्याग जीवन || (८३९)

भावार्थ: *यह स्मरण कर ब्रज वासी विरह में डूब रहे हैं| यदि कृष्ण ब्रज नहीं आए तो यह जीवन का त्याग करेंगे|*

करते हुए इस प्रकार वर्णन लीला श्री मधुसूदन |
हुईं इन्द्रियाँ शिथिल महन नन्द हो गए वह अचेतन || (८४०)

भावार्थ: *इस प्रकार श्री मधुसूदन की लीलाओं का वर्णन करते महात्मा नन्द की इन्द्रियाँ शिथिल हो गईं| वह मूर्छित हो गए|*

सोचने लगे उद्धव क्या अद्भुत प्रेम यह प्रति कृष्न |
हैं स्वयं कृष्ण हरि पर मान पुत्र यह फंसे सम्मोहन || (८४१)
कैसे दूँ सांत्वना हैं तर्क अनाप्त समक्ष मोहित जन |
छिड़का जल मुख तब लौटे बाबा नन्द स्थिति चेतन || (८४२)

भावार्थ: *उद्धव सोचने लगे कि क्या ही कृष्ण के प्रति अद्भुत प्रेम है| कृष्ण स्वयं भगवान् हैं पर यह उन्हें पुत्र मान सम्मोहन में फंसे हैं| मोहित प्राणियों के समक्ष सब तर्क निरर्थक होते हैं, मैं कैसे सांत्वना दूँ? नन्द बाबा के मुख पर जल छिड़का तब उनकी मूर्छा दूर हुई|*

करने लगे विचार पुनः उद्धव धन्य है वही भूजन |
वही सुभग जिसका तड़पे मन प्रति प्रेम श्री भगवन || (८४३)
हों नेत्र अश्रुमय हो विकल यदि न पाए हरि दर्शन |
हैं सभी चिन्ह विद्यमान नन्द हेतु प्राप्ति भगवन || (८४४)
कर रहे यह रुदन हो रहे अंग शिथिल करते स्मरन |
क्या दे सकूं सांत्वना उसे जो डूबा भक्ति भगवन || (८४५)

भावार्थ: *उद्धव पुनः विचार करने लगे| वही प्राणी धन्य है, वही सौभाग्यशाली है जिसका मन हरि के प्रति प्रेम में तड़पे| नेत्र अश्रुमय हों| प्रभु के दर्शन न पाने से विकल*

हो| यह सभी भगवद् प्राप्ति के चिन्ह नन्द में विद्यमान हैं| उनका स्मरण कर वह रो रहे हैं, उनके अंग शिथिल हो रहे हैं| जो प्रभु की भक्ति में डूबा हुआ है, उसको मैं क्या सांत्वना दूँ?

कर सोच विचार बोले उद्धव नन्द बाबा मधुर वचन |
हैं परम सुभग आप और मैया जसुमति त्रिभुवन || (८४६)
नहीं कर सकता कोई स्पर्श सौभाग्य आपका महन |
है अनुराग अत्यंत आप द्वि प्रति श्री मधुसूदन || (८४७)

भावार्थ: *सोच विचार कर उद्धव नन्द बाबा से मधुर वचन बोले, 'तीनों लोकों में आप और यशोदा मैया अत्यंत भाग्यशाली हैं| हे महात्मा, आपके सौभाग्य को कोई स्पर्श भी नहीं कर सकता| आप दोनों का श्री मधुसूदन के प्रति अत्यंत प्रेम है|'*

हो क्रुद्ध बोले नन्द बाबा सुन उद्धव के यह वचन |
कह रहे सुभग हमें हुए क्या उन्मत्त उद्धव बुद्धिवन || (८४८)
हो सखा कृष्ण अतः समझ रहा तुम्हें मैं चतुर निपुन |
पर हो अपरिपक्व कर रहे व्यवहार समान अबोधन || (८४९)

भावार्थ: *उद्धव के यह वचन सुन नन्द बाबा क्रुद्ध हो बोले, 'हे प्राज्ञ उद्धव, क्या उन्मत्त हो गए हो? हमें सौभाग्यशाली कह रहे हो| कृष्ण के सखा हो, अतः मैं तुम्हें चतुर निपुण समझता रहा| पर तुम तो अपरिपक्व मूर्ख की भांति व्यवहार कर रहो हो|'*

हैं हम अति अभग नहीं सुभग समझो यह सत्य कथन |
हम पिता कृष्ण सम पिता राम दशरथ अवध राजन || (८५०)
त्यागे प्राण विरह राम वह हम अभी तक सजीवन |
बनाया हृदय हमारा सम वज्र कठोर चतुरानन || (८५१)
हूँ विरह पुत्र पर यह अभागा न त्याग सका जीवन |
छोड़ गए कदाचित नहीं प्रेम हमारा प्रगढ़ प्रति कृष्न || (८५२)

भावार्थ: *हम दुर्भाग्यशाली हैं न कि सौभाग्यशाली, यह सत्य कथन समझो| हम कृष्ण के पिता हैं जैसे राम के पिता अवध नरेश दशरथ थे| राम के विरह में उन्होंने प्राण*

त्याग दिए पर हम जीवित हैं| ब्रह्मा ने हमारा हृदय वज्र के समान कठोर बना दिया है| पुत्र के विरह में हूँ पर इस अभागे के प्राण नहीं निकलते| वह (कृष्ण) हमें छोड़ गए, संभवतः हमारा प्रेम कृष्ण के प्रति गहन नहीं था|

सोचने लगे उद्धव करूँ कैसे मैं शांत नन्द महन |
कह रहे पुत्र उन्हें हैं जो स्वामी त्रिलोक भगवन || (८५३)
नहीं तत्व ज्ञान इन्हें हेतु कर रहे विलाप विच्छेदन |
दूँ ज्ञान इन्हें समझ सकें हैं कृष्ण ही नारायन || (८५४)

भावार्थ: *उद्धव सोचने लगे कि मैं महात्मा नन्द को कैसे शांत करूँ? त्रिलोक के स्वामी भगवान् को अपना पुत्र कह रहे हैं| इन्हें तत्व ज्ञान नहीं है इस कारण अलगाव पर विलाप कर रहें हैं| मैं इन्हें ज्ञान दूँ ताकि यह समझें कि कृष्ण ही नारायण हैं|*

कर विचार बोले उद्धव सुनो नन्द बाबा गुह्य वचन |
कर रहे विलाप मान जिन्हें आप अपना सुत स्नेहन || (८५५)
हैं वह नारायण स्वयं है उनके पुत्र सम समस्त भुवन |
हैं वह सर्वगत नहीं कोई स्थान नहीं जहां भगवन || (८५६)

भावार्थ: *विचार कर उद्धव बोले, 'नन्द बाबा मेरे गुप्त वचन सुनो| जिन्हें आप अति प्रिय पुत्र मान विलाप कर रहें हैं, वह स्वयं नारायण हैं| समस्त संसार उनके पुत्र समान है| वह सर्वव्यापी हैं| ऐसा कोई स्थान नहीं जहां भगवान् न हों|'*

थे शांत नन्द अब तक पर हुए विचलित सुन उद्धव वचन |
थम गई थी अश्रु धारा उनके विरह युक्त वृद्ध नयन || (८५७)
देते हो ब्रह्म ज्ञान उद्धव क्या जानो पीर दुःखी जन |
कह रहे बार बार समझो हैं कृष्ण त्रिलोकी भगवन || (८५८)
क्या नहीं समझता गुह्य ज्ञान दिए जो गर्ग महन |
पर भाव सुत से ही किया पालन हमने बाल कृष्न || (८५९)
है वह नर हमारे लिए मचलता हेतु अल्प छाछ मक्खन |
लगती भूख हर क्षण उसे रोता न दें जब माँ भोजन || (८६०)

भावार्थ: *अब तक नन्द बाबा शांत थे पर उद्धव के वचन सुन विचलित हो गए| उनके विरह युक्त वृद्ध नेत्रों से अश्रु धारा भी अब थम गई थी| (बोले) 'उद्धव, ब्रह्म ज्ञान देते हो| तुम दुःखी प्राणी की व्यथा क्या जानो? बार बार कह रहो हो कि कृष्ण को त्रिलोक का स्वामी भगवान् समझो| क्या मैं यह गुह्य ज्ञान नहीं समझता जो महात्मा गर्ग ने दिया? लेकिन हमने पुत्र भाव से ही बाल कृष्ण को पाला है| वह (हमारे लिए) मनुष्य ही है जो थोड़े से छाछ और मक्खन के लिए मचलता था| उसे हर क्षण भूख लगती थी| यदि माँ भोजन नहीं देती तो रोता था|*

हो क्रुद्ध माँ झिड़कता चला जाता अन्य गोपी भवन |
जैसे कर रही प्रतीक्षा देती तुरंत छाछ मक्खन || (८६१)
न होती गोपी यदि गृह तो करता चोरी भोजन |
बुलाता सखा हँसते तब खाते चुराया छाछ मक्खन || (८६२)
कहते तुम हैं वह भगवन जो रहित राग द्वेष उष्मन |
अजन्मा नहीं लगती भूख हैं यह सब असत्य वचन || (८६३)

भावार्थ: *माँ पर क्रोध करता हुआ, झिड़कता हुआ तब अन्य गोपी के घर चला जाता था| जैसे वह तो प्रतीक्षा ही कर रही थी| तुरंत उसे छाछ मक्खन देती| यदि गोपी घर में नहीं होती तब वह भोजन चोरी करता| अपने सखाओं को बुलाता जो हँसते हुए चुराया छाछ और मक्खन खाते| तुम कहते हो वह भगवान् हैं जो क्रोध, राग, द्वेष से रहित अजन्मा हैं तथा जिन्हें भूख नहीं लगती, यह सब असत्य वचन हैं|*

आता तरस मुझे तुम पर और कहते हो तुम बुद्धिवन |
हो गए चुप नन्द सोचे तब उद्धव की मैंने त्रुटि गहन || (८६४)
था अनुचित कहना यह हैं श्री कृष्ण स्वयं नारायन |
बढ़ गया ताप बाबा नन्द सुन यह यद्यपि सत्य कथन || (८६५)

भावार्थ: *मुझे तुम पर तरस आता है और तुम कहते हो बुद्धिमान हो| यह कह कर नन्द चुप हो गए| तब उद्धव सोचने लगे कि मैंने यह कहकर घोर त्रुटि की| यह कहना अनुचित था कि श्री कृष्ण स्वयं नारायण हैं| यद्यपि यह कथन सत्य है पर इससे नन्द बाबा की पीड़ा बढ़ गई है|*

नहीं सोच पा रहे उद्धव करें कैसे शांत नन्द महन |
है प्रेम नन्द यशोदा प्रति कृष्ण सम हिम गिरि दशन || (८६६)
कर रहा प्रयास जान सकूं मैं है कितना उन्नत मन |
है असफल मेरा ब्रह्म ज्ञान समक्ष प्रेम भक्त भगवन || (८६७)

भावार्थ: *उद्धव नहीं सोच पा रहे कि किस प्रकार महात्मा नन्द को शांत करें| नन्द यशोदा का कृष्ण के प्रति प्रेम हिमालय पर्वत की चोटी के समान है| मैं प्रयास कर रहा हूँ कि उनके मन की ऊंचाई नाप सकूं| भगवान् के भक्त के प्रेम के समक्ष मेरा ब्रह्म ज्ञान असफल है|*

न सोच अन्य कोई उपाय बोले उद्धव विनम्र वचन |
नहीं हों व्याकुल बाबा करें विश्वास कृष्ण कथन || (८६८)
आएंगे अवश्य ब्रज किए हैं यह दृढ़ संकल्प कृष्न |
रखें धैर्य और समझाएं जसुमति मैया व् अन्य जन || (८६९)
कहे स्वयं आप हैं रक्षक ब्रजवासी श्री मधुसूदन |
नहीं देख सकेंगे विकलता वह सब प्रिय ब्रजवासिन || (८७०)

भावार्थ: *कोई अन्य उपाय न सोच, उद्धव विनम्र वचन बोले, 'बाबा, आप व्याकुल न हों| कृष्ण के कथन पर विश्वास करें| वह ब्रज अवश्य आएंगे, ऐसाकृष्ण का दृढ़ संकल्प है| धैर्य रखें और यशोदा मैया एवं अन्य को समझाएं| आपने स्वयं ही कहा है कि श्री मधुसूदन ब्रजवासियों के रक्षक हैं| वह सब प्रिय ब्रजवासियों की विकलता नहीं देख सकेंगे|*

हो रही थी वार्ता मध्य बाबा नन्द और उद्धव महन |
आई तभी एक सखी माँ यशोदा ले प्रातः भोजन || (८७१)
बोले बाबा हो निवृत प्रातः कर्म करो प्रणेजन |
कर रहीं प्रतीक्षा जसुमति हेतु जलपान ग्रहन || (८७२)
हो निवृत कर्म प्रातः किए स्नान वह कुंड कृष्न |
बैठे पूजन हरि तट सरोवर पर नहीं लग रहा मन || (८७३)
करें विचार प्रेम नन्द यशोदा प्रति कृष्ण भगवन |
रोते रहते सदा कर स्मरण पुत्र भाव स्वामी भुवन || (८७४)

हूँ मैं भक्त एक यद्यपि समझता अति निकट श्री कृष्न |
पर नहीं आते अश्रु कभी मुझे करूँ मैं जब पूजन || (८७५)

भावार्थ: *नन्द बाबा और महात्मा उद्धव के मध्य जब यह वार्ता हो रही था तभी माँ यशोदा की एक सखी प्रातः काल का भोजन (अल्पाहार) लेकर आई| तब बाबा (नन्द) बोले, 'प प्रातः कर्म से निवृत हो स्नान कर लें| जलपान के लिए यशोदा आपकी प्रतीक्षा कर रहीं हैं|' प्रातः कर्म से निवृत हो तब उन्होंने 'कृष्ण कुंड' में स्नान किया| सरोवर के तट पर वह भगवान् के पूजन हेतु बैठे, पर उनका मन नहीं लग रहा था| यशोदा और नन्द का कृष्ण के प्रति प्रेम का विचार करने लगे| त्रिलोक के स्वामी को पुत्र भाव से स्मरण करते हुए सदैव रोते रहते हैं| एक मैं भक्त हूँ, यद्यपि कृष्ण के अति निकट समझता हूँ पर उनके पूजन हेतु मुझे कभी अश्रु नहीं आते|*

तभी देखे एक कदम्ब वृक्ष हेतु योगमाया भगवन |
करें दर्शन इस दिव्य वृक्ष हुई यह इच्छा उनके मन || (८७६)
गए निकट वृक्ष देखे बैठीं वहां गोपियाँ अगणन |
उदास मुख बिन श्रृंगार पहने हुए मलिन देहावरन || (८७७)

भावार्थ: *तभी उन्होंने वहां प्रभु की योगमाया से एक कदम्ब वृक्ष देखा| इस दिव्य वृक्ष के दर्शन करें, ऐसी उनकी इच्छा हुई| जब वृक्ष के निकट पहुंचे तो वहां अनगिनत गोपियों को बैठे देखा| उनके मुख उदास थे| बिना श्रृंगार के थीं और तन पर मलिन कपड़े पहने थीं|*

कर रहीं रुदन निरंतर भीगे वस्त्र हेतु अश्रु नयन |
लिपटी धूल भूमि ब्रज ऊपर पड़े पग जहां कृष्न || (८७८)
नहीं करतीं स्वच्छ है भय हों विमल स्मृति स्नेहन |
हो रहीं मरणासन्न विह्वल विरह प्रिय मधुसूदन || (८७९)
कह रही एक गोपी सुना है आया एक स्वर्ण वाहन |
नहीं पता आया कहाँ से और है कौन अधिवासिन || (८८०)
सुन यह बोली अन्य सखी होंगे अवश्य सेवक कृष्न |
कर वध कंस बने कृष्ण नृप भेजा यह स्वर्ण वाहन || (८८१)

दिखा सकें स्व-ऐश्वर्य हुए कितने धनी नन्दनंदन |
बोली अन्य नहीं बोलो यह शब्द ऐसे नहीं हैं कृष्न || (८८२)

भावार्थ: *निरंतर रो रहीं हैं| नेत्रों के आंसुओं से उनके वस्त्र भीग गए हैं| ब्रज भूमि की धूल जिस पर कृष्ण के पग पड़े उनके ऊपर लिपटी हुई है| वह इस डर से इन्हें स्वच्छ नहीं करतीं कि कहीं प्रिय की स्मृति न विमल हो जाए (अर्थात वस्त्र स्वच्छ करने में धूल के साथ कहीं प्रिय (कृष्ण) की स्मृति भी न चली जाए)| प्रिय मधुसूदन के विरह में व्याकुल हो मरणासन्न हो रहीं हैं| तभी एक गोपी कह रही है (ऐसा उद्धव ने सुना) 'मैंने सुना है एक स्वर्ण रथ आया है| यह नहीं पता कि कहाँ से आया है और इसका स्वामी कौन है?' यह सुन दूसरी सखी बोली, 'अवश्य ही कृष्ण के सेवक का होगा| कंस का वध कर कृष्ण सम्राट हो गए हैं| उन्होंने ही यह स्वर्ण रथ भेजा होगा ताकि अपना ऐश्वर्य दिखा सकें कि नंद नंदन कितने धनी हो गए हैं|' दूसरी सखी बोली, 'यह शब्द नहीं बोलो| कृष्ण ऐसे नहीं हैं|'*

बोली सखी तीसरी सुनो ध्यान से सब मेरा कथन |
मारा गया कंस मथुरा देना उसका पिंड अद्यतन || (८८३)
नहीं है पिंड वहां हेतु आए सेवक ब्रज करने तर्पन |
सोचे होंगे मथुरा वासी हेतु विरह वहां कृष्न || (८८४)
त्यागे प्राण गोप गोपियाँ ले आओ पिंड उन जन |
हुए स्तब्ध सुन उद्धव ब्रज गोपियों के व्यंग वचन || (८८५)

भावार्थ: *तीसरी सखी बोली, 'सब मेरा कथन ध्यान से सुनो| कंस मथुरा में मारा गया उसका आज पिंड देना है| वहां पिंड हैं नहीं अतः सेवक ब्रज तर्पण करने आए हैं| मथुरा वासियों ने सोचा होगा कि कृष्ण के विरह में गोप गोपियों ने प्राण त्याग दिए होंगे, अतः उनका पिंड ले आओ|' गोपियों के व्यंग वचन सुन उद्धव स्तब्ध हो गए|*

करने लगे विचार उद्धव क्यों आया मैं रथ स्वर्न |
था लक्ष्य देना सांत्वना पर लगता वैभव प्रदर्शन || (८८६)
हुआ मुख उदास उनका सोच अशोभनीय आचरन |
तभी देखा एक गोपी खड़ा मनुज समीप कुलाङ्गन || (८८७)

भावार्थ: *उद्धव विचार करने लगे कि मैं स्वर्ण रथ पर क्यों आया? लक्ष्य सांत्वना देना था, परन्तु लग रहा है वैभव प्रदर्शन| यह अशोभनीय आचरण सोच उनका मुख उदास हो गया| तभी एक गोपी ने देखा कि स्त्रियों के समीप एक पुरुष खड़ा है|*

पूछी वह हो कौन तुम और क्यों खड़े समीप गोपिन |
तभी बोली अन्य गोपी क्या नहीं जानो उद्धव महन || (८८८)
हैं अनुचर कृष्ण पहने वैजयंती कंठ सम भगवन |
सुगंध फैल रही चंहु ओर परिसर सम तन नन्दनंदन || (८८९)
अतः भेजा इन्हें स्वयं कृष्ण पहना यह माला पावन |
जान अनुचर कृष्ण घेर लीं गोपियाँ उद्धव बुद्धिवन || (८९०)

भावार्थ: *वह पूछी, 'तुम कौन हो और गोपियों के समीप क्यों खड़े हो?' तभी दूसरी सखी बोली, 'क्या तुम महात्मा उद्धव को नहीं जानतीं? यह कृष्ण के सखा हैं| भगवान् के समान गले में वैजयंती (माला) पहने हैं| चारों ओर वातावरण में सुगंध कृष्ण के शरीर (की सुगंध) के समान फैल रही है| अतः कृष्ण ने स्वयं यह पवित्र माला पहना कर भेजा है|' 'कृष्ण के अनुचर हैं', यह जान गोपियों ने बुद्धिमान उद्धव को घेर लिया|*

कहने लगी एक गोपी क्यों आए ब्रज हे सखा कृष्न |
है क्या प्रयोजन जब नहीं सम्बद्ध कोई नन्दनंदन || (८९१)
मानो तो वह प्रियतम हमारे न मानो तो हैं परजन |
चले गए वह मथुरा तोड़ सम्बन्ध हम सब ब्रजवासिन || (८९२)
हैं आप प्राज्ञ पूछें हम मूर्ख आपसे एक प्रश्न |
कहते प्रेम द्वि प्रकार स्वार्थमय या निःस्वार्थ महन || (८९३)

भावार्थ: *एक गोपी कहने लगी, 'हे कृष्ण के सखा, आप ब्रज क्यों आए? जब नन्द नंदन का (हमसे) कोई सम्बन्ध नहीं तो आपका प्रयोजन क्या है? यदि मानो तो वह हमारे प्रियतम और न मानो तो अजनबी| वह हम सब ब्रजवासियों से सम्बन्ध तोड़ मथुरा चले गए| आप अत्यंत बुद्धिमान हैं, हम मूर्ख आपसे एक प्रश्न पूछते हैं| हे महात्मा, कहते हैं प्रेम दो प्रकार का होता है, स्वार्थमय अथवा निःस्वार्थ|*

भ्रमर प्रति पुष्प या पुरुष प्रति नारि हेतु भोगन |
है यह सम्बन्ध स्वार्थमय कहे हमारा अल्प वयुन || (८९४)
जब असमर्थ नृप कर सके रक्षा छोड़ जाते प्रजाजन |
जब नहीं देते फल फूल छोड़ जाते खग उस विटपिन् || (८९५)

भावार्थ: *भौंरों का पुष्प के प्रति और वासना हेतु पुरुष का नारि के प्रति सम्बद्ध स्वार्थमय है, ऐसा हमारा अल्प ज्ञान है| जब राजा रक्षा करने में असमर्थ होता है तब प्रजा छोड़ कर चली जाती है| जब वृक्ष फल फूल नहीं देते तो उसको पक्षी छोड़ कर चले जाते हैं|*

भाग जाते पशु पक्षी आदि तुरंत लगे जब आग वन |
करे प्रेम चाहे नारि पूर्ण हिय परन्तु कामी जन || (८९६)
छोड़ जाते उसे हो जाती जब पूर्ण कामना तन |
पर प्रेम प्रति कृष्ण हमारा निःस्वार्थ उद्धव महन || (८९७)
समझें करते प्रेम हमें भी निःस्वार्थ मधुसूदन |
फिर टूट गया कैसे यह प्रेम सम्बन्ध मध्य हम द्वयन || (८९८)

भावार्थ: *जब वन में अग्नि लगती है तो पशु पक्षी आदि छोड़ कर चले जाते हैं|स्त्री चाहे कितना भी हृदय से प्रेम करे परन्तु कामी पुरुष तन की कामना पूर्ण होने पर उसे छोड़ जाते हैं| लेकिन हे महात्मा उद्धव, हमारा प्रेम कृष्ण के प्रति तो निःस्वार्थ है, और हम समझते हैं की मधुसूदन का प्रेम भी हमारे प्रति निःस्वार्थ है| फिर हम दोनों के मध्य प्रेम सम्बद्ध कैसे टूट गया|*

नहीं सोच सके समाधान इस शंका उद्धव बुद्धिवन |
हुए भ्रमित और खुजाने लगे वह स्व-कर्परावरन || (८९९)
फिर बोली अन्य गोपी उद्धव है यह कैसा विडम्बन |
नहीं भूल पाएं हम परन्तु भूल गए हमें नन्दनंदन || (९००)

भावार्थ: *बुद्धिमान उद्धव इस शंका का कोई समाधान नहीं सोच पाए| किंकर्तव्यविमूढ़ हो वह अपना कपाल खुजाने लगे| तब दूसरी गोपी बोली, 'उद्धव,*

यह कैसी विडम्बना है कि हम तो नन्दनंदन को नहीं भुला पाते परन्तु वह हमें भूल गए|

चलो माना हम तो थे हेतु उन केवल सखा स्वरूपन |
पर कैसे भूल गए यशोदा और नन्द जनयित्र कृष्न || (९०१)
लुटाए सर्वस्व जो करते हुए उनका लालन पालन |
अतः दीजिए सांत्वना उन्हें जा कर तुरंत नन्द भवन || (९०२)
रोने लगीं फूट फूट गोपियाँ करते स्मरण कृष्न |
भूल गईं नारी सुलभ लज्जा करते प्रेम प्रदर्शन || (९०३)

भावार्थ: *(गोपियाँ कह रही हैं) चलो माना हम तो उनके (कृष्ण) लिए सखा स्वरुप थे, लेकिन वह माता पिता यशोदा और नन्द को कैसे भूल गए? उन्होंने अपना सर्वस्य उनका लालन पालन करने में लुटाया| अतः नन्द भवन में जाकर उन्हें सांत्वना दीजिए| कृष्ण का स्मरण कर गोपियाँ फूट फूट कर रोने लगीं| अपने प्रेम प्रदर्शन में वह नारी सुलभ लज्जा को भी भूल गईं|*

तब कहा एक गोपी आओ संग हमारे उद्धव महन |
हो मन्त्र मुग्ध चले उद्धव तब संग उन गोपियाँ वन || (९०४)
ले गईं वह उन्हें कुछ दूर केदार वन कदम्ब सघन |
देखे उद्धव गोपी एक स्थिति मृत-प्राय तले विटपिन || (९०५)
बना शैया पुष्प कमल कर रही थी वह वहां शयन |
रख उंगल नासिका उसकी देखा क्या उसमें जीवन || (९०६)
थी जीवित चल रही मंद श्वास निकलना चाहे श्वसन |
खोल नेत्र देख सखिन करने लगीं वह उन्मत्त रुदन || (९०७)

भावार्थ: *तब एक गोपी ने कहा, 'हे महात्मा उद्धव, हमारे साथ आओ|' मन्त्र मुग्ध हो उद्धव उन गोपियाँ के साथ वन में चल दिए| वह उन्हें कुछ दूर सघन कदम्ब वन की कतार में ले गईं| तब उद्धव ने मृत-प्राय स्थिति में वृक्ष के नीचे एक गोपी को देखा| वह कमल पुष्पों की शैया पर वहां शयन कर रही थी| उसकी नासिका पर उंगली रख कर देखा कि क्या उसमें जीवन है? वह जीवित थी| उसकी श्वास धीमी चल रही थी*

जैसे प्राण निकलने वाले हैं| नेत्र खोल उसने सखियों को देखा और वह उन्मत्त हो रोने लगी|

गूंजता भ्रमर समझ पुष्प कमल इस गोपी के चरन |
मंडराने लगा लोभ मधु समझीं वह उसे दूत द्वेषन || (१०८)
थीं वह स्वयं राधा रानी पड़ीं अवस्था सम अचेतन |
बोलीं मधुप बंधु कपटी न करो मेरे स्पर्श चरन || (१०९)
देख रही मैं सम्बन्ध तेरा मथुरा नारि मनभावन |
मसली वक्ष तले वनमाला यह मेरे प्रियतम कृष्न || (११०)
लगा तेरी मुच्छा पीत कुङ्कुम मसली माला हे द्वेषन |
भेजा जिन वैरी तुम्हें बना दूत ब्रजभूमि पावन || (१११)
करें वह हे भ्रमर आद्दत रमणीयों का मान भञ्जन |
होंगे वह अवश्य पात्र उपहास सभा यादव महन || (११२)
अतः हट दूर न आ समीप मेरे है तू कुल नाशन |
नहीं चाह करूँ मैं प्राप्त अनुभूति ऐसे दुर्जन || (११३)

भावार्थ: *एक भौंरा गूंजता हुआ इस गोपी के चरण को कमल पुष्प समझ मधु के लोभ में वहां मंडराने लगा| वह गोपी उसे शत्रुओं का दूत समझीं| वह राधा रानी थीं जो अचेत समान अवस्था में पड़ीं थीं| वह बोलीं, 'हे मधुप, कपटी के बंधु, मेरा चरण स्पर्श न करो| मैं देख रही हूँ कि तुम्हारा सम्बन्ध मथुरा की रमणीय नारियों से है जिन्होंने अपने वक्ष तले मेरे प्रियतम कृष्ण की वनमाला को मसल दिया है| हे रिपु, तेरी मूंछों में मसली माला का पीला कुङ्कुम लगा है| जिन वैरियों ने तुमको पवित्र ब्रजभूमि में दूत बनाकर भेजा है, हे भ्रमर, वह आदरणीय नारियों का मान भञ्जन कर रहे हैं| वह अवश्य ही महान यादवों की सभा में उपहास के पात्र होंगे| अतः हे कुलनाशी, तू दूर हट, मेरे समीप न आ| मुझे ऐसे दुष्ट पुरुषों की सहानुभूति नहीं चाहिए|*

थीं भ्रमित राधा बदला उनका मन दूसरे ही क्षन |
नहीं भेजा रिपु पर लगता आया तू बन दूत कृष्न || (११४)
दबे अपराध बोध भेजा तुझे मनाने मुझे नंदनंदन |
पर मानूँ कैसे है उनको पछतावा अपने कर्मन || (११५)

सम आचार तुम्हारा चूस मधु एक पुष्प जाओ अन्यन |
भांति उसी कराया पान मधुर एक बार मधुसूदन || (११६)
अब चले गए विदेश छोड़ तड़पने विरह अग्नि तपन |
यदि हैं छलिया तो करें क्यों श्री सेवा उनके चरन || (११७)

भावार्थ: *राधा भ्रमित थीं अतः दूसरे ही क्षण उनका मन बदल गया| (वह कहने लगीं) 'शत्रुओं ने नहीं भेजा| लगता है यह कृष्ण का दूत बन कर आया है| अपराध बोध से दबे मुझे मनाने के लिए नन्द नंदन ने भेजा है| पर मैं कैसे मानूँ कि उनको अपने किए पर पछतावा है? तुम्हारे स्वभाव के समान एक पुष्प से मधु चूस दूसरे पर जाना, उसी भांति कृष्ण ने अपने अमृत का पान एक बार हमें कराया पर अब हमें विरह अग्नि में तपता छोड़ विदेश चले गए हैं| यदि यह छलिया हैं तो लक्ष्मी जी इनके चरणों की सेवा क्यों करतीं हैं?'*

लगता नहीं समझतीं श्री सत्य स्वभाव अपने दारिन् |
करते मधुर वाच पर रखते भ्रमित उन्हें नारायन || (११८)
पर हे भ्रमर नहीं सहज हम समान श्री समझ अभुग्न |
न कर गुणगान उनका जानते हम स्वभाव मधुसूदन || (११९)

भावार्थ: *लगता है कि लक्ष्मी अपने पति का सत्य स्वभाव नहीं समझतीं| अपने मीठे वचनों से उनके पति नारायण उन्हें भ्रमित रखते हैं| पर हे भ्रमर, हम लक्ष्मी के समान सीधे नहीं हैं, इसे भली भांति समझ| उनका गुणगान न कर| हम कृष्ण का स्वभाव जानते हैं|*

कहे हम से आएँगे लौट शीघ्र मथुरा से मधुसूदन |
नहीं लौटे हुआ समय दीर्घ नहीं वह सत्यवादिन् || (१२०)
छोड़े हम कुटुंब हेतु कृष्ण और वह निकले कृतघ्न |
कहो तुम्हीं कर सकें कैसे मेल हम ऐसे कपटी जन || (१२१)

भावार्थ: *मधुसूदन हम से कहे थे कि मथुरा से शीघ्र ही लौट आएंगे| लेकिन दीर्घ समय से नहीं लौटे| वह सत्यवादी नहीं हैं| हमने अपने कुटुंब को उनके लिए छोड़ दिया और*

वह अकृतज्ञ निकले| अब तुम्हीं बताओ कि ऐसे कपटी प्राणी से हम कैसे मेल कर सकते हैं?

हे बंधु कपटी भ्रमर हैं क्या कुछ गुण शेष कृतघ्न |
करो स्मरण त्रेता युग किए बालि क्रूरतया हनन || (१२२)
आई जब सूपर्णखा हो प्रेम वश काटे नाक कर्न |
बनाया कुरूप उसे ताकि न कर सके पाणिग्रहन || (१२३)
की पार सीमा सतयुग छले वह महाबालि राजन |
कर धारण रुप लघु बामन छीना राज त्रिभुवन || (१२४)
हैं वह सम श्याम काक जो खा बलि घेरे कर्ता हुन् |
नहीं प्रयोजन हमें उससे जिसका है अपावन मन || (१२५)

भावार्थ: *हे भ्रमर, कपटी के बंधु, क्या कपटी के कुछ गुण शेष रहे हैं (जो तुम बतलाना चाहते हो)? त्रेता युग स्मरण करो जब उन्होंने बालि (सुग्रीव के भ्राता) का क्रूरता से वध कर दिया था| जब सूपर्णखा प्रेम प्रदर्शन करने आई तो उसके नाक कान काट लिए| उसे कुरूप बना दिया ताकि उसका विवाह न हो सके| सतयुग में तो सीमा ही पार कर दी जब सम्राट महाबालि को छला| बौने बामन का रूप धारण कर उस से तीनों लोकों का राज्य छीन लिया| वह उस काले कौए के समान हैं जो बलि खाकर बलि कर्ता को ही घेर लेता हे| हमें ऐसे अशुद्ध मन वाले से कोई प्रयोजन नहीं है|*

यदि कहो छोड़ो साथ हैं वह इस समान दुष्ट दुर्जन |
क्यों तड़प रहे करते विरह विलाप तुम हेतु कृतघ्न || (१२६)
हे मधुप है उचित करना चाहिए हमें यह अनुसरन |
किन्तु विडम्बना नहीं भुला सकें दे चुके अपना मन || (१२७)

भावार्थ: *यदि तुम यह कहो कि ऐसे दुष्ट व्यक्ति का साथ छोड़ दो, उस अकृतज्ञ के लिए विरह विलाप करते हुए क्यों तड़प रहो हो, तो हे भ्रमर, तुम उचित हो| हमें ऐसा ही अनुसरण करना चाहिए| परन्तु विडम्बना यह है कि हम नहीं भुला सकते| हमने अपना मन (हृदय) दे दिया है|*

उड़ गया भ्रमर अन्य स्थान सुन राधा करुण वचन |
पर लौटा पश्चात कुछ क्षण समझ पुष्प राधा चरन || (१२८)

भावार्थ: *राधा के करुण वचन सुन भौंरा अन्य स्थान को उड़ गया| परन्तु कुछ समय पश्चात राधा के चरणों को पुष्प समझ लौट आया|*

कहने लगीं फिर राधा जी हुआ क्या हे दूत कृष्न |
क्या भेजा पुनः प्रियतम मनाने चूँकि मैं अप्रसन्न || (१२९)
समझी सन्देश मधुकर कहो अब हैं कुशल नन्दनंदन |
क्या करते वह मैया बाबा सखा सखी गौ ब्रज स्मरन || (१३०)
क्या रखेंगे मस्तिष्क हमारे फिर कभी स्व-कर पावन |
क्या लौट सकेगी प्रसन्नता फिर कभी हमारे आँगन || (१३१)

भावार्थ: *राधा जी फिर कहने लगीं, 'हे कृष्ण दूत क्या हुआ? क्या प्रियतम ने पुनः मुझे मनाने भेजा है क्योंकि मैं रुष्ट हूँ? हे भ्रमर, मैं सन्देश समझ गई| अब कहो कि नन्द नंदन कुशल हैं? क्या वह ब्रज में मैया, बाबा, सखा, सखी, गौओं का स्मरण करते हैं? क्या फिर हमारे मस्तिष्क पर अपने पवित्र हस्त रखेंगे? क्या हमारे आँगन में फिर से प्रसन्नता लौट सकेगी?*

कह यह तड़पती विरह करने लगीं राधा रुदन गहन |
हे नाथ हे रमानाथ हे ब्रजनाथ हे दुःखविनासन || (१३२)
हे गोविन्द करो उद्धार डूबा ब्रज आपके विघट्टन |
नहीं सामर्थ्य रख सकें अब हम सब स्व-प्राण चेतन || (१३३)

भावार्थ: यह कह विरह में तड़पती राधा गहन (फूट फूट कर) रुदन करने लगीं| हे नाथ, हे रमानाथ, हे ब्रजनाथ, हे दुःखविनासन, हे गोविन्द, आपके विरह में ब्रज डूब रहा है, इसका उद्धार करो| अब सामर्थ्य नहीं है कि हम अपने प्राण जीवित रख सकें|

देखा उद्धव नहीं चाहतीं रहें जीवित बिन कृष्न |
दिए सन्देश आएंगे अवश्य एक दिन ब्रज मधुसूदन || (१३४)

हैं व्यस्त राज काज अभी रखो धैर्य तुम कुछ दिवन् |
सुन सन्देश समझ गईं गोपी नहीं आएंगे नन्दनंदन || (१३५)
उखड़ गई आशा होगा प्रियतम से शीघ्र मिलन |
बढ़ गया विरह हुईं जड़वत नहीं निकले अश्रु नयन || (१३६)

भावार्थ: *उद्धव ने देखा कि बिना कृष्ण के यह जीवित नहीं रहना चाहतीं तब उन्होंने मधुसूदन का सन्देश दिया कि ब्रज में वह एक दिन अवश्य आएंगे| अभी राज काज में व्यस्त हैं, अतः कुछ दिन धैर्य रखें| सन्देश सुन गोपियाँ समझ गईं कि कृष्ण अब नहीं आएंगे| प्रियतम से शीघ्र मिलन की आशा उखड़ गई| उनका विरह बढ़ गया| वह जड़वत हो गईं| उनके नेत्रों से अश्रु भी नहीं निकल रहे|*

हुए अति विस्मित उद्धव देख प्रेम गोपिन प्रति कृष्न |
हुआ दूर अहंकार ज्ञान करने लगे प्रशंसा महन || (१३७)
धन्य ब्रजवासी प्रेम आपका अथाह प्रति भगवन |
नहीं कर सकता स्पर्श मैं है परे मेरी क्षुद्र भावन || (१३८)
हूंगा कृतार्थ मिल जाए यदि कण धूलि इन चरन |
पर नहीं योग्य स्पर्श पग अतः करूँ मैं अभिनन्दन || (१३९)

भावार्थ: *गोपियों का कृष्ण के प्रति प्रेम देख उद्धव विस्मित हो गए| उनका ज्ञान का अहंकार दूर हो गया| महात्मा (उद्धव) उनकी प्रशंसा करने लगे| ब्रजवासी धन्य हैं| आपका प्रभु के प्रति प्रेम अथाह है| इसे मैं स्पर्श भी नहीं कर सकता| यह मेरी क्षुद्र कल्पना से परे है| यदि इन के चरणों की धूल का एक कण भी मिल जाए तो मैं कृतार्थ हूंगा| लेकिन मैं चरण स्पर्श करने के योग्य भी नहीं हूँ, अतः प्रणाम करता हूँ|*

करबद्ध करने लगे स्तुति उद्धव हे पावन वृंदावन |
हूंगा मैं परम सुभग यदि कर सकूं वास इस भुवन || (१४०)
बन कुञ्ज लता औषधि जो मिल सके अवसर पावन |
करूँ स्पर्श चरण प्रति दिन चढ़े धूलि सर सम चन्दन || (१४१)

भावार्थ: *करबद्ध तब उद्धव स्तुति करने लगे ,'हे पवित्र वृंदावन, यदि इस भूमि पर मैं कुञ्ज, लता अथवा औषधि बन वास कर सकूं तो अत्यंत सौभाग्यशाली हूंगा| जिससे*

मुझे प्रति दिन (ब्रजवासियों का) चरण स्पर्श करने का पवित्र अवसर मिल सके और मेरे मस्तिष्क पर चन्दन के समान यह धुल चढ़े|

हैं धन्य ब्रजवासी जो छोड़े लोक सुख हेतु भगवन |
पाए परम प्रेम प्रभु कहाँ ऐसा भाग्य हम सम जन || (१४२)
कर इच्छा पा सकूं मैं एक कण धूलि इन चरण पावन |
सुनूं सदैव लीला कृष्ण करें जो यह गोपी गायन || (१४३)
कर वंदन चरण ब्रजवासी सीख पाठ प्रेम पावन |
हो निष्फल लक्ष्य लौटे तब मथुरा नगर उद्धव महन || (१४४)

भावार्थ: *ब्रजवासी धन्य हैं जिन्होंने भगवान् के प्रति प्रेम के कारण सांसारिक सुख त्याग दिए| प्रभु का परम प्रेम पाया| हम जैसे प्राणियों का ऐसा सौभाग्य कहाँ? इन (ब्रजवासियों की) पवित्र चरण धूल का एक कण पा सकूं, सदैव गोपियों द्वारा गाई कृष्ण लीला सुनूं, ऐसी इच्छा करते हुए, पवित्र प्रेम का पाठ सीख कर, ब्रजवासियों के चरणों की वन्दना करते हुए, अपने लक्ष्य में निष्फल हो (वन ब्रजवासियों को सांत्वना दे सकें), महात्मा उद्धव मथुरा नगर लौट गए|*

कुरुक्षेत्र में कृष्ण और ब्रजवासी मिलन

सुनो कथा अब मिले कैसे ब्रजवासी और कृष्न |
हुआ था कुरुक्षेत्र पावन भूमि में उनका मिलन || (९४५)

भावार्थ: *अब कथा सुनो कि कृष्ण और ब्रजवासी कैसे मिले? उनका मिलन पावन कुरुक्षेत्र भूमि में हुआ था|*

अनेक वर्ष पश्चात त्यागे जब कृष्ण मथुरा पट्टन |
था निवास द्वारका हुआ तब सूर्य ग्रहण गहन || (९४६)

भावार्थ: *कृष्ण के मथुरा नगर छोड़ने के कई वर्ष पश्चात जब उनका निवास द्वारका था, तब घोर सूर्य ग्रहण पड़ा|*

कहें शास्त्र करो त्रि बार जल स्नान काल ग्रहन |
प्रथम आरम्भ द्वितीय मध्य तृतीय पश्चात शमन || (९४७ क)
है आवश्यक दें दान दक्षिणा पश्चात विराम ग्रहन |
दें ब्राह्मण और निर्धन मुक्त हस्त संपत्ति और धन || (९४७ ख)

भावार्थ: *शास्त्रानुसार ग्रहण के समय तीन बार स्नान करें| प्रथम आरम्भ (ग्रहण), द्वितीय मध्य एवं तृतीय समाप्ति पर| ग्रहण की समाप्ति पर दान दक्षिणा देना आवश्यक है| ब्राह्मणों और निर्धनों को मुक्त हस्त से धन और संपत्ति का दान करें|*

इस घोर ग्रहण काल गए ब्रह्म सरोवर श्री कृष्न |
थे साथ जनयित्र देवकी वसुदेव सभी नृपाङ्गन || (९४८)

भावार्थ: *इस घोर ग्रहण के समय श्री कृष्ण अपने माता पिता देवकी, वसुदेव और सभी रानियों के साथ ब्रह्म सरोवर गए|*

मिली सूचना नन्द आए ब्रह्म सरोवर मधुसूदन |
हुई प्रसन्नता अपार कर सकेंगे प्रिय के दर्शन || (९४९)

बुलाए सभी ब्रजवासी कहे करें प्रस्थान तत्क्षन |
कुरुक्षेत्र ब्रह्म सरोवर आए जहां प्रिय कृष्न || (९५०)
सुन समाचार दौड़ गई चहुँ ओर लहर उल्लसन |
झुलस रहे थे ब्रजवासी विरह अग्नि दीर्घ हरिमन् || (९५१)
हुआ प्रतीत सम कर रहीं मेघमाला अमृत वर्षन |
मृत-प्राय ब्रजवासी हुए पूर्ण ऊर्जा सम्पन्न || (९५२)

भावार्थ: *नन्द (बाबा) को सूचना मिली कि मधुसूदन ब्रह्म सरोवर आए हैं| उनके हृदय में अपार प्रसन्नता हुई कि अब प्रिय के दर्शन कर सकेंगे| सभी ब्रजवासियों को बुलाया और कहा तुरंत ब्रह्म सरोवर, कुरुक्षेत्र को प्रस्थान करें जहां प्रिय कृष्ण आए हैं| यह समाचार सुन चारों ओर प्रसन्नता की लहर दौड़ गई| ब्रजवासी दीर्घ काल से विरह अग्नि में झुलस रहे थे| ऐसा प्रतीत हुआ जैसे मेघमाला ने अमृत की वर्षा कर दी हो| मृत-प्राय ब्रजवासियों में पूर्ण ऊर्जा आ गई|*

बनाने लगीं गोपियाँ पकवान जो प्रिय मधुसूदन |
कीं शृंगार धार आभूषण सुन्दर वस्त्र अपने तन || (९५३)
छोड़ सम वृद्ध हेतु सुरक्षा सम उपानंद ब्रज भुवन |
चल दिए बैठ शकट सभी ब्रजवासी मिलने भगवन || (९५४)

भावार्थ: *जो कृष्ण को प्रिय थे, वह पकवान गोपियाँ बनाने लगीं| अपने तन पर आभूषण और सुन्दर वस्त्र धारण कर शृंगार किया| ब्रज भूमि की सुरक्षा के लिए कुछ वृद्ध जैसे उपानंद जी को छोड़ सभी ब्रजवासी बैल गाड़ियों में बैठकर भगवान् से मिलने चल दिए|*

करते जाप पथ कृष्ण गोविन्द दामोदर मधुसूदन |
थे मुख प्रसन्न होंगे पश्चात वर्ष साठ कृष्ण दर्शन || (९५५)
पश्चात दीर्घ काल थे युवा ब्रजवासी और कृष्न |
न करे संशय कोई हुआ संभव हेतु लीला भगवन || (९५६)

भावार्थ: *मार्ग में कृष्ण, गोविन्द, दामोदर, मधुसूदन का जाप करते उनके मुख प्रसन्न थे| साठ वर्ष पश्चात कृष्ण के दर्शन होंगे| दीर्घ काल के पश्चात ब्रजवासी और कृष्ण युवा थे| इसमें कोई संशय न करे| यह प्रभु लीला से संभव है|*

थे उपस्थित प्रमत ऋषि मुनि संत काल सूर्य ग्रहन |
नारद वेद व्यास गौतम भारद्वाज याग्यवल्क्य महन || (९५७)
युधिष्ठिर द्रौपदी कुंती और सब पांडव भ्रातृन |
कौरव कर्ण अन्य नृप करने स्नान सरोवर पावन || (९५८)

भावार्थ: *सूर्य ग्रहण के समय बुद्धिमान ऋषि, मुनि, संत, नारद, वेद व्यास, भारद्वाज, याग्यवल्क्य आदि महात्मा उपस्थित थे| युधिष्ठिर, द्रौपदी, कुंती, सभी पांडव भाई, कौरव, कर्ण, अन्य सम्राट पवित्र सरोवर में स्नान करने आए थे|*

थीं सहस्रस तम्बू कतार तीर ब्रह्म सरोवर पावन |
था भव्य एक तम्बू हेतु वसुदेव देवकी उस भुवन || (९५९)
ठहरे सम्बन्धी अनेक उस तम्बू पूज्य यादव कुल जनन |
मिलीं वहां कुंती भ्राता वसुदेव करतीं रुदन || (९६०)
नहीं ली सुध भैया जब भटक रहे हम सम परिभ्रमिन् |
दिया विष मम सुत की चेष्टा हों भस्म हम सब दहन || (९६१)
छीना राज्य दिया अज्ञातवास वह कौरव दुर्योधन |
किया अपमानित पुत्रवधू कर प्रयास चीर हरन || (९६२)
नहीं हुए सहाय उपस्थित धृतराष्ट्र भीष्म गुरुजन |
हैं सहोदर आप नहीं आए क्यों हेतु देने शरन || (९६३)

भावार्थ: *पवित्र ब्रह्म सरोवर के तीर पर सहस्त्रों तम्बू की कतार थीं| उस भूमि पर एक दिव्य तम्बू देवकी वसुदेव का था| उसमें अनेक पूज्य यादव कुल के संबंधी ठहरे थे| वहां कुंती अपने भाई वसुदेव से रोती हुई मिलीं, 'है भैया, जब हम भिक्षुकों की भांति भटक रहे थे, तब आपने हमारी सुध क्यों नहीं ली? दुर्योधन ने मेरे पुत्र (भीम) को विष दिया, हमें जलाकर भस्म करने का प्रयास किया, हमारा राज्य छीना, अज्ञातवास दिया, पुत्रवधू का चीर हरण के प्रयास से अपमानित किया| वहां उपस्थित धृतराष्ट्र,*

भीष्म, गुरुजनों ने कोई मदद नहीं की| आप तो सहोदर (भ्राता) हैं, फिर मदद देने हेतु क्यों नहीं आए?'

लगा कंठ दिए सांत्वना तब वसुदेव कुंती स्व-बहन |
न करो शोक प्रिय हुआ यह सब वश कालचक्र भगवन || (९६४)
करो स्मरण पाया दुःख कितना तेरा सहोदर भ्रातृन |
कर बंद कारावास दिया कितने कष्ट कंस दुर्जन || (९६५)
किया वध पटक छह नवजात पुत्र मेरे ही अभिमुखन |
था सुभग बच गए किसी भांति बलराम और मधुसूदन || (९६६)

भावार्थ: *गले लगा कर वसुदेव ने अपनी बहन कुंती को सांत्वना दी, 'प्रिय, शोक न करो| यह सब प्रभु के कालचक्र के वश हुआ| अपने सहोदर भाई के दुःख को स्मरण करो| कारावास में बंद कर दुष्ट कंस ने कितने कष्ट दिए| मेरे ही सम्मुख मेरे नवजात छह पुत्रों को पटक कर मार दिया| सौभाग्यशाली था कि किसी प्रकार बलराम और कृष्ण बच गए|'*

नहीं वश स्वयं कुछ समझो यह भली भांति प्रमत बहन |
जन्म मरण यश अपयश दुःख सुख हैं सब आधीन भगवन || (९६७)
न हो चिंतित गया काल बुरा आएं दिन शुभ प्रगेतन |
आए तभी ब्रजवासी यशोदा नन्द बैठ शकट वाहन || (९६८)

भावार्थ: *'हे बुद्धिमती बहन, अपने वश में कुछ भी नहीं है, यह भली भांति समझो| जन्म-मरण, यश-अपयश, दुःख-सुख, सब प्रभु के आधीन है| चिंतित न हो| बुरा समय बीत गया| अब भविष्य में शुभ दिन आएंगे|' तभी सभी ब्रजवासी, यशोदा, नन्द बैलगाड़ी से आ गए|*

थे संग दाम सुदाम श्रीदाम वसुदाम सुबल सुनंदन |
मधुमंगल आदि सखा और सखी राधा ललिता चन्दन || (९६९)
विशाखा आदि जो थीं आतुर मिलें शीघ्र कृष्न |
थे बैठे सभा संग मंत्रीगण उस काल श्री मधुसूदन || (९७०)

भावार्थः *(यशोदा और नन्द बाबा के) साथ में (श्री कृष्ण के बालक सखा) दाम, सुदाम, श्रीदाम, वसुदाम, सुबल, सुनंदन, मधुमंगल आदि सखा और राधा, ललिता, चन्दन, विशाखा आदि सखी थीं जो कृष्ण से शीघ्र मिलने को आतुर थीं| उस समय श्री मधुसूदन मंत्रियों के साथ सभा में बैठे थे|*

पधारे नन्द बाबा संग माँ यशोदा और ब्रजवासिन |
दिया समाचार शुभ तभी एक सैनिक कर्ण भगवन || (९७१)
आई मुस्कुराहट मुख बोले दाऊ चलो शिविर तत्क्षन |
आए मैया बाबा संग ब्रजवासी हैं व्याकुल मिलन || (९७२)
दौड़े ओर शिविर दोनों नहीं हो रहा विरह सहन |
पुकारते मैया और बाबा आ रहे हम हेतु मिलन || (९७३)

भावार्थः *नन्द बाबा और यशोदा मैया ब्रजवासियों के साथ पधारे हैं, यह शुभ समाचार एक सैनिक ने भगवान् के कर्ण में कहा| उनके मुख पर मुस्कराहट आ गई और बोले, 'दाऊ, तुरंत शिविर की ओर चलो| मैया, बाबा, ब्रजवासियों के साथ आए हैं और मिलने को व्याकुल हैं|' दोनों (कृष्ण और बलराम) शिविर की ओर दौड़े| उनसे विरह सहन नहीं हो रहा था| 'मैया और बाबा, हम मिलने आ रहे हैं', यह पुकारते हुए चले|*

देख सम्मुख कृष्ण लगाया मैया हृदय प्रिय गहन |
ले रहीं बलैयां नहीं रुक रहे अश्रु उनके नयन || (९७४)
उमड़ा मातृ प्रेम बहने लगी धारा दुग्ध उनके स्तन |
करते रुदन पकड़ लिए बलराम नन्द बाबा के चरन || (९७५)

भावार्थः *कृष्ण को सम्मुख देख मैया ने अपने अति प्रिय को हृदय से लगा लिया|वह बलैयां ले रहीं थीं| उनके नेत्रों से अश्रु नहीं रुक रहे थे| उनका मातृ प्रेम उमड़ा और उनके स्तनों से दुग्ध की धारा बहने लगी| बलराम ने रोते हुए नन्द बाबा के चरण पकड़ लिए|*

नहीं रुके अश्रु मैया न किया कभी ऐसा रुदन |
थीं सम प्रतिमा ब्रज में था तन कंकाल विरह कृष्न || (९७६)

थे खड़े कृष्ण अब तक समान शुष्क काठ विग्रह घन |
रोने लगे उच्च स्वर पुकार हे मैया मैया करुन || (१७७)

भावार्थ: *मैया के अश्रु नहीं रुक रहे थे| ऐसा रुदन उन्होंने कभी नहीं किया था| ब्रज में वह प्रतिमा के समान थीं| उनका शरीर कृष्ण के विरह में कंकाल के समान हो गया था| अब तक कृष्ण सूखी कठोर लकड़ी के समान खड़े थे, वह उच्च स्वर में 'दयालु मैया मैया' पुकार रोने लगे|*

बलराम बैठ गोद नन्द बाबा कर रहे रुदन गहन |
दुलारते सहलाते मस्तक थे बाबा के भी नम नयन || (१७८)

भावार्थ: *बलराम नन्द बाबा की गोद में बैठे घोर रुदन कर रहे थे| दुलारते, मस्तक सहलाते, बाबा के नेत्र भी नम थे|*

देख दृश्य मर्मज्ञ करने लगे देवकी वसुदेव रुदन |
रोहिणी बोलीं तब हे भाई वसुदेव देवकी बहन || (१७९)
आए मिलने अतिथि अनेक करें हम उनका अभिनन्दन |
छोड़ें एकांत इन्हें हुआ पश्चात दीर्घ काल मिलन || (१८०)
अवश्य अवश्य कहतीं बहन रोहिणी आप सत्य वचन |
छुपाते अश्रु तब चले गए बाह्य शिविर वह त्रि महन || (१८१)

भावार्थ: *मार्मिक दृश्य देखकर देवकी और वसुदेव रोने लगे| तब रोहिणी बोलीं, 'हे भाई वसुदेव, बहन देवकी, अनेक अतिथि मिलने आए हैं, हम उनका स्वागत करें| इन्हें एकांत में छोड़ें| एक लम्बे समय के बाद इन का मिलन हुआ है|' 'अवश्य, अवश्य, रोहिणी बहन आप सत्य वचन कहतीं हैं|' आंसुओं को छिपाते तब तीनों महान शिविर से बाहर चले गए|*

हुआ शांत हृदय काल कुछ मैया रुका रुदन |
था रुँधा कंठ असमर्थ बोल सकें कुछ वचन || (१८२)
थी समान स्थिति कृष्ण थे वह भावावेश अति गहन |
कर रहे आदान प्रदान भाव हृदय माध्यम नयन || (१८३)

भावार्थः *कुछ समय पश्चात मैया का हृदय शांत हुआ और उनका रोना रुक गया| कंठ रुँधा था अतः कुछ बोलने में असमर्थ थीं| यही स्थिति कृष्ण की थी| वह अति घने भावावेश में थे| दोनों हृदय के भावों का आदान प्रदान नेत्रों के माध्यम से कर रहे थे|*

कीं विचार तब मैया करें प्रतीक्षा बाह्य निवेशन |
सखा सखी अन्य ब्रजवासी हेतु शीघ्र कृष्ण मिलन || (१८४)
नहीं मिल पाएंगे अकुंठ जब उपस्थिति हम वृद्ध जन |
छोड़ देंगे प्राण यदि नहीं मिले तुरंत यह कृष्न || (१८५)
पकड़ बांह बलराम बोलीं कर नाथ नन्द सम्बोधन |
कर रहे प्रतीक्षा बाह्य अन्य अतिथि करने कृष्ण मिलन || (१८६)
नहीं आएंगे वह भीतर हैं जब हम सब यहां इदन्तन |
समझ संकेत मैया चले तब नन्द दाऊ बाह्य निवेशन || (१८७)

भावार्थः तब मैया (यशोदा) ने विचार किया कि शिविर के बाहर कृष्ण से मिलने के लिए सखा, सखी और ब्रजवासी प्रतीक्षा कर रहे हैं| वह मुक्त हृदय से हम वृद्धों की उपस्थिति में नहीं मिल पाएंगे| यदि शीघ्र कृष्ण से मिलन नहीं हुआ तो वह प्राण त्याग देंगे| बलराम की बांह पकड़ वह पति नन्द को सम्बोधित कर बोलीं, 'कृष्ण से मिलने के लिए अन्य अतिथि बाहर प्रतीक्षा कर रहे हैं| जब तक हम यहां पर उपस्थित हैं, वह भीतर नहीं आएंगे|' मैया का संकेत समझ तब बलराम, नन्द बाबा (और मैया यशोदा) शिविर से बाहर चले गए|

कुरुक्षेत्र में गोपी-कृष्ण संवाद

थीं आतुर गोपियाँ करने दर्शन प्रिय मधुसूदन |
किया तभी संकेत मैया जाओ सब भीतर निवेशन || (९८८)
गईं दौड़ लिपट कान्हा करने लगीं वह रुदन गहन |
बसाए हृदय षष्ठ दशक हो गया वह पूर्ण मन्मन् || (९८९)

भावार्थ: *अपने प्रिय मधुसूदन के दर्शन के लिए गोपियाँ आतुर थीं| तभी मैया (यशोदा) ने संकेत दिया कि शिविर के अंदर जाओ| दौड़ कर वह कन्हैया से लिपट घोर रुदन करने लगीं| ६० वर्ष से जो हृदय में बसा रखी थी, वह इच्छा पूर्ण हुई|*

चाहतीं बसें प्रियतम सदैव निष्कंटक उनके नयन |
पर हो रहा था व्यवधान झपकतीं जब पलक लोचन || (९९०)
क्यों बनाईं पलक कर रहीं भर्त्सना वह चतुरानन |
आनंद सिंधु मिलन प्रियतम कृष्ण हो गईं वह मग्न || (९९१)

भावार्थ: *चाह रहीं थीं कि प्रियतम (कृष्ण) उनके नेत्रों में निष्कंटक बसें, पर नेत्रों का पलक झपकना व्यवधान कर रहा था| ब्रह्मदेव की भर्त्सना करने लगीं कि उन्होंने पलक क्यों बनाईं? प्रियतम कृष्ण का मिलन आनंद सिंधु समान था जिसमें वह मग्न हो गईं|*

चाहतीं कहें कुछ पर न कह सकीं हेतु कंठ अवरोधन |
हो गए अधीर कृष्ण देख दृश्य यह करने लगे रुदन || (९९२)
धर धैर्य हृदय संभल कर तब बोले वह मधुर वचन |
है दोष मेरा हुई जो यह दशा तुम सब अति प्रियजन || (९९३)
हो तुम सब प्राणों के भी प्राण मेरे यह सत्य कथन |
मेरे वियोग में किया है तुमने अत्यंत दुःख सहन || (९९४)

भावार्थ: *(गोपियाँ) कुछ कहना चाहतीं हैं पर कंठ अवरुद्ध होने के कारण कुछ कह नहीं पातीं| यह दृश्य देख कृष्ण अधीर हो गए और रोने लगे| फिर हृदय में धैर्य धारण कर संभलते हुए मधुर वचन बोले, 'यह मेरा ही दोष है जो तुम सब अति प्रियजनों की*

यह दशा हुई है| यह सत्य कथन है कि तुम सब मेरे प्राणों के भी प्राण हो| मेरे वियोग में तुमने अत्यंत दुःख सहे हैं|’

किया त्याग तुमने सब हेतु मम गृह कुटुंब गुरुजन |
पर चला गया मैं छोड़ तुम्हें समझतीं मुझे कृतघ्न || (९९५)
पर है सत्य नहीं भुला सका मैं तुम्हें अपि एक क्षन |
करता रहता दिन रात सदैव तुम्हारा ही स्मरन || (९९६)
हूँ मैं प्रार्थी क्षमा हेतु दिए जो मैंने कष्ट तुम्हें भूयन |
हुआ शांत मन गोपिन सुन मुख हरि करुणा वचन || (९९७)

भावार्थ: *' मेरे लिए अपना घर, परिवार, गुरुजन का त्याग किया है, लेकिन मैं तुम्हें छोड़ कर चला गया, मैं अकृत्यज्ञ हूँ, ऐसा तुम समझती हो| पर सत्य यह है कि मैं तुम्हें एक क्षण भी नहीं भुला सका| तुम्हारा ही स्मरण दिन रात सदैव करता रहता हूँ| मैंने जो तुम्हें घोर कष्ट दिए हैं, उसके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ|' प्रभु के करुणा भरे वचन सुन गोपियों का मन शांत हो गया|*

देते सांत्वना बोले कृष्ण सुनो सखियों मेरे वचन |
भक्ति प्रति मेरे समझो तुम स्वरुप अमृत जीवन || (९९८)
यही प्रेम समर्पण तुम्हारा बना हेतु हमारे मिलन |
है यही उच्चतम परिपक्व दशा प्रति भक्ति भगवन || (९९९)

भावार्थ: *सांत्वना देते कृष्ण बोले, 'हे सखियों, मेरे वचन सुनो| मेरे प्रति भक्ति ही जीवन का अमृत स्वरुप है| यही तुम्हारा प्रेम और समर्पण हमारे मिलन का कारण बना| भगवान् के प्रति भक्ति की यही उच्चतम परिपक्व दशा है|*

कहूँ अति गुह्यतम रहस्य जो जानते केवल बुद्धिवन |
हूँ मैं ही विष्णु   सर्वत्र व्याप्त   पुरुषोत्तम   भगवन || (१,०००)
करूँ वास हिय हर जन नहीं कोई मुझ से असम्भिन्न |
जैसे नहीं मृदा पृथक घट सम मैं नहीं पृथक जन || (१,००१)

भावार्थः *मैं तुम्हें अत्यंत गुह्यतम रहस्य बताता हूँ जिसे केवल बुद्धिमान जानते हैं| मैं ही सर्वत्र व्याप्त विष्णु पुरुषोत्तम भगवान् हूँ| में प्रत्येक प्राणी के हृदय में वास करता हूँ| कोई मुझ से पृथक नहीं है| जैसे मिट्टी को घड़े से पृथक नहीं किया जा सकता उसी समान मैं प्राणियों से पृथक नहीं हूँ|*

हो तुम अंग मेरे ही अतः क्यों डुबाती विरह स्व-मन |
पाओगी मुझे समीप सदा करो जब भी मेरा चिंतन || (१,००२)
है तन मन सब कुछ प्रेम मम समझो यह तुम सुवचन |
हूँ मैं संग सदैव नहीं हुआ पृथक कभी एक क्षन || (१,००३)
न हो दुःखी कभी बस करती रहो सदैव मेरा स्मरन |
हूंगा मैं प्रकट तुरंत हिय हैं सत्य यह मेरे वचन || (१,००४)

भावार्थः *तुम मेरे ही अंग हो, अतः अपने मन को विरह में क्यों डुबाती हो? जब भी मेरा चिंतन करोगी, मुझे सदैव अपने समीप पाओगी| तन, मन सब कुछ मेरा प्रेम है, इन सुवचनों को समझो| मैं सदैव तुम्हारे साथ हूँ, एक क्षण भी पृथक नहीं हुआ| दुःखी नहीं हो, बस मेरा स्मरण करती रहो| मैं तुरंत (तुम्हारे) हृदय में प्रकट हो जाऊँगा, यह मेरे सत्य वचन हैं|*

हुईं मोहित गोपियाँ सुन माधव के सत्य मधुर वचन |
कहने लगी एक गोपी तब कर हृदय भाव सङ्गोपन || (१,००५)
हे कमलनाथ समझे अब करते क्यों कमल चरण चिंतन |
ऋषि मुनि संत योगेश्वर अगाध महा बोध सम्पन्न || (१,००६)
हैं आधार चरण आपके डूबे जो भवसागर भूजन |
हो प्रसन्न दें वर रहें विराजमान हिय यह चरन || (१,००७)

भावार्थः *कृष्ण के सत्य मधुर वचन सुन गोपियाँ मोहित हो गईं| अपने हृदय के भाव (विरह में दुःखी भाव) छिपाकर एक गोपी कहने लगी, 'हे कमलनाथ, अब हम समझे कि ऋषि, मुनि, योगेश्वर संत जिन्हें महान ज्ञान का बोध है, वह आपके चरण कमलों का चिंतन क्यों करते हैं| भवसागर में डूबे प्राणियों के लिए आपके चरण आधार हैं| प्रसन्न हो यह वर दीजिए कि आपके यह चरण हृदय में विराजमान रहें|*

कर रहीं यद्यपि निवेदन हरि गोपियाँ हेतु मोचन |
पर रहे स्मरण त्याग दीं वह स्व-सर्वस्व हेतु भगवन || (१,००८)
नहीं कोई भव सागर हेतु उन जिनके हिय मधुसूदन |
है यह केवल भाव आदर प्रति त्रिलोकी नारायन || (१,००९)

भावार्थः *यद्यपि गोपियाँ उद्धार के लिए प्रभु से निवेदन कर रहीं हैं, परन्तु स्मरण रहे कि इन्होंने भगवान् के लिए अपना सर्वस्व त्याग दिया है| जिनके हृदय में मधुसूदन हैं, उनके लिए कोई भवसागर नहीं है| यह तो त्रिलोक के स्वामी नारायण के प्रति आदर भाव है|*

बोली अन्य सखी हैं हम विस्मित हे सुकोमल कृष्न |
कैसे किए त्याग आप प्रिय जनयित्र और ब्रजजन || (१,०१०)
क्या नहीं स्मरण आपको किए लीला संग हम ब्रज वन |
आप तो विदग्ध मृदु युक्त सद्गुण सुशील अनुकम्पिन || (१,०११)
हैं हम ही अभग आप तो हैं रहित दोष मन और तन |
पर हैं विस्मित कह रहे आप डूबे हैं विरह ब्रजजन || (१,०१२)
और कह रहे रखो सदा स्व-हृदय मेरे कमल रुप चरन |
जो डूब रहा हो स्वयं कर सके वह रक्षा कैसे अन्य जन || (१,०१३)

भावार्थः *दूसरी सखी बोली, 'हे सुकोमल कृष्ण, हम आश्चर्यचकित हैं| आपने अपने प्रिय माता पिता और ब्रजवासियों का त्याग कैसे कर दिया? क्या आपको हमारे साथ ब्रज वन में लीला स्मरण नहीं है? आप तो कलाभिज्ञ, मृदु, गुण संपन्न, सुशील और दयालु हैं| हम ही अभाग्यशाली हैं| आपके तन और मन तो दोष रहित हैं| हमें आश्चर्य है कि आप कह रहे हैं कि आप ब्रजवासियों के विरह में डूबे हैं, और यह भी कह रहे हैं कि अपने हृदय में सदैव मेरे कमल रूपी चरणों को रखो| जो स्वयं डूब रहा हो, वह अन्य प्राणी की रक्षा कैसे कर सकता है?'*

करो क्षमा हमारे निरर्थक मूढ़ प्रश्न हे मधुसूदन |
हम हैं मत्त विरह अतः नहीं सूझता अवबोधन || (१,०१४)
जैसे बिन घोंसला घूमता रहता खग व्यर्थ वन |
भटक रहे उसी भांति हम दीन ब्रजवासी इस भुवन || (१,०१५)

भावार्थ: *हे मधुसूदन, हमारे निरर्थक मूर्खता पूर्ण प्रश्नों को क्षमा करो| हम विरह में पागल हैं, अतः हमें ज्ञान नहीं सूझता| जिस प्रकार बिना घोंसले के पक्षी व्यर्थ में सर्वत्र घूमता रहता है, उसी भांति हम दीन ब्रजवासी इस भूमि पर भटक रहे हैं|*

करें मनन आपका हेतु स्वार्थ सम देव चतुरानन |
या योगेश्वर आदि जो चाहें भव सागर निर्मोचन || (१,०१६)
पर करें प्रेम हम निःस्वार्थ चाहें रहें आप प्रसन्न |
जानें भली भांति समान हम तड़पें आप विरह तपन || (१,०१७)
आए हम यहां कृष्ण देने आपको यह आश्वासन |
बरसे कृपा रूप अमृत हमारा दे सम सोम शमन || (१,०१८)

भावार्थ: *ब्रह्मा समान देवता अथवा योगी आदि स्वार्थवश या भव सागर से तरने के लिए आपका चिंतन करते हैं| लेकिन हम तो निःस्वार्थ प्रेम आपकी प्रसन्नता के लिए करते हैं| हम भली भांति जानते हैं कि हमारे समान आप विरह में जलते हैं| हे कृष्ण, हम यहाँ यह आश्वासन देने आए हैं कि हमारी कृपा रूपी अमृत वर्षा आपको चन्द्रमा के समान शांति (शीतलता) दे|*

नहीं करते रुदन हम हेतु आपकी विरह तड़पन |
होते नम नैन हमारे सुन आपकी दयनीय दशा मन || (१,०१९)
हो तुम अकेले करते रहते सदैव दारुण दुःख सहन |
हैं आपके प्राण रुप राधा सखी हमारी कृष्न || (१,०२०)
हो विराजमान हृदय रूप रथ स्वामिन वृंदावन |
पाओगे शांति मिले प्रसन्नता चलो ब्रज भाव मन || (१,०२१)

भावार्थ: *हम आपके विरह में तड़पते हुए नहीं रोते| हमारे नेत्र तो आपके मन की दयनीय दशा सुन नम हो जाते हैं| तुम अकेले हो, सदैव घोर दुःख (ब्रजवासियों से बिछड़ने का विरह दुःख) सहते रहते हो| हे कृष्ण, हमारी सखी राधा आपके प्राण स्वरुप है| वृंदावन की स्वामिनी (राधा) के हृदय रूप रथ पर विराजमान हो मनोभाव से ब्रज चलो| वहां तुम्हें शान्ति और प्रसन्नता मिलेगी |*

जानें हम नहीं पृथक वृंदावन और आपका मन |
रखें यदि हृदय राधा आप अपने पग पद्म पावन || (१,०२२)
हो प्रसन्न राधा देंगी तब आपको सुख और शमन |
बोलीं राधा तब सुनो हमारे प्रियतम मधुसूदन || (१,०२३)
नहीं रखेंगे प्राण कोई भी मनुज खग गौ विटपिन् |
हो जाएगा ब्रज खंडहर नहीं गए यदि वृंदावन || (१,०२४)

भावार्थ: *हम जानते हैं कि आपका मन और वृंदावन पृथक नहीं हैं|यदि आप अपने पवित्र कमल रूपी चरण राधा के हृदय पर रखेंगे तो राधा प्रसन्न हो आपके सुख और शान्ति देंगी| तब राधा बोलीं, 'हमारे प्रियतम मधुसूदन, यदि आप वृंदावन नहीं गए तो कोई भी मनुष्य, पक्षी, गौ, वृक्ष प्राण नहीं रखेंगे| ब्रज खंडहर हो जाएगा|*

सुन हिय मार्मिक करुणामय राधा रानी के वचन |
बढ़ गया प्रेम और हुए अत्यंत व्याकुल मधुसूदन || (१,०२५)
हो आविष्ट भाव राधा देने लगे सांत्वना भगवन |
नहीं उतार सकूं आपका यह प्रेम ऋण कदाचन || (१,०२६)

भावार्थ: राधा रानी के करुणामय और हृदय को छू जाने वाले वचन सुन मधुसूदन का प्रेम बढ़ गया|वह व्याकुल हो गए| राधा भाव में आविष्ट हो प्रभु सांत्वना देने लगे, 'मैं आपका यह प्रेम ऋण कदाचित कभी नहीं उतार पाऊंगा|'

हे प्रिय सखियों सुनो तुम सब अब मेरे यह सत्य वचन |
रात्रि काल जब होता अकेला करता रहता रुदन || (१,०२७)
उठती टीस हृदय मेरे आते ब्रज प्रसंग स्मरन |
नहीं समझ सकता कोई दुःख मेरा द्वारका पट्टन || (१,०२८)
पूछतीं रुक्मिणी सत्यभामा आदि सभी नृपाङ्गन |
प्रिय मित्र उद्धव भी हुआ क्या तुम्हें मधुसूदन || (१,०२९)

भावार्थ: *'हे प्रिय सखियों, अब तुम सब मेरे सत्य वचन सुनो| रात्रि समय जब मैं अकेला होता हूँ तो रोता रहता हूँ| ब्रज के प्रसंग सोच मेरे हृदय में टीस उठती है|*

द्वारका नगर में मेरा दुःख कोई नहीं समझ सकता| रुक्मिणी, सत्यभामा आदि रानियाँ और प्रिय मित्र उद्धव भी पूछते हैं कि हे मधुसूदन तुम्हें क्या हुआ?'

नहीं समझ सकते यह सब पीड़ा होती जो मेरे मन |
नहीं कहता व्यथा तड़पता रहता हर रात्रि दिवन् || (१,०३०)

भावार्थ: *'यह सब मेरे हृदय की पीड़ा को नहीं समझ सकते| अपनी व्यथा मैं नहीं कहता, प्रति दिन रात तड़पता रहता हूँ|'*

हो तुम सब प्रिय सखी सखा ब्रजवासी मेरे जीवन |
उन सब में भी हे राधे तुम तो हो मेरे प्राण पवन || (१,०३१)
हो मोहित प्रेम तुम सब आधीन तुम्हारे मेरा मन |
समझो दुर्दैव मेरा रहूँ मैं दूर द्वारका भुवन || (१,०३२)
नहीं रह सके प्रिया बिन प्रियतम है यह सत्य वचन |
त्यागे यदि प्राण एक न रख सके दूजा अवश्य जीवन || (१,०३३)
नहीं करते त्याग प्राण इस भय से यह प्रेमी भूजन |
समझो उस प्रिया प्रेमवती और प्रियतम प्रेमवन || (१,०३४)
रहते शुभेच्छु परस्पर यद्यपि तड़पते वह विरह तपन |
रहे प्रसन्न सदैव दूजा रहती यह इच्छा उनके मन || (१,०३५)

भावार्थ: *तुम सब ब्रजवासी सखा, सखी मेरे जीवन हैं|उन सब में भी हे राधे तुम तो मेरे प्राण पवन (श्वास) हो| तुम्हारे प्रेम से मोहित हो मेरा मन तुम्हारा आधीन है| यह मेरा दुर्भाग्य समझो कि मैं (तुम सब से) दूर द्वारका भूमि में रहता हूँ| यह सत्य तथ्य है कि प्रिया बिन प्रियतम नहीं रह सकती| यदि एक प्राण त्याग दे तो दूसरा अवश्य जीवन नहीं रख सकता| इसी भय से यह प्रेमी प्राणी प्राण नहीं त्यागते| इस प्रिया को प्रेमवती और प्रियतम को प्रेमवन (प्रेम में डूबा) समझो| यद्यपि यह विरह अग्नि में तड़पते रहते हैं परन्तु एक दूसरे के शुभेच्छु रहते हैं| दूसरा प्रसन्न रहे, बस यही इनके मन की इच्छा होती है|*

हे राधे हो तुम मुझे सर्वाधिक प्रिय यह सत्य वचन |
जानूं नहीं रहना चाहतीं जीवित बिन मेरे एक क्षन || (१,०३६)

नहीं रख सकता मैं स्व-प्राण यदि त्यागा तुमने जीवन |
स्वार्थवश इस हेतु करता मैं सदैव विनती भगवन || (१,०३७)
करो रक्षा तुम सदैव प्राण अपने हेतु मेरे जीवन |
रहूंगा मैं सदा तुम्हारे हिय मेरा यह दृढ़ वचन || (१,०३८)
कर क्रीड़ा संग तुम सब सखी लौटूं तब स्व-भवन |
यद्यपि वास द्वारका पर मेरा मन यहां वृन्दावन || (१,०३९)

भावार्थ: *हे राधे, तुम मुझे सर्वाधिक प्रिय हो, यह सत्य वचन है| जानता हूँ कि मेरे बिन तुम एक क्षण भी नहीं रहना चाहती| यदि तुमने अपना जीवन त्याग दिया तो मैं भी अपने प्राण नहीं रख सकता| इस कारण स्वार्थवश मैं भगवान् से सदैव विनती करता रहता हूँ कि मेरे जीवन के लिए तुम सदा अपने प्राणों की रक्षा करो| मैं सदैव तुम्हारे हृदय में रहूंगा, यह मेरा दृढ़ वचन है (संकल्प है)| तुम सब सखियों के साथ क्रीड़ा कर तब मैं अपने महल (निवास) को लौटूंगा| यद्यपि (मेरा) वास द्वारका में है, पर मन यहां वृन्दावन में है|*

लिया जन्म मैंने करूँ विनाश सब अधर्मी दुर्जन |
कर चुका वध कई पर रहे शेष कुछ अभी भी भुवन || (१,०४०)
मचा रहे अशांति यह दुष्ट चंहु ओर देते कष्ट भूजन |
कर वध शेष दुष्ट और कर स्थापित शान्ति सब भुवन || (१,०४१)
लौटूंगा निश्चित समीप मैं तुम सब यहां वृन्दावन |
समझाए बहु भांति इस प्रकार सर्वव्यापी भगवन || (१,०४२)
यद्यपि था हिय संशय स्नेहन् करेंगे पूर्ण हरि वचन |
पर लौटे ब्रज रख हृदय चरण प्रियतम नंदनंदन || (१,०४३)

भावार्थ: *मैंने जन्म इस लिए लिया है कि मैं सभी अधर्मी दुष्टों का विनाश करूँ| कुछ का वध कर चुका हूँ पर कुछ पृथ्वी पर अभी भी शेष हैं| यह दुष्ट चारों ओर अशांति मचा रहे हैं और प्राणियों को कष्ट दे रहे हैं| इन शेष दुष्टों का वध कर और पृथ्वी पर शान्ति स्थापित कर निश्चित ही मैं तुम सब के समीप वृन्दावन लौटूंगा| इस प्रकार सर्वव्यापी भगवान् ने उन्हें भली भांति समझाया| यद्यपि मित्रों के हृदय में यह संशय था कि प्रभु अपने वचन निभाएंगे, पर अपने प्रियतम नंदनंदन के चरणों को हृदय में रख कर वह ब्रज लौट गए|*

हेरा पञ्चमी उत्सव

पूर्व जगन्नाथ यात्रा होते एकत्रित भक्त भगवन |
लिए सहस्त्र कुम्भ कर धरा सरित सरोवर जल पावन || (१,०४४)
हेतु अभिषेक प्रभु बलराम और सुभद्रा बहन |
करते लीला हरि तब जैसे हुए अस्वस्थ हेतु निमज्जन || (१,०४५)

भावार्थ: *जगन्नाथ यात्रा से पूर्व भगवान् के भक्त हाथों में पृथ्वी से नदियों और सरोवरों से सहस्रों कलश पवित्र जल प्रभु, बलराम और बहन सुभद्रा के अभिषेक हेतु लिए एकत्रित होते हैं| तब प्रभु लीला करते हैं जैसे कि वह (अत्यधिक) नहाने से अस्वस्थ हो गए|*

करें बंद तब श्री अंदर महल उन्हें हेतु लाभ तिहन् |
नहीं अनुमति दें दर्शन हरि पखवाड़ा किसी जन || (१,०४६)
होते स्वस्थ्य प्रभु इस काल पर करें अनुभव कुण्ठन |
कहते प्रिये जाएंगे बाह्य हेतु जलवायु परिवर्तन || (१,०४७)

भावार्थ: *तब उन्हें स्वास्थ्य लाभ के लिए लक्ष्मी जी एक पखवाड़े (१५ दिन) तक महल के अंदर बंद करतीं हैं| किसी भी प्राणी को दर्शन करने की अनुमति नहीं होती| इस काल में प्रभु स्वस्थ्य हो जाते हैं परन्तु नीरसता का अनुभव करते हैं और (श्री से) कहते हैं, 'प्रिये, जलवायु परिवर्तन के लिए महल से बाहर जायेंगे|'*

जैसी इच्छा हरि करें आप कहतीं तब पत्नी भगवन |
पर बतलाइए आएंगे वापस कब आप अपने भवन || (१,०४८)
नहीं हो चिंतित लौटेंगे शीघ्र बोले तब भगवन |
हो सवार रथ गए हरि हेतु भ्रमण तब संग भाई बहन || (१,०४९)

भावार्थ: *तब लक्ष्मी जी कहतीं, 'जैसी प्रभु की इच्छा, वही करें| पर यह बताएं कि स्व-गृह वापस कब आएंगे?' प्रभु बोले, 'चिंतित नहीं हो| हम शीघ्र ही लौटेंगे|' तब रथ पर सवार हो हरि भाई (बलराम) और बहन (सुभद्रा) के साथ भ्रमण करने गए|*

बीत गए दिन पांच नहीं लौटे महल जगन्नाथ भगवन |
हुईं चिंतित श्री किस कारण नहीं लौटे नारायन || (१,०५०)
लगीं ढूंढने संग सखी पहुँची वह गुंडिचा भवन |
देखा कर रहे विनोद हरि संग भक्त और प्रजाजन || (१,०५१)
था यह दिवस पश्चात पांच निकले हरि करने भ्रमन |
इस हेतु कहें उत्कलवासी इसे हेरा पंचमी दिवन् || (१,०५२)

भावार्थ: *पांच दिन बीत गए पर जगन्नाथ प्रभु अपने महल को नहीं लौटे| लक्ष्मी जी तब चिंतित हुईं कि किस कारण प्रभु नहीं लौटे| तब वह सखियों सहित उन्हें ढूंढती हुए गुंडिचा भवन पहुंचीं|उन्होंने देखा कि प्रभु भक्त और प्रजा के साथ विनोद कर रहे हैं| चूंकि यह प्रभु के भ्रमण पर जाने के बाद पाँचवाँ दिन था, अतः उत्कलवासी इसे हेरा (भ्रमण) पंचमी दिन कहते हैं|*

दिए नीलाचल नया नाम द्वारका चैतन्य श्रीमन |
और पुकारते गुंडिचा मंदिर ले नाम वृंदावन || (१,०५३)

भावार्थ: *श्रीमान चैतन्य (महाप्रभु) ने नीलाचल को द्वारका नया नाम दिया और गुंडिचा मंदिर को वृंदावन नाम से पुकारा|*

गए एक दिन महाप्रभु चैतन्य श्री काशी मिश्र भवन |
कहे चाहें देखना हेरा पंचमी उत्सव संग भक्तगन || (१,०५४)
बोले मिश्र अवश्य प्रभु दूँ आपका सन्देश राजन |
गए तुरंत वह ले सन्देश नृप प्रतापरूद्र भवन || (१,०५५)

भावार्थ: *एक दिन महाप्रभु चैतन्य श्री काशी मिश्र के घर गए (श्री काशी मिश्र सम्राट प्रताप रूद्र के सलाहकार थे) और बोले कि मैं भक्त गणों के साथ हेरा पंचमी उत्सव देखना चाहता हूँ| मिश्र जी बोले, 'हे प्रभु, मैं आपका सन्देश राजा को अवश्य दूंगा|' तब वह तुरंत सन्देश ले कर सम्राट प्रतापरूद्र के महल गए|*

सुन सन्देश महाप्रभु हुए सम्राट अत्यंत प्रसन्न |
अहोभाग्य हमारे करें हम संग महाप्रभु हरि दर्शन || (१,०५६)

दिए आदेश करो व्यवस्था न देखी पूर्व किसी जन |
सजाओ महालक्ष्मी युक्त सुन्दर स्वर्ण आभूषन || (१,०५७)
हो उत्सव भव्य हों विस्मित देखें जो यह आयोजन |
दिए आदेश कोषाध्यक्ष हेतु पर्व दो आवश्यक धन || (१,०५८)

भावार्थ: *महाप्रभु का सन्देश सुनकर सम्राट अत्यंत प्रसन्न हुए| 'हमारे अहोभाग्य जो हम महाप्रभु के साथ प्रभु के दर्शन करें|' आदेश दिए कि ऐसी व्यवस्था करो जैसी पूर्व में किसी प्राणी ने न देखी हो| महालक्ष्मी को सुन्दर स्वर्ण आभूषणों से सजाओ| उत्सव ऐसा भव्य हो कि जो भी यह आयोजन देखे, आश्चर्यचकित हो जाए| कोषाध्यक्ष को आदेश दिए कि उत्सव के लिए आवश्यक धन दो|*

बोले श्री काशी मिश्र सुन आदेश श्रेष्ठ राजन |
हेतु श्रृंगार विग्रह करो तैयार अनेक भक्तगन || (१,०५९)
सजाओ गुंडिचा मंदिर कहा जैसे अभी राजन |
हो आयोजन भव्य आएं जब चैतन्य करने दर्शन || (१,०६०)

भावार्थ: *श्रेष्ठ सम्राट का आदेश सुन श्री काशी मिश्र बोले, 'विग्रह के श्रृंगार के लिए अनेक भक्तों को तैयार करो| गुंडिचा मंदिर को ऐसा ही सजाओ जैसा सम्राट ने कहा| आयोजन भव्य हो जब महाप्रभु दर्शन हेतु आएं|'*

कर प्रयास सजाए भक्त भव्य गुंडिचा मंदिर पावन |
प्रातः किए काशी मिश्र महाप्रभु का अभिनन्दन || (१,०६१)
की भूरि भूरि प्रशंसा देखो हुए प्रकट श्री भगवन |
लौटे महाप्रभु तब जगन्नाथ मंदिर कर वहां दर्शन || (१,०६२)
करते जयकार पुकारते हरि बोल संग थे सभी भक्तगन |
समीप सिंह द्वार किए आसीन उन्हें उच्च आसन || (१,०६३)

भावार्थ: *भक्तों ने प्रयास कर पवित्र गुंडिचा मंदिर को भव्य सजाया| प्रातः श्री काशी मिश्र जी ने महाप्रभु का स्वागत किया| (महाप्रभु ने) भूरि भूरि प्रशंसा की, 'देखो, भगवान् प्रकट हो गए|' वहां दर्शन कर महाप्रभु तब (मुख्य) जगन्नाथ मंदिर लौट आए|*

'हरि बोल' पुकारते और जयकार करते सभी भक्तगण साथ थे| (जगन्नाथ मंदिर में महाप्रभु को) सिंह द्वार के समीप एक उच्च आसान पर बैठाया|

बोले चैतन्य सुनो सभी भक्त उपस्थित मंदिर पावन |
यद्यपि करते विहार प्रभु यहां इस मंदिर प्रत्येक क्षन || (१,०६४)
पर जाते एकद वर्ष अवश्य करने वह भ्रमण वृंदावन |
नहीं ले जाते संग श्री करते क्रीड़ा वहां उपवन || (१,०६५)
पूछे तब शिष्य करबद्ध हो विनीत लोट चैतन्य चरन |
हे प्रभु किस हेतु नहीं अनुमति जाएं श्री संग भगवन || (१,०६६)

भावार्थ: *चैतन्य (महाप्रभु) बोले, 'इस पवित्र मंदिर में उपस्थित सभी भक्तगण सुनो| यद्यपि प्रभु (जगन्नाथ) इस मंदिर में प्रति क्षण विहार करते हैं, परन्तु वर्ष में एक बार वह भ्रमण करने वृंदावन अवश्य जाते हैं| वह साथ में लक्ष्मी जी को नहीं ले जाते| वहां उपवन में वह क्रीड़ा करते हैं| तब महाप्रभु के चरणों में लोट विनम्र भाव से एक शिष्य ने पूछा, 'हे महाप्रभु, लक्ष्मी जी को प्रभु के साथ जाने की अनुमति क्यों नहीं है?'*

मुसकुराकर बोले चैतन्य सुनो रहस्य भक्त स्नेहन् |
हैं गोपियाँ सहायक हरि लीला उपवन वृंदावन || (१,०६७)

भावार्थ: *मुसकुराकर चैतन्य (महाप्रभु) बोले, 'हे प्रिय भक्त, वृंदावन के उपवन में हरि लीला में गोपियाँ सहायक हैं|'*

करतीं सेवा परकीयाभाव गोपियाँ वृंदावन |
है स्वकीयाभाव रानियां द्वारका समझो भक्तगन || (१,०६८)

भावार्थ: *वृंदावन में गोपियाँ परकीयाभाव (निःस्वार्थ, दूसरे से सम्बंधित) से सेवा करती हैं| द्वारका में रानियों का स्वकीयाभाव (स्वार्थमय, स्व-परिवार) है, भक्तों ऐसा समझो|*

होते द्वि पक्ष प्रेम समझो यह गूढ़ विरह और मिलन |
बढ़ाता विरह उत्कंठा मिलन देता हिय शक्ति सहन || (१,०६९)

पर यदि हो मिलन ही मिलन नहीं उठते भाव स्नेहन |
हैं रानियां हरि भार्या नहीं कठिन इस हेतु मिलन || (१,०७०)
पर करतीं प्रेम गोपियाँ बिन कोई सम्बन्ध लौक्यन |
हैं वह विवाहिता अन्य गोप पर करतीं प्रेम भगवन || (१,०७१)

भावार्थ: *प्रेम के दो पक्ष होते हैं, विरह और मिलन, इस गूढ़ (रहस्य) को समझो| विरह मिलन की उत्कंठा बढ़ाता है और हृदय को (विरह दुःख) सहने की शक्ति देता है| परन्तु यदि मिलन ही मिलन हो (सदैव मिलन ही रहे, विरह न हो), तो प्रेम भाव नहीं उठते| रानियां तो प्रभु की पत्नी हैं, इस कारण मिलन कठिन नहीं है (वह तो सदा प्रभु के साथ रहती हैं, जब चाहें मिल लें)| लेकिन गोपियाँ प्रेम बिना किसी सांसारिक बंधन (जैसे विवाह) के करती हैं|वह तो अन्य गोपों से विवाहित हैं, परन्तु (निःस्वार्थ) प्रेम प्रभु से करती हैं|*

हर रानी के पुत्र दस इस हेतु विभक्त उनका स्नेहन |
पर गोपियाँ तो निःसंतान केवल आधार प्रेम भगवन || (१,०७२)

भावार्थ: *हर (प्रभु की) रानी के दस पुत्र हैं, इस कारण उनका प्रेम विभाजित है (प्रभु और पुत्रों के मध्य)| परन्तु गोपियाँ तो निःसंतान हैं| उनका आधार केवल प्रभु प्रेम है|*

कहे स्वयं श्री कृष्ण श्रीमद्भगवद्गीता यह कथन |
प्रेम गोपी सर्वथा निर्दोष निर्मल रहित कामन || (१,०७३)
तोड़ गृह बंधन लोक मर्यादा कीं वह प्रेम भगवन |
नहीं समर्थ हो सकूं अऋणी कभी किसी जीवन || (१,०७४)

भावार्थ: *स्वयं श्री कृष्ण ने श्रीमद्भगवद्गीता में कहा है कि गोपियाँ का प्रेम सर्वथा निर्दोष, पवित्र और कामना से रहित है| लोक मर्यादा और घर बंधन तोड़ कर उन्होंने प्रभु से प्रेम किया है| किसी भी जीवन में उनके ऋण से मुक्त नहीं हो सकता|*

नहीं देते अनुमति प्रभु आएं श्री इस हेतु वृंदावन |
है कठिन समझें यह निःस्वार्थ प्रेम हों संहर्षिन || (१,०७५)

भावार्थः *इस कारण प्रभु लक्ष्मी जी को वृंदावन आने की अनुमति नहीं देते क्योंकि यह निःस्वार्थ प्रेम समझना कठिन है, वह ईर्ष्यालु न हो जाएं|*

हैं चैतन्य महाप्रभु महावदान्याय अति प्रज्वलन |
लिए अवतार भू दर्शाने प्रेम गोपियाँ और भगवन || (१,०७६)
करो जाप महाप्रभु पाओगे राधा कृष्ण दर्शन |
नहीं संभव और विधि पा सको कृपा द्वि वर्पन् || (१,०७७)

भावार्थः *चैतन्य महाप्रभु महावदान्याय (अति उदार) और ऐश्वर्य युक्त हैं| उन्होंने पृथ्वी पर अवतार गोपियों और भगवान् का प्रेम दर्शाने के लिए लिया| उनका जाप करने से राधा और कृष्ण दोनों के दर्शन होते हैं| दोनों की कृपा पाने का अन्य उपाय नहीं है|*

गोपियाँ का मान

कहे निरुक्त चैतन्य स्वरुप प्रेम उपस्थित भक्तगन |
यथार्थ प्रेम में नहीं होती किंचित स्व-सुख भावन || (१,०७८)
है प्रेम सत गोपिन चाहें वह केवल हों कृष्ण प्रसन्न |
है उद्देश्य प्रभु भी केवल रहें गोपी सदैव सुखिन् || (१,०७९)

भावार्थ: *(महाप्रभु) चैतन्य ने उपस्थित भक्तगणों को प्रेम के स्वरुप को परिभाषित किया| सच्चे प्रेम में स्व-सुख की भावना कदापि नहीं होती| गोपियाँ का प्रेम सत है जिसमें उनकी इच्छा केवल कृष्ण की प्रसन्नता है| प्रभु का उद्देश्य भी गोपियों को सुखी देखना है|*

है सत्य कि करें प्रेम परस्पर हेतु स्वार्थ सब भूजन |
टूटे सम्बन्ध प्रेम हो तनिक हानि इस स्वार्थ बंधन || (१,०८०)
हो जब सत प्रेम आए अवस्था स्नेह तन और मन |
देख अवस्था स्नेह होता तब द्रवित हिय श्री भगवन || (१,०८१)

भावार्थ: *यह सत्य है कि सभी प्राणी स्वार्थ वश परस्पर प्रेम करते हैं| थोड़ी सी भी स्वार्थ बंधन में हानि होने पर प्रेम सम्बन्ध टूट जाता है| जब सच्चा प्रेम होता है तो तन और मन में स्नेह अवस्था आती है| स्नेह अवस्था को देख श्री प्रभु का हृदय द्रवित हो जाता है|*

होता स्नेह द्वि प्रकार   मधु और घृतस्नेह वर्पन् |
मधुस्नेह जब समझे प्रेमी स्व-अधिकार प्रणयिन् || (१,०८२)
घृतस्नेह जब समझे रखे अधिकार मुझ पर रागिन् |
रखें राधा मधु और   गोपियाँ घृतस्नेह भक्तगन || (१,०८३)

भावार्थ: *स्नेह दो प्रकार का होता है, मधुस्नेह और घृतस्नेह रूप| जब प्रेमी/ प्रेमिका अपने प्रेमिका/ प्रेमी पर अधिकार समझता है, वह मधुस्नेह है| जब प्रेमी/ प्रेमिका यह समझता है कि मुझ पर प्रेमिका/ प्रेमी का अधिकार है, तब वह घृतस्नेह होता है| हे भक्तगणों, राधा (प्रभु से) मधुस्नेह रखती हैं और गोपियाँ घृतस्नेह|*

हो जाता उदित प्रणय भाव पश्चात इस स्नेह भावन |
होता भान तब प्रेमीजन आत्मा एक यद्यपि दो तन || (१,०८४)

भावार्थ: *इस स्नेह भाव के पश्चात प्रणय भाव उदित हो जाता है |इसमें (प्रणय भाव) प्रेमियों को यद्यपि दो तन परन्तु एक आत्मा का भान होता है|*

होती उदित अवस्था मान तत्पश्चात प्रणय वेदन |
यही अवस्था मान करे जो बाध्य प्रभु हेतु मिलन || (१,०८५)

भावार्थ: *प्रणय भावना के पश्चात मान अवस्था का उदय होता है| यही मान अवस्था है जो प्रभु को मिलन के लिए बाध्य करती है|*

होते स्वरुप द्वि मान भावना समझो यह हे भक्तगन |
प्रथम भावना मैं प्रेमी का और प्रेमी मेरा द्वितीयन || (१,०८६)
नहीं कहें कटु शब्द प्रति प्रेमी जब प्रथम भावन |
करते रहते रुदन सहते विरह हो जब यह दशा मन || (१,०८७)
पर करते क्रोध प्रति प्रेमी होती जब द्वितीय भावन |
हो असहनीय बींध डालते तब प्रेमी कहते कटु वचन || (१,०८८)

भावार्थ: *हे भक्तों, यह समझो कि मान भावना के दो स्वरुप होते हैं| प्रथम भावना, मैं प्रेमी का हूँ और द्वितीय भावना, प्रेमी मेरा है| प्रथम भावना में प्रेमी के प्रति कठोर शब्द नहीं कहते| जब मन की यह दशा होते है तो रोते हुए विरह को सहन करते हैं| लेकिन द्वितीय (प्रकार की) भावना में प्रेमी के प्रति क्रोध करते हुए, असहनीय हो, प्रेमी को कठोर वचनों से बींध देते हैं|*

नहीं कहतीं शब्द कटु गोपियाँ करतीं रहतीं रुदन |
पर राधा हो असहनीय बोल देतीं थीं व्यंग्य वचन || (१,०८९)
पर अवस्था दोनों ही हैं अति दुःखदायनी भगवन |
प्रेमवश उनके जाते हरि एक बार वर्ष में वृंदावन || (१,०९०)

भावार्थः *गोपियाँ कटु वचन नहीं कहतीं, रोती रहतीं हैं| परन्तु राधा असहनीय हो कर व्यंग्य वचन बोल देतीं हैं| प्रभु को दोनों ही अवस्थाएं दुःखदायी हैं| (अतः) प्रेमवश वर्ष में एक बार वह वृंदावन जाते हैं|*

महाप्रभु की शिक्षाएं

किए निवास महाप्रभु पुरी अवधि रथ यात्रा भगवन |
चाहें लौटना अपने गृह पश्चात इस उत्सव भक्तगन || (१,०९१)
माँगते अनुमति पूछे भक्त आर्थ सत्यराज एक प्रश्न |
हे प्रभु हैं हम गृहस्थ लिप्त विषय हो कैसे काञ्चन || (१,०९२)
बताएं उचित भक्ति साधन दे सके जो हमें निर्मोचन |
कर कृपा बोले चैतन्य महाप्रभु तब मधुर वचन || (१,०९३)

भावार्थः *महाप्रभु भगवान् की रथ यात्रा (नौ दिन) अवधि में पुरी में निवास किए| उत्सव समाप्ति के पश्चात भक्तगण अपने घर लौटना चाहते थे| अनुमति माँगते हुए एक कुलीन भक्त सत्यराज ने एक प्रश्न पूछा, 'हे प्रभु, हम गृहस्थ हैं, विषय में लिप्त हैं, हमारा कल्याण कैसे होगा? हमें उचित साधन बताएं जो मोक्ष दे सके|' तब कृपा कर चैतन्य महाप्रभु मधुर वचन बोले|*

करते रहो सेवा कृष्ण वैष्णव समाज नाम संकीर्तन |
है यह एक मात्र उपाय जो दे हिय अमन और मोचन || (१,०९४)

भावार्थः *'कृष्ण की और वैष्णव समाज की सेवा और (हरि) नाम संकीर्तन करते रहो| यही एक मात्र उपाय है जो हृदय की शान्ति और मोक्ष देता है|'*

बताएं प्रभु क्या है अंतर कीर्तन और संकीर्तन |
पूछे रामानंद पुत्र सत्यराज तब यह सरल प्रश्न || (१,०९५)
और बतलाएं प्रभु करें कैसे सेवा कृष्ण भगवन |
नहीं जानते हम कौन वैष्णव अतः है सेवा कठिन || (१,०९६)
कहें विस्तार से कैसे पहचानेंगे सत्य वैष्णव जन |
मुसकुराकर बोले महाप्रभु हैं उचित तुम्हारे प्रश्न || (१,०९७)

भावार्थः *'हे प्रभु, कीर्तन और संकीर्तन में क्या अंतर है', तब सत्यराज जी के पुत्र रामानंद जी यह सरल प्रश्न पूछे| और प्रभु, बतलाएं कि कृष्ण भगवान् की सेवा कैसे करें? हम नहीं जानते वैष्णव कौन हैं, अतः उनकी सेवा करना कठिन है| आप विस्तार*

से कहें कि हम सत्य वैष्णव जन को कैसे पहचानेंगे? महाप्रभु मुसकुराकर बोले, 'तुम्हारे प्रश्न उचित हैं|

करें जब हरि भजन अकेले समझो उसे तुम कीर्तन |
पर करते भजन जब संग समूह कहते उसे संकीर्तन || (१,०९८)
ले नाम कृष्ण जो एक बार दिन समझो वह वैष्णव जन |
करता सम्पूर्ण नाश अघ पवित्र नाम कृष्ण भगवन || (१,०९९)
होती पूर्ण नवविधा भक्ति तुरंत लेते नाम पावन |
नाम भगवन ही करे मुक्त अपि चांडाल और दुर्जन || (१,१००)

भावार्थ: *जब हरि का भजन अकेले करते हैं, तो उसे कीर्तन समझो| परन्तु जब भजन समूह के साथ किया जाता है तो उसे संकीर्तन कहते हैं| जो कृष्ण का नाम दिन में एक बार भी लेता है, वह वैष्णव जन है| कृष्ण भगवान् का पवित्र नाम सब पापों को नष्ट करता है| इस पवित्र नाम के लेने से नवविधा भक्ति पूर्ण होती है| भगवान् का नाम चांडाल और दुर्जनों को भी मुक्त करता है (मोक्ष देता है)|*

होती प्राप्ति सर्व सिद्धि लेते नाम कृष्ण भगवन |
होते वैष्णव करें जाप जो श्रद्धा से मधुसूदन || (१,१०१)
है लक्षण वैष्णव जन रखते वह अत्यंत श्रद्धा भगवन |
करते उच्चारण नाम नारायण निरंतर वैष्णव जन || (१,१०२)
समझो अर्थ निरंतर बिन व्यवधान लें नाम भगवन |
अतिरिक्त हरि इच्छा कर्म ज्ञान आलस्य हैं अन्तर्गमन || (१,१०३)

भावार्थ: *कृष्ण नाम लेते ही सर्व सिद्धि प्राप्त होती है| जो श्रद्धा से मधुसूदन का जाप करते हैं, वह वैष्णव होते हैं| भगवान में अत्यंत श्रद्धा होना वैष्णव जन के लक्षण हैं| वैष्णव जन भगवान् का नाम निरंतर उच्चारण करते हैं| निरंतर का अर्थ है, बिना व्यवधान के| प्रभु के अतिरिक्त इच्छा, कर्म, ज्ञान, आलस्य व्यवधान हैं|*

पूछे प्रश्न सत्यराज फिर बतलाओ यह सचिनंदन |
है क्या भेद वैष्णव वैष्णवतर और वैष्णवतम जन ||
हो प्रसन्न बोले चैतन्य तब सुनो मेरे गहन वचन || (१,१०४)

भावार्थ: *सत्यराज फिर प्रश्न पूछे, 'हे सचिनंदन (चैतन्य महाप्रभु), वैष्णव, वैष्णवतर और वैष्णवतम में क्या अंतर है? तब प्रसन्न होकर चैतन्य (महाप्रभु) बोले, 'मेरे गूढ़ वचन सुनो|'*

आरम्भ में जब लें नाम प्रभु पर न हो अपरिच्छिन्न |
समझो इसे लक्षण तुम वैष्णव अग्रसर प्रति भगवन || (१,१०५)
पर कर कठिन अभ्यास जब ले नाम निरंतर मधुसूदन |
हे अति प्रिय भक्त सत्यराज समझो उसे वैष्णवतर जन || (१,१०६)
जिसके दर्शन से हो उत्पन्न प्रति हरि श्रद्धा पावन |
निकले मुख स्वतः नाम प्रभु है वह वैष्णवतम जन || (१,१०७)

भावार्थ: *आरम्भ में जब प्रभु का नाम लें पर निरंतरता न हो, वह प्रभु के प्रति अग्रसर होना वाला वैष्णव है| हे प्रिय भक्त सत्यराज, कठिन अभ्यास के बाद जब मधुसूदन का नाम निरंतर ले सके तब उसे वैष्णवतर समझो| जिसके दर्शन से ही हरि के प्रति पवित्र श्रद्धा उत्पन्न हो और स्वतः ही प्रभु का नाम मुख पर आ जाए, वह वैष्णवतम जन है|*

है क्या नितांत लें दीक्षा गुरु से हेतु जप भगवन |
समझाओ क्या लाभ दीक्षा पूछे एक अन्य भक्तगन || (१,१०८)

भावार्थ: *क्या भगवान् के जप हेतु गुरु से दीक्षा लेना आवश्यक है? दीक्षा का क्या लाभ है? एक अन्य भक्त ने पूछा|*

नहीं नितांत लें दीक्षा हेतु जप नाम श्री भगवन |
होते श्रद्धा हरि करें जब जप नाम बोले सचिनंदन || (१,१०९)
जब होती श्रद्धा प्रति हरि होता तत्पर गुरु समर्पन |
हो जाता आवश्यक तब लें दीक्षा गुरु से भक्तजन || (१, ११०)

भावार्थ: *चैतन्य महाप्रभु बोले, 'श्री भगवान् का नाम जप करने के लिए दीक्षा की आवश्यकता नहीं है| जप नाम से प्रभु के प्रति श्रद्धा होती है| जब भगवान् के प्रति*

श्रद्धा हो जाती है, तब गुरु को समर्पण के लिए (भक्त) तत्पर हो जाता है| तब भक्त को गुरु से दीक्षा लेना आवश्यक हो जाता है|

होता उदित दिव्य ज्ञान हेतु दीक्षा हृदय अनुचरन |
करता यह नष्ट समूल अघ और देता शिष्य निर्मोचन || (१,१११)

भावार्थ: *दीक्षा से शिष्य के हृदय में दिव्य ज्ञान (आत्म-ज्ञान) का उदित होता है| यह शिष्य के समस्त पापों को नष्ट कर उसे मोक्ष देता है|*

नहीं अधिकार मनुज करें अध्ययन वेद बिन उपनयन |
सदृश है अनर्थ बिन दीक्षा करें यदि मन्त्र उच्चारन || (१,११२)
हेतु स्व-मंगल है नितांत लें दीक्षा गुरु से शिष्यजन |
रहे ध्यान लो दीक्षा गुरु से जो हो समर्पित भगवन || (१,११३)

भावार्थ: *बिना उपनयन (संस्कार) के मनुष्य को वेद अध्ययन का अधिकार नहीं है| उसी प्रकार बिना दीक्षा मन्त्र उच्चारण हानिकारक है| अपने कल्याण के लिए शिष्य को गुरु से दीक्षा लेना आवश्यक है| इसका ध्यान रहे कि उसी गुरु से दीक्षा लो जो प्रभु को समर्पित हो (अतः जिसे ब्रह्म ज्ञान हो)|*

पूछे प्रश्न तब एक भक्त महाप्रभु क्या भेद द्वितयन |
शिक्षा गुरु और दीक्षा गुरु हैं क्या दोनों भिन्न || (१,११४)

भावार्थ: *तब एक भक्त ने प्रश्न पूछा, 'महाप्रभु, इन दोनों में क्या भेद है? क्या शिक्षा गुरु और दीक्षा गुरु भिन्न हैं?'*

समझो समान द्वि गुरु बोले महाप्रभु मधुर वचन |
परम्परा हेतु दीक्षा गुरु है पांचरात्रिक अनुबन्धन || (१,११५)
होता संभव सम्बन्ध प्रभु हेतु दीक्षा गुरु शिष्यजन |
दे भगवद ज्ञान करे विलीन हरि और दे निर्मोचन || (१,११६)
परम्परा हेतु शिक्षा गुरु कहें भागवत अनुर्वतन |
होती जाग्रत भक्ति हरि हेतु इस शिक्षा प्रकरन || (१,११७)

भावार्थ: *महाप्रभु मधुर वचन बोले, 'दोनों (शिक्षा गुरु और दीक्षा गुरु) को समान समझो| दीक्षा गुरु द्वारा पांचरात्रिक परम्परा मिलती है (यह परम्परा मुख्य रूप से भगवान कृष्ण/विष्णु की पूजा और उपासना पर केंद्रित है| पांचरात्र प्रणाली में धार्मिक अनुष्ठानों, पूजा विधियों और तंत्रों का वर्णन गुरु द्वारा किया जाता है) | दीक्षा से (गुरु परंपरा हेतु) शिष्य का प्रभु से सम्बन्ध हो जाता है| वह प्रभु में विलीन हो मुक्ति पाता है| शिक्षा गुरु से जो परम्परा मिलती है उसे भागवत परम्परा कहते हैं| इस शिक्षा पद्धति से प्रभु के प्रति भक्ति जाग्रत होती है|*

कहें वेद शास्त्र कृष्ण भक्ति अभिधेयतत्व महाधन |
देती भागवत शिक्षा ही प्रयोजनतत्व प्रेम भगवन || (१,११८)
अतः नहीं किसी प्रकार लघु शिक्षा गुरु आंकलन |
कह इस प्रकार दिए तत्व ज्ञान महाप्रभु वैष्णवजन || (१,११९)

भावार्थ: *वेद शास्त्र कहते हैं कि कृष्ण की भक्ति ही अभिधेयतत्व (अवर्णीय) महाधन है| भागवत शिक्षा प्रभु से प्रेम करना सिखलाती है, अतः किसी प्रकार शिक्षा गुरु का आंकलन कम नहीं है| इस प्रकार महाप्रभु ने अपने शिष्यों को तत्व ज्ञान दिया|*

महाप्रभु का कृष्ण प्रेम में विलाप

करते कृपा प्रभु माध्यम रथ यात्रा सभी भूजन |
हुए अवतरित महाप्रभु देने इस उत्सव गूढ़ बोधन || (१,१२०)
दिए ज्ञान हैं परिपूर्ण चतुर्माधुरी ब्रजेन्द्रनन्दन |
लीला प्रेम वेणु और रूप माधुरी हैं कृष्ण वर्पन् || (१,१२१)

भावार्थ: *रथ यात्रा के माध्यम से प्रभु सभी प्राणियों पर कृपा करते हैं| चैतन्य महाप्रभु इस उत्सव के गूढ़ रहस्य को बताने अवतरित हुए| उन्होंने ज्ञान दिया कि चारों माधुरी कृष्ण से ही परिपूर्ण हैं| लीला माधुरी, प्रेम माधुरी, वेणु माधुरी और रूप माधुरी, कृष्ण के स्वरूप हैं|*

करो आराधना सदैव कृष्ण और धाम वृन्दावन |
कर अनुसरण विधि किए जैसे सब ब्रजवासी पावन || (१,१२२)
करो सदा श्रीमद्भागवत ग्रन्थ पठन पाठन श्रवन |
है यह मत महाप्रभु नहीं कोई अन्य योग्य मानन || (१,१२३)

भावार्थ: *सदैव कृष्ण और वृन्दावन धाम की पवित्र ब्रजवासियों द्वारा अपनाई विधि से आराधना करो| सदा श्रीमद्भागवत ग्रन्थ का पठन, पाठन, और श्रवण करो| यह महाप्रभु का मत है| अन्य कोई मत आदर के योग्य नहीं है|*

समक्ष गोपिन होती प्रकट श्रेष्ठ माधुरी भगवन |
होता उदित तब मोहक मन्मथ मन्मथ रूप मधुसूदन || (१,१२४)
करता जो लज्जित कोटि कोटि कामदेव निरूपन |
है हेतु निश्छल उन्नत उज्ज्वल प्रेम गोपिन स्नेहन् || (१,१२५)

भावार्थ: *गोपियों के समक्ष भगवान् की श्रेष्ठ माधुरी प्रकट होती है| मधुसूदन का तब मनमोहक अति सुन्दर रूप उदित होता है जो करोड़ों कामदेव के रूप को भी लज्जित करता है| यह सखी गोपियों के निश्छल, श्रेष्ठ और उज्ज्वल प्रेम के कारण होता है|*

किए चैतन्य विदित जग भाव राधा हेतु विरह भगवन |
तड़पतीं वह दिन रात पुकारते कहाँ हो मधुसूदन || (१,१२६)
करूँ क्या जाऊं कहाँ मिलें जहां प्रियतम नंदनंदन |
कौन सुनेगा दुःख मेरा फटता हिय विरह ब्रजनन्दन || (१,१२७)
नहीं कर सकती धारण बिन श्री कृष्ण यह जीवन |
देतीं धीरज तब सखी मिलेंगे प्रभु न करो रुदन || (१,१२८)

भावार्थ: *चैतन्य (महाप्रभु) ने प्रभु के प्रति राधा रानी के विरह भाव संसार को विदित कराए हैं| वह मधुसूदन को रात दिन पुकारते तड़पतीं थीं| क्या करूँ, कहाँ जाऊं, जहां प्रियतम कृष्ण मिलें? कृष्ण के विरह में मेरा दुःख कौन सुनेगा? मेरा हृदय फटता है| बिना श्री कृष्ण के मैं यह जीवन धारण नहीं कर सकती| तब सखियाँ धीरज देतीं, 'कृष्ण मिलेंगे, रोईए नहीं|'*

पर नहीं छोड़ते कोई प्रभाव यह सखिन के मधु वचन |
हो उन्मत्त भान कृष्ण वह लिपटतीं तमाल विटपिन् || (१,१२९)

भावार्थ: *सखियों के यह मृदुल वचन (राधा जी पर) कोई प्रभाव नहीं डालते| उन्मत्त होकर कृष्ण समझ वह तमाल के वृक्ष से लिपट जातीं|*

जब होतीं सचेत तब पुकार कान्हा कहतीं वचन |
देखो स्व-नेत्र तुम बिन हो गई क्या दशा वृन्दावन || (१,१३०)
मैया यसुमति बाबा नन्द हो गए अंध करते रुदन |
न सुन धुन वंशी नहीं कर रहीं गौ पशु आदि भोजन || (१,१३१)

भावार्थ: *जब सचेत होतीं तो कन्हैया को पुकार यह वचन कहतीं, 'अपने नेत्रों से देखो कि वृन्दावन की क्या दशा हो गई है? मैया यशोदा और बाबा नन्द रोते रोते अंधे हो गए हैं| वंशी की धुन न सुनने से गौ और पशु भोजन नहीं कर रहे हैं|*

नहीं जाता कोई नगर हाट हुए सुनसान स्थापन |
नहीं करते भ्रमर रस पुष्प पान हो रहे विक्षेपन || (१,१३२)

सूख रहीं वृक्ष लता नहीं करतीं कोकिल गायन |
नहीं करते नृत्य मयूर हैं सब दुःखी विरह भगवन || (१,१३३)

भावार्थ: *अब कोई नगर हाट नहीं जाता| यह स्थान सूने हो गए हैं| भ्रमित हो भोंरे पुष्पों का रस पान नहीं करते| वृक्ष लताएं सूख गईं हैं| कोयलें गायन नहीं करतीं, मयूर नृत्य नहीं करते| सभी प्रभु के विरह में दुःखी हैं|*

नहीं समझूँ क्या लिखे भाग्य मेरे तुम चतुरानन |
समझ शीतल गईं ओर चांदनी पर दी वह मुझे तपन || (१,१३४)
चढ़ी गिरि न करे स्पर्श जल पर गिरी अथाह प्रशत्त्वन् |
की इच्छा धन मिला दारिद्र्य लुट गया सर्व भगवन || (१,१३५)

भावार्थ: *हे ब्रह्मदेव, आपने मेरे भाग्य में क्या लिखा है, नहीं समझ सकती| शीतल समझ मैं चांदनी की ओर गईं, पर मुझे तपन मिली| पर्वत पर चढ़ी कि जल स्पर्श न कर सके पर गहरे समुद्र में गिर गईं| इच्छा की कि धन मिले, पर निर्धनता मिली|हे भगवन, मेरा सब कुछ लुट गया|*

किए प्रकट इस प्रकार श्रेष्ठ प्रेम राधा सचिनंदन |
हुए जिस हेतु वशीभूत पूर्ण श्री कृष्ण भगवन || (१,१३६)
यदि करें पालन लेश मात्र यह विधि प्रेम भूजन |
हो सफल लक्ष्य जीवन पा जाएं निःसंदेह निर्मोचन || (१,१३७)

भावार्थ: इस *प्रकार चैतन्य महाप्रभु राधा के (प्रभु के प्रति) श्रेष्ठ प्रेम को प्रकट किए जिस कारण श्री कृष्ण भगवान् उनके पूर्ण वशीभूत हुए|यदि प्राणी इस (प्रेम) विधि का लेश मात्र भी पालन करें तो उन्हें जीवन का लक्ष्य, मोक्ष की प्राप्ति हो|*

श्री जगन्नाथ महात्म्य समाप्त

श्री राम कथा संस्थान उद्देश्य

- श्री राम कथा संस्थान भगवान् स्वामी श्री रामानंद जी महाराज (१४वीं शताब्दी) की शिक्षाओं पर आधारित एक सनातन वैष्णव धार्मिक संस्था है।
- श्री संस्थान का सिद्धांत धर्म, जाति, लिंग एवं नैतिक पृष्ठभूमि के आधार पर भेदभाव रहित है। 'हरि को भजे सो हरि को होई' संस्थान का मूल मन्त्र है।
- श्री संस्थान का मानना है कि शुद्ध हृदय एवं निःस्वार्थ भाव भक्ति ईश्वर को अति प्रिय है। सभी प्रभु-भक्त एक दूसरे के भाई बहन हैं।
- ब्रह्म मनोभाव: भगवान् श्री राम, माता सीता एवं उनके विविध अवतार ही सर्वोच्च ब्रह्म हैं। वह सर्व-व्याप्त एवं विश्व के सरंक्षक हैं।
- आत्मा मनोभाव: आत्मा का अस्तित्व सर्वोच्च ब्रह्म के परमानंद पर निर्भर है। आत्मा को सर्वोच्च ब्रह्म ही निर्देशित एवं प्रबुद्ध करते हैं। श्री राम, माता सीता एवं उनके अवतार ही जीवन का अंतिम उद्देश्य मोक्ष दिलाने में समर्थ हैं।
- माया मनोभाव: माया प्रकृति के तीन गुण - सत, रज और तमस, के प्रभाव से प्राकट्य होती है। माया को सर्वोच्च ब्रह्म ही नियंत्रित करने में समर्थ हैं। सर्वोच्च ब्रह्म पर ध्यान केंद्र करने से माया का विनाश होता है, और जन्म-मृत्यु के चक्र से छुटकारा मिल मोक्ष की प्राप्ति होती है।
- श्री संस्थान इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु निरंतर सनातन धार्मिक पत्रिकाएं, पुस्तकें, पुस्तिकाएं, काव्य ग्रन्थ आदि की रचनाएं एवं प्रकाशन करता है। साथ ही, समय समय पर श्री राम एवं अन्य धार्मिक कथाओं के संयोजन का भी प्रयास करता रहता है।

श्री राम कथा संस्थान
३५, मायना रिट्रीट, हिलरीज़, ऑस्ट्रेलिया – ६०२५
Web https://shriramkatha.org
Email: srkperth@outlook.com

कवि: डॉ यतेंद्र शर्मा

एक हिन्दू सनातन परिवार में जन्मे डॉ यतेंद्र शर्मा की रूचि बचपन से ही सनातन धर्म ग्रंथों का पठन पाठन एवं श्रवण में रही है। संस्कृत की प्रारम्भिक शिक्षा उन्होंने अपने पितामह श्री भगवान् दास जी एवं नरवर संस्कृत महाविद्यालय के प्राचार्य श्री सालिग्राम अग्निहोत्री जी से प्राप्त की और पांच वर्ष की आयु में महर्षि पाणिनि रचित संस्कृत व्याकरण कौमुदी को कंठस्थ किया। उन्होंने तकनीकी विश्वविद्यालय ग्राज़ ऑस्ट्रिया से रसायन तकनीकी में पी.अच्.डी की उपाधि विशिष्टता के साथ प्राप्त की। सन १९८९ से डॉ यतेंद्र शर्मा अपने परिवार सहित पर्थ ऑस्ट्रेलिया में निवास कर रहें हैं, तथा पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया के खनन उद्योग में कार्य रत हैं।

सन २०१६ में उन्होंने अपने कुछ धार्मिक मित्रों के साथ एक धार्मिक संस्था 'श्री राम कथा संस्थान पर्थ' की स्थापना की। यह संस्था श्री भगवान् स्वामी रामानंद जी महाराज (१४वीं- १५वीं शताब्दी) की शिक्षाओं से प्रभावित है तथा समय समय पर गोस्वामी तुलसी दास जी रचित श्री राम चरित मानस एवं अन्य धार्मिक कथाओं का प्रवचन, सनातन धर्म के महान संतों, ऋषियों, माताओं का चरित्र वर्णन एवं धार्मिक कथाओं के संकलन में अपना योगदान करने का प्रयास करती है।

श्री राम कथा संस्थान पर्थ
३५ मायना रिट्रीट, हिलरीज़, ऑस्ट्रेलिया – ६०२५
Web https://shriramkatha.org
Email: srkperth@outlook.com